माणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैनग्रन्थमाला, पुष्प ४५

न शिलालेखसंग्रहः

(द्वितीयो भागः)

●

संग्रहकर्त्ता

पं० विजयमूर्ति एम० ए० शास्त्राचार्यः

●

प्रकाशिका

माणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैनग्रन्थमालासमितिः

विक्रम संवत् २००९

मूल्यं पंचरूप्यकम्

—प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
मंत्री, माणिकचन्द्र-जैनग्रन्थमाला
हीराबाग, बम्बई ४

सितम्बर १९५२

—मुद्रक—
लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी
निर्णयसागर प्रेस,
२६-२८ कोलभाट स्ट्रीट, बम्बई २

स्वागत

जैनशिलालेखसंग्रहका प्रथम भाग आजसे चौबीस वर्ष पूर्व सन् १९२८ ईस्वीमें प्रकाशित हुआ था। उसके प्राथमिक वक्तव्यमें मैंने यह आशा प्रकट की थी कि यदि पाठकोंने चाहा, और भविष्य अनुकूल रहा तो अन्य शिलालेखोंका दूसरा संग्रह शीघ्र ही पाठकोंको भेंट किया जायगा। पाठकोंने चाहा तो खूब, और माणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैनग्रंथमालाके परम उत्साही मंत्री पं० नाथूरामजी प्रेमीकी प्रेरणा भी रही, किन्तु मैं अपनी अन्य साहित्यिक प्रवृत्तियोंके कारण इस कार्यको हाथमें न ले सका। तथापि चित्तमें इस कार्यकी आवश्यकता निरन्तर खटकती रही। अपने साहित्यिक सहयोगी डॉ० आदिनाथजी उपाध्येसे भी इस सम्बन्धमें अनेक बार परामर्श किया किन्तु शिलालेखोंका संग्रह करने करानेकी कोई सुविधा न निकल सकी। अतएव, जब कोई दो वर्ष पूर्व श्रद्धेय प्रेमीजीने मुझसे पूछा कि क्या पं० विजयमूर्तिजी एम० ए० (दर्शन, संस्कृत) शास्त्राचार्यद्वारा शिलालेखसंग्रहका कार्य प्रारम्भ कराया जावे, तब मैंने सहर्ष अपनी सम्मति दे दी। आनन्दकी बात है कि उक्त योजनानुसार जैनशिलालेखसंग्रहका यह द्वितीय भाग छपकर तैयार हो गया और अब पाठकोंके हाथोंमें पहुँच रहा है।

यह बतलानेकी तो अब आवश्यकता नहीं है कि प्राचीन शिलालेखोंका इतिहास-निर्माणके कार्यमें कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है। जबसे जैन शिलालेखोंका प्रथम भाग प्रकाशित हुआ, तबसे गत चौबीस वर्षोंमें जैनधर्म और साहित्यके इतिहाससम्बन्धी लेखोंमें एक विशेष प्रौढता और प्रामाणिकता दृष्टिगोचर होने लगी। यद्यपि वे शिलालेख उससे पूर्व ही प्रकाशित हो चुके थे, किन्तु वह सामग्री अँग्रेजीमें, पुरातत्त्वविभागके बहुमूल्य और बहुधा अप्राप्य प्रकाशनोंमें निहित होनेके कारण साधारण लेखकों तथा पाठकोंको सुलभ नहीं थी। इसीलिये समस्त प्रकाशित शिलालेखोंका सुलभ संग्रह नितान्त आवश्यक है।

जैनशिलालेखसंग्रह प्रथम भागमें पाँच सौ शिलालेख प्रकाशित किये गये थे। वे सब लेख श्रवणबेल्गुल और उसके आसपासके कुछ स्थानोंके ही थे।

अब प्रस्तुत संग्रहमें गेरीनोद्वारा संकलित जैन प्राचीन लेखोंकी सूची (Repertoire D'epigraphie Jaina by A. Guerinot) के क्रमानुसार लेख उपस्थित करनेका प्रयत्न किया गया है। नामोंको मोटे टाइपमें छापने तथा लेखोंका सारांश हिन्दीमें दे देनेकी शैली प्रथम भागके अनुसार यहाँ भी अपनाई गई है। किन्तु खेद है कि प्रत्येक लेखके भीतर पद्योंकी संख्याका क्रमसे अंकन नहीं किया गया, जिससे उनके उल्लेख करनेमें कुछ असुविधा हो सकती है।

इन शिलालेखोंका इतिहासकी दृष्टिसे मूल्य आँकना आवश्यक है। किन्तु अब यह कार्य उचित रीतिसे तभी निष्पन्न किया जा सकता है जब शेष शिलालेखोंके संग्रह भी इसी शैलीसे प्रकाशित हो जावें। अतएव, संग्राहक और प्रकाशकका इस महत्त्वपूर्ण प्रकाशनके लिये अभिनन्दन करते हुए मैं आशा करता हूँ कि वे अपने इस कार्यको गतिशील बनाये रखेंगे और विना अधिक विलम्बके संग्रहका कार्य पूरा करके लेखकों और पाठकोंकी दीर्घकालीन पिपासाकी पूर्णतः तृप्ति करनेका अनुपम यश प्राप्त करेंगे।

नागपुर महाविद्यालय
नागपुर, ६-३-१९५२

हीरालाल जैन

जैन-शिलालेख-संग्रह

द्वितीय भाग

१

दिल्ली (टोपरा)—प्राकृत।

अशोकके सातवें धर्मशासन-लेखका अन्तिम भाग[1]

[लगभग २४२ ईसवी पूर्व]

[१] धमवढिया च वाढं वढिसति [।] एतायें मे अठाये धंमसावनानि सावापितानि धंमानुसाथिनि विविधानि आनपितानि [यथा मे पुलि]सापि बहुने जनसि आयता एते पलियोवदिसंति पि पविथलिसंतिपि [।] लजूका पि बहुकेसु पानसतसहसेसु आयता ते पि मे आनपिता[:] हेवं च हेवं च पलियोवदाथ

[२] जनं धंमयुतं [।] देवानं पिये पियदसि हेवं आहा[:] एतमेव मे अनुवेखमाने धमथभानि कटानि[,] धंममहामाता कटा[,] धम[सावने] कटे [।] देवानं पिये पियदसि लाजा हेवं आहा[:] मगेसु पि मे निगोहानि लोपापितानि[:] छायोपगानि होसंति पसुमुनिसानं[;] अंबावडिक्या लोपापिता[;] अढकोसिक्यानि पि मे उदुपानानि

[३] खानापितानि[;] निंसिधिया च कालापिता[;] आपानानि मे बहुकानि तत तत कालापितानि पटीभोगाये पसुमुनिसानं [।] ल[हुके चु] एस पटीभोगे नाम [।] विविधायाहि सुखायनाया पुलिमेहिपि लाजी

---

१. ए कनिंघम, Corpus inscriptionum indicarum, Vol. I, Inscriptions of Asoka, p. 115, t.

हि ममया च सुखयिते[1] लोके [।] इमं चु धंमानुपटीपतीअनुपटीपजंतुति[,] एतदथा मे

[४] एस कटे [।] देवानं पिये पियदसि हेव आहा[:] धंममहामातापि मे ते वहुविधेसु अठेसु अनुगहिकेसु वियापटा से पवजीतानं चेव गिहियानं च [;] सव[पासं]डेसु पि च वियापटा से [।] संघठसि पि मे कटे इमे वियापटा होहंतिति[;] हेमेव बाभनेसु आजीविकेसु पि मे कटे

[५] इमे वियापटा होहंतिति [।] **निगंठेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति[;]** नानापासंडेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंतिति [।] पटिविसठं पटीविसठं तेसु तेसु ते ते महामाता [।] धंममहामाता चु मे एतेसु चेव वियापटा सवेसु च अंनेसु पासंडेसु [।] देवानं पिये पियदसि लाजा हेवं आहा[:]

[६] एते च अंने च वहुका मुखा दानविसगसि वियापटा से मम चेव देविनं च[;] सवसि च मे आलोधनसि ते वहुविधेन आ[का]लेन तानि तानि तुठायतनानि पटी [पादयंति] हिद चेव दिसासु च [।] दालकानं पि च मे कटे अंनानं च देविकुमालानं इमे दानविसगेसु वियापटा होहंति ति

[७] धंमपदानठाये धमानुपटिपतिये [।] एस हि धंमापदाने धंमपटीपति च या इयं दया दाने सचे सोचवे मदवे साधवे च लोकस हेवं वढिसतिति [।] देवानं पिये [पियद] सि लाजा हेवं आहा[:] यानि हि कानि चि ममिया साधवानि कटानि तं लोके अनूपटीपंने तं च अनुविधियंति[;] तेन वढिता च

---

१. सुखीयते Indian Antiquary, Vol. XIII, p. 310, t.

[८] वढिसंति च मातापितुसु सुसुसाया गुलुसु सुसुसाया वयोमहालकानं अनुपटीपतिया बाभनसमनेसु कपनवलाकेसु आव दासभटकेसु संपटीपतिया [।] देवानंपिये [पि]यदसि लाजा हेवं आहा[:] मुनिसानं चु या इयं धंमवढि वढिता दुवेहि येव आकालेहि धंमनियमेन च निझतिया च

[९] तत च लहु से धंमनियमे[,] निझतिया व भुये[।] धंमनियमे च खो एस ये मे इयं कटे इमानि च इमानि जातानि अवधियानि[,] अंनानि पि चु बहु [कानि] धंमनियमानि यानि मे कटानि[।] निझतिया व चु भुये मुनिसानं धंमवढि वढिता अविहिंसाये भुतानं

[१०] अनालंभाये पानानं[।] से एताये अथाये इयं कटे[,] पुतापपोतिके चंदमसुलियिके होतु ति[,] तथा च अनुपटीपजंतु ति[।] हेवं हि अनुपटीपजंतं हिदतपालते आलधे होति[।] **सतविसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिवि लिखापापितााति**[।] एतं देवानंपिये आहा[:] इयं

[११] धमलिवि अत अथि सिलायंभानि वा सिलाफलकानि वा तत कटविया एन एस चिलठितिके सिया ।

[यह धर्मशासन-लेख अशोकके द्वारा महास्तम्भोंपर लिखाये गये लेखोंमेंसे अन्तिम है । इसको कोई-कोई आठवां धर्मशासन-लेख (Edict) मानते हैं, तो कोई मात्र सातवें धर्मशासन-लेखका ही अन्तिम भाग मानते हैं ।

इसमें बताया है कि सम्राट अशोकने अपने राज्याभिषेकसे २७ वें वर्षमें यह धर्मशासन-लेख लिखाया था । इसमें उसने अपने द्वारा नियोजित धर्ममहामात्योंका उल्लेख किया है । ये धर्ममहामात्य 'संघ' (बौद्धसंघ), आजीवक, ब्राह्मण और निर्ग्रन्थोंकी देखरेख रखनेके लिये

नियुक्त किये गये थे। यहां 'निर्ग्रन्थ' शब्दसे जैनोंका तात्पर्य है। इसपरसे मालूम पड़ता है कि उस समयके अनेक अग्रेसर धर्मोंमें जैनधर्म भी एक था।]

२

हाथीगुफाका शिलालेख[१]—प्राकृत।
जैन-सम्राट् खारवेलका इतिहास।
[मौर्यकाल १६५ वाँ वर्ष]

[१] नमो अरहंतानं [।] नमो सवसिधानं [।] ऐरेन महाराजेन **महामेघवाहनेन चेतराज**वस-वधनेन पसथसुभलखनेन चतुरंतल थुन-गुनोपहितेन कलिंगाधिपतिना सिरि खारवेलेन।

[२] पन्दरसवसानि सिरि-कडार-सरीर-वता कीडिता कुमारकीडिका [।] ततो लेखरूपगणना-ववहार-विधिविसारदेन सवविजावदातेन नववसानि योवरज पसासितं [।] संपुण-चतुवीसति-वसो तदानि वधमानसेसयोवे(=व) नाभिविजयो ततिये

(३) कलिंगराजवंसे पुरिसयुगे **महारजा**भिसेचनं पापुनाति [।] अभिसितमतो च पधमे वसे वात-विहत-गोपुर-पाकार-निवेसन पटिसंखारयति [।] कलिंनगरि [।] ख-बीरं इसि-तालं तडाग-पाडियो च वन्धापयति [।] सवुयान-पतिसंठपन च

[४] कारयति [।] पनतीसाहि सतसहसेहि पकतियो च रंजयति [।] दुतिये च वसे अचितयिता सातकर्णि पछिमदिसं हय-गज-नर-रध-बहुलं दंड पयापयाति [।] कण्हवेनां गताय च सेनाय वितापति[२] **मुसिक-नगरं** [।] ततिये पुन वसे

---

१ जैनहितैषी, भाग १५, अङ्क ५, मार्च १९२१, पृष्ठ १३९-१४५ से उद्धृत। २ वितापितं इति वा।

[५] गंधव-वेदबुधो दंत-नत-गीत-वादितसंदसनाहि उसव-समाज-कारापनाहि च कीडापयति नगरिं [।] तथा चवुथे वसे विजाधराधिवासं अहत-पुवं कालिंगपुवराजनिवेसितं·········वितध-मकूटे सबिलमढिते च निखित-छत-

[६] भिंगारे हित-रतन-सापतेये **सव-रठिक भोजके** पादे वंदापयति [।] पंचमे च दानी वसे **नंदराज** ति-वससत-ओघाटितं तनसुलिय-वाटा पनाडिं नगरं पवेस[य]ति [।] सो [पि च वसे] छडम 'भिसितो च राजसुय [?'] सन्दसयंतो सवकर-वण ·····

[७] अनुगह—अनेकानि सतसहसानि विसजति पोरं जानपदं[।] सतमं च वसं पसासतो वजिरघरवि **धुसि** ति घरिनी समतुक-पद-पुंना-सकुमार[।]···········[।] अठमे च वसे महतिसेनाय मह[तभित्ति] गोरधगिरिं

[८] घातापयिता **राजगहं** उपपीडापयति[।] एतिना च कंम पदान-पनादेन संवितसेन-वाहिनीं विपमुंचितुं मधुरां अपयातो येव नरिदो [नाम]···········[मो?] यछति [विछ]············पलवभरे

[९] कलपरुखे हय-गज-रध-सह-यंते सव-घरावास-परिवसने स अगिणठिये[।] सवगहनं च कारयितुं बम्हणानं जाति-पंतिं परिहारं ददाति[।] अरहत···········व·············न··········गिय

[१०]····[क] [ि] मानेहि रा[ज] संनिवासं महाविजयं पासादं कारापयति अठतिसाय सत-सहसेहि[।] दसमे च वसे महधीत' भिसमयो भरधवस-पथानं महिजयनं····ति कारापयति···············[निरितय] उया तानं च मणि-रतना[नि] उपलभते ।

[११]·······मंडे च पुव-राजनिवेसित—पीथुडग-द[ल]भ-नंगले नेकासयति जनपदभावनं च तेरस-वस-सत-केतुभद-तित[1] मरदेह-संघातं[।] बारसमे च वसे···········सेहि वितासयति उतरापथराजानो

[१२]···········मगधानं च विपुलं भयं जनेतो हथिसु गंगाय पाययति[।] मागधं च राजानं **बहसतिमितं**[2] पादे वंदापति[।] **नंदराज**-नीतं च **कालिंग-जिन-संनिवेसं**···········गहरतनान पडिहारेहि **अंगमागध**-वसुं च नेयाति [।]

[१३]···········त जठर-लिखिल-बरानि सिहिरानि नीवेसयति सत-विसिकनं परिहारेन[।] अभुतमछरियं च हथि-नावन परीपुरं उ[प-]देणह हयहथी-रतना-[मा]निकं **पंडराजा** एदानि अनेकानि मुत-मणिरतनानि अहरापयति इध सत-[स] [।]

[१४]······सिनो वसीकरोति [।] तेरसमे च वसे सुपवत-विजयिचके कुमारीपवते अरहिते य[।] प-खिम-व्यसंताहि काय्यनिसीदीयाय यापञावकेहि राजभितिनि चिनवतानि वोसासितानि [।] पूजानि कत-उवासा **खारवेल-सिरिना** जीवदेव-सिरि-कल्पं राखिता [।]

[१५]···········[ता] सु कतं समण-सुविहितानं (नुं ?) च सातदिसानं (नुं ?) ञातानं तपसइसिनं सघायनं (नुं ?) [;] अरहतनिसीदिया समीपे पभारे वराकर-समुथापिताहि अनेक-योजना-हिताहि·······सिलाहि सिंहपथ-रानिसं धुसिय निसयानि

[१६]·······पटालिकोचतरे च वेडूरियगमे थंभे पतिठापयति [,] पानतरिया सतसहसेहि [।] **मुरिय**-कालं वोछिंनं (नें ?) च चोयठि-

---

१ बहसतिमित्रं इति । २ रानिस वा इति हरनन्दनपाण्डेयाः ।

अगस-निकंतरियं उपादायति [।] **खेमराजा** स वढराजा स भिखुराजा धमराजा पसंतो सुनंतो अनुभवंतो कलाणानि

[१७]·······गुण-विसेस-कुसलो सवपासंडपूजको सव-देवायत-नसंकारकारको [अ]पति-हत-चकि-वाहिनि-बलो चकधुर-गुतचको पवत-चको राजसि-वस-कुल-विनिश्रितो महा-विजयो राजा **खारवेल-सिरि**

अनुवाद—[१] अर्हंतोंको नमस्कार। सर्व सिद्धोंको नमस्कार। ऐल-महाराज **महामेघवाहन**, चैत्रराजवंशवर्धन, प्रशस्तशुभलक्षणसम्पन्न, अखिल-देशस्तम्भ, कलिङ्गाधिपति **श्री खारवेलने**

[२] पन्द्रह वर्षतक श्रीसम्पन्न और कडार (गन्दुमी) रंगवाले शरीरसे कुमार-क्रीड़ाएँ कीं। बादमें लेख, रूपगणना, व्यवहार-विधिमें उत्तम योग्यता प्राप्त करके और समस्त विद्याओंमें प्रवीण होकर उसने नौ वर्षोंतक युवराजकी भाँति शासन किया।

जब वह पूरा चौबीस वर्षका हो चुका तब उसने, जिसका शेष यौवन विजयोंसे उत्तरोत्तर वृद्धिंगत हुआ,—तृतीय

[३] कलिंगराजवंशमें, एक पुरुषयुगके लिये महाराज्याभिषेक पाया। अपने अभिषेकके पहले ही वर्षमें उसने वातविहत (तूफानके बिगाड़े हुए) गोपुर (फाटक), प्राकार (चहारदीवारी) और भवनोंका जीर्णोद्धार कराया; कलिङ्ग नगरीके फव्वारेके कुण्ड, इषितल्ल (?) और तड़ागोंके बाँधोंको बँधवाया; समस्त उद्यानोंका प्रतिसंस्थापन कराया और पैंतीस लक्ष प्रजाको सन्तुष्ट किया।

[४] **दूसरे वर्षमें**, सातकर्णिकी चिन्ता न करके उसने पश्चिम देशको बहुत-से हाथी, घोड़ों, मनुष्यों और रथोंकी एक बड़ी सेना भेजी। कृष्ण-वेण नदीपर सेना पहुँचते ही, उसने उसके द्वारा **मूषिक-नगर**को सन्तापित किया। **तीसरे वर्षमें** फिर

[५] उस गन्धर्व-वेदमें निपुणमतिने दंप, नृत्य, गीत, वाद्य, सन्दर्शन, उत्सव और समाजके द्वारा नगरीका मनोरञ्जन किया।

और चौथे वर्षमें, विद्याधर-निवासोंको, जो पहले कभी नष्ट नहीं हुए थे और जो कलिङ्गके पूर्व राजाओंके निर्माण किये हुए थे······उनके मुकुटोंको व्यर्थ करके और उनके लोहेके टोपोंके दो खण्ड करके और उनके छत्र,

[६] और भृंगारों (सुवर्णकलशों) को नष्ट करके तथा गिराकर, और उनके समस्त वहुमूल्य पदार्थों तथा रत्नोंका हरण करके, उसने समस्त राष्ट्रिकों और भोजकोंसे अपने चरणोंकी वन्दना कराई।

इसके वाद पाँचवें वर्षमें उसने तनसुलिय मार्गसे नगरीमें उस प्रणाली (नहर) का प्रवेश किया जिसको नन्दराजने तीन सौ वर्ष पहले खुदवाया था।

छठे वर्षमें उसने राजसूय-यज्ञ करके सव करोंको क्षमा कर दिया,

[७] पौर[1] और जानपद (संस्थाओं) पर अनेक शतसहस्र अनुग्रह वितरण किये।

सातवें वर्ष राज्य करते हुए, वज्र घरानेकी धृष्टि (प्राकृत=धिसि) नाम्नी गृहिणीने मातृक पदको पूर्ण करके सुकुमार [I]···(।)

आठवें वर्षमें उसने (खारवेलने) वड़ी दीवारवाले गोरथगिरिपर एक वड़ी सेनाके द्वारा

[८] आक्रमण करके राजगृहको घेर लिया। पराक्रमके कार्योंके इस समाचारके कारण नरेन्द्र [नाम]···अपनी घिरी हुई सेनाको छुड़ानेके लिये मथुराको चला गया।

(नवें वर्षमें) उसने दिये······पल्लवयुक्त

[९] कल्पवृक्ष, सारथीसहित हय-गज-रथ और सवको अग्निवेदिकासहित गृह, आवास और परिवसन। सव दानको ग्रहण कराये जानेके लिये उसने ब्राह्मणोंकी जातिपंक्ति (जातीय संस्थाओं) को भूमि प्रदान की। अर्हत्······च······न······गिया (?)

---

१ राजधानीकी संस्थाको 'पौर' और ग्रामोंकी संस्थाको 'जानपद' कहते थे। वर्तमान समयमें हम इन्हें 'म्युनिसिपल' और 'डिस्ट्रिक्ट-वोर्ड'के नामसे पुकार सकते हैं।

[१०] [क] [ि] मानैः (?) उसने महाविजय-प्रासाद नामक राजसन्निवास, अड़तीस सहस्रकी लागतका बनवाया।

दसवें वर्षमें उसने पवित्र विधानोंद्वारा युद्धकी तैयारी करके देश जीतनेकी इच्छासे, भारतवर्ष (उत्तरी भारत) को प्रस्थान किया।··· क्लेश (?) से रहित········उसने आक्रमण किये गये लोगोंके मणि और रत्नोंको पाया।

[११] (ग्यारहवें वर्षमें) पूर्व राजाओंके बनवाये हुए मण्डपमें, जिसके पहिये और जिसकी लकड़ी मोटी, ऊंची और विशाल थी, जनपदसे प्रतिष्ठित तेरहवें वर्ष पूर्वमें विद्यमान केतुभद्रकी तिक्त (नीम) काष्ठकी अमर मूर्तिको उसने उत्सवसे निकाला।

बारहवें वर्षमें········उसने उत्तरापथ (उत्तरी पञ्जाब और सीमान्त प्रदेश) के राजाओंमें त्रास उत्पन्न किया।

[१२] ········और मगधके निवासियोंमें विपुल भय उत्पन्न करते हुए उसने अपने हाथियोंको गंगा पार कराया और मगधके राजा वृहस्पतिमित्रसे अपने चरणोंकी बन्दना कराई ···········(वह) कलिंगजिनकी मूर्तिको जिसे नन्दराज ले गया था, घर लौटा लाया और अंग और मगधकी अमूल्य वस्तुओंको भी ले आया।

[१३] उसने·········जठरोल्लिखित (जिनके भीतर लेख खुदे हैं) उत्तम शिखर, सौ कारीगरोंको भूमि प्रदान करके, बनवाये और यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि वह पाण्डवराजसे हस्ति नावोंमें भरा कर श्रेष्ठ हय, हस्ति, माणिक और बहुतसे मुक्ता और रत्न नजरानेमें लाया।

[१४] उसने·········वशमें किया।

फिर तेरहवें वर्षमें व्रत पूरा होनेपर (खारवेलने) उन याप-ज्ञापकोंको जो पूज्य कुमारी पर्वतपर, जहाँ जिनका चक्र पूर्णरूपसे स्थापित है, समाधियोंपर याप और क्षेमकी क्रियाओंमें प्रवृत्त थे; राजभृतियोंको वितरण किया। पूजा और अन्य उपासक कृत्योंके क्रमको श्रीजीवदेवकी भाँति खारवेलने प्रचलित रखा।

[१५] सुविहित श्रमणोंके निमित्त शास्त्र-नेत्रके धारकों, ज्ञानियों और तपोबलसे पूर्ण ऋषियोंके लिये (उसके द्वारा) एक संघायन (एकत्र होनेका भवन) बनाया गया। अर्हत्की समाधि (निषद्या) के निकट, पहाड़की ढालपर, बहुत योजनोंसे लाये हुए, और सुन्दर खानोंसे निकाले हुए पत्थरोंसे, अपनी सिंहप्रस्थी रानी 'धृष्टी' के निमित्त विश्रामागार—

[१६] और उसने पाटालिकाओंमें रत्न-जटित स्तम्भोंको पचहत्तर लाख पणों (मुद्राओं) के व्ययसे प्रतिष्ठापित किया। वह (इस समय) मुरिय कालके १६४ वें वर्षको पूर्ण करता है।

वह क्षेमराज, वर्द्धराज, भिक्षुराज और धर्मराज है और कल्याणको देखता रहा है, सुनता रहा है और अनुभव करता रहा है।

[१७] गुणविशेष-कुशल, सर्व मतोंकी पूजा (सन्मान) करनेवाला, सर्व देवालयोंका संस्कार करानेवाला, जिसके रथ और जिसकी सेनाको कभी कोई रोक न सका, जिसका चक्र (सेना) चक्रधुर (सेना-पति) के द्वारा सुरक्षित रहता है, जिसका चक्र प्रवृत्त है और जो राजर्षिवंश-कुलमें उत्पन्न हुआ है, ऐसा महाविजयी राजा श्रीखारवेल है।

इस शिलालेखकी प्रसिद्ध घटनाओंका तिथिपत्र—

बी. सी. (ईसाके पूर्व)

,, १४६० (लगभग)	...	केतुभद्र
,, ...४६० (लगभग)	...	कलिंगमें नन्दशासन
,, [२३०	...	अशोककी मृत्यु]
,, [२२० (लगभग)	...	कलिंगके तृतीय-राजवंशका स्थापन]
,, १९७ ...	...	खारवेलका जन्म
,, [१८८ ...	...	मौर्यवंशका अन्त और पुष्यमित्रका राज्य ग्रहण करना]
,, १८२ ...	...	खारवेलका युवराज होना
,, [१८० (लगभग	...	सातकर्णि प्रथमका राज्य-प्रारम्भ]

,, १७३	...	... खारवेलका राज्याभिषेक
,, १७२	...	... मूषिक-नगरपर आक्रमण
,, १६९	...	... राष्ट्रिकों और भोजकोंका पराजय
,, १६७	...	... राजसूय-यज्ञ
,, १६५	...	... मगधपर प्रथम बार आक्रमण
,, १६१	...	... उत्तरापथ और मगधपर आक्रमण, पाण्डवराजसे अदेय (नजराने) की प्राप्ति
,, १६०	...	... शिलालेखकी तिथि

३

वैकुण्ठ (स्वर्गपुरी) गुफा उदयगिरि—प्राकृत।

[लगभग १६५ मौर्यकाल]

अरहन्तपसादनं कलिंग····य····नानं लोनकाडतं रजिनोलस····हेथिसहसं पनोतसय····कलिंग····वेलस अगमहि पिडकाडं[1]

[इस शिलालेखमें अर्हन्तोंकी कृपाको प्राप्त गुहानिर्माण (Excavation) बताया गया है। इस लेखका शेषभाग इतना टूटा हुआ है कि वह पढ़नेमें नहीं आसकता। वैकुण्ठ गुफा, जिसके नामसे यह शिलालेख प्रसिद्ध है, राजा ललाकके द्वारा अर्हन्तों और कलिंगके श्रमणोंके लाभ या उपयोगके लिये बनाई गई थी।]

[JASB, VI, p. 1074]

४

मथुरा—प्राकृत।

[विना कालनिर्देशका] लेकिन करीब १५० ई० पूर्वका [बूल्हर]-

---

१ पितकड in JASB, vol VI, p. 1074.

समनस माहरखितास आंतेवासिस वछीपुत्रस सावकास **उतर-दासक[ा]** स पासादोतोरनं [॥]

अनुवाद—**माहरखित** (माघरक्षित) के शिष्य, वछी (वात्सी माता) के पुत्र **उतरदासक** (उत्तरदासक) श्रावकका (दान) यह मन्दिरका तोरन(ण) है।

[EI, II, n° XIV, n° 1.]

५

मथुरा—प्राकृत।

[महाक्षत्रप शोडाशके ४२ वें (?) वर्षका]

१. नम अरहतो वर्धमानस।

२. स्व[ा]मिस **महक्षत्रपस शोडासस** सवत्सरे ४० (?) २ हेमंतमासे २ दिवसे ९ हरितिपुत्रस पालस भयाये समसाविकाये[1]

३. कोछिये **अमोहिनिये** सहा पुत्रेहि पालघोपेन पोठघोपेन धनघोपेन आयवती प्रतिथापिता प्राय–[भ]–

४. आर्यवती अरहतपुजाये [॥].

अनुवाद—अर्हत् वर्धमानको नमस्कार हो। स्वामी **महाक्षत्रप शोडासके** ४२ (?) वें वर्षकी शीतऋतुके दूसरे महीनेके नौवें दिन, हरिति (हरिती या हारिती माता) के पुत्र **पालकी** स्त्री, तथा श्रमणोंकी श्राविका, कोछि (कौत्सी) **अमोहिनि** (अमोहिनी) के द्वारा अपने पुत्रों **पालघोप, पोठघोप,** (प्रोष्ठघोप) और **धनघोषके** साथ **आयवती** (आर्यवती) की स्थापना की गई थी।

[EI, II, n° XIV, n° 2]

६

पभोसा (अलाहाबादके पास)—संस्कृत।

[द्वितीय या प्रथम ईसवी पूर्व (फ्यूरर)]

---

१ पढ़ो 'समनसाविकाये'।

१. राज्ञो गोपालीपुत्रस
२. बहसतिमित्रस
३. मातुलेन गोपालीया[1]
४. वैहिदरीपुत्रेन [आसा]
५. **आसाढसेनेन** लेनं
६. कारितं [उदाकस][2] दस—
७. मे सवछरे कश्शपीयानं अरहं—
८. [ता] न ` – ा – ि – – – ा [॥]

अनुवाद—गोपालीके पुत्र राजा बहसतिमित्र (बृहस्पतिमित्र) के मामा, तथा गोपाली वैहिदरी (अर्थात् वैहिदर-राजकन्या) के पुत्र **आसाढसेनने** कश्शपीय अरहतोंके······दसवें वर्षमें एक गुफाका निर्माण कराया ।

[EI, II, p. 242.]

७

पभोसा (प्रभात)—प्राकृत ।

[द्वितीय या प्रथम शताब्दि ई. पू.]

१. अधियछात्रा राजो शोनकायनपुत्रस्य वंगपालस्य
२. पुत्रस्य राजो तेवणीपुत्रस्य भागवतस्य पुत्रेण
३. वैहिदरीपुत्रेण **आषाढसेनेन** कारितं [॥]

अनुवाद—अधिछत्राके राजा शोनकायन (शौनकायन) के पुत्र राजा वंगपालके पुत्र (और) तेवणी (अर्थात् त्रैवर्ण-राजकन्या) के पुत्र राजा भागवतके पुत्र (तथा) वैहिदरी (अर्थात् वैहिदर-राजकन्या) के पुत्र **आषाढसेनने** बनवाई ।

[नोट–शुङ्गकालके अक्षरोंसे मिलने-जुलनेके कारण दोनों शिलालेखोंका काल विश्वासके साथ **द्वितीय** या **प्रथम शताब्दि ई० पूर्व** निश्चित किया

---

१ संभवतः 'गोपालिया' । २ सभी अक्षर संशयापन्न हैं ।

अनुवाद—गोती (गौप्ती माता) के पुत्र इद्रपाल (इन्द्रपाल) के…
……अर्हन्तोंकी पूजाके लिये…………प्रतिमा……

[EI, II, n° XIV, n° 9.]

११

गिरनारः—संस्कृत।

[विक्रमसंवत् ५८]

हुमदके पवित्र स्थानके आङ्गनमें वृक्षके नीचे एक चौकोर चबूतरा है। उसके किनारेपर निम्नलिखित लिखा हुआ हैः—

सं० ५८ वर्षे चैत्र वदी २

सोमे धारागञ्जे

पं० नेमिचन्द्रशिष्य

पंचाणचंदमूर्ति

अनुवाद—संवत ५८ के वर्षमें, सोमवार, चैत्र वदी २ को, धारागञ्जमें नेमिचन्द्रके शिष्य पंचाणचंदकी मूर्ति।

[ASI, XVI, p. 357, n° 20]

१२

मथुरा—प्राकृत।

(विना कालनिर्देशका)

१. भदंतजयसेनस्य आतेवासिनीये

२. धामघोपाये दानो पासादो [॥]

अनुवाद—भदन्त जयसेनकी शिष्या धमघोपा (धर्मघोषा) के दानस्वरूप यह मन्दिर है।"

[EI, II, n° XIV, n° 4]

१३

मथुरा—प्राकृत।

भगवा नेमेसो भग— —

अनुवाद—"भगवान नेमेस (नैगमेष), भगवान…

[EI, II, n° XIV, n° 6]

१४

मथुरा—प्राकृत।
[विना कालनिर्देशका]

१. मा अर्हंतानं[1] श्रमणश्राविका[ये]

२.....लहस्तिनीये तोरणं प्रति [ष्ठापि][2]

३. सह माता पितिहि सह

सश्रू-शशुरेण

अनुवाद—अर्हन्तोंको नमस्कार। अपने माता पिता और सास-ससुरके साथ साधुओंकी एक शिष्या···लहस्तिनी (बलहस्तिनी), के हुक्मसे एक तोरण खड़ा किया गया।

[ऐसा मालूम पड़ता है कि उस समय माता-पिता और सास-ससुरके साथ कोई धार्मिक कार्य करनेसे, उनको भी पुण्यप्राप्तिमें साझीदार समझा जाता था।]

[EI, I, XLIII, n° 17]

१५

मथुरा—प्राकृत।
[विना कालनिर्देशका]

१. अ. नमो अरहंतानं फगुयशस

२. अ. नतकस भयाये शिवयशा-

३. अ. — —ि— —।——।—काये

१. ब. आयागपटो कारितो

२. ब. अरहतपुजाये [।।]

---

१ 'नमो अरहंतानं' पढ़ना चाहिये। २ 'प्रतिष्ठापितं' पढ़ो। संभवतः पहली और दूसरी पंक्तिके अन्तमें और अधिक अक्षर टूटे हुए मालूम पड़ते हैं।

अनुवाद—अर्हन्तोंको नमस्कार! फगुयश (फल्गुयशस्) नर्तककी पत्नी शिवयशा (शिवयशस्) के द्वारा अर्हन्तोंकी पूजाके लिये एक आयागपट बनवाया गया।

[El, II, n° XIV, n° 5]

१६

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[विना कालनिर्देशका]

नमो अरहतो महाविरस। माथुरक-लवाडस[सा]-भयाये-त्र···ताये [आयागपटो] [॥]

अनुवाद—महावीर अर्हत्‌को नमस्कार। मथुरानिवासी-लवाड (?) की पत्नी—ि ताके [दानस्वरूप] यह आयागपट है।

[El, II, n° XIV, n° 8]

१७

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्कक्काल ?] वर्ष ४

अ. सिद्धं स ४ ग्रि १ दि २० वारणातो गणातो अर्य्यहाट्ट-
किंयातो कुलतो वजणगरित [ो शा]--

ब. पुश्यमित्रस्य शिशिनि सथिसहाये शिशिनि सिहमित्रस्य
सढचरि ---

स. दाति सहा ग्रहचेटेन ग्रहदासेन --

अनुवाद—सिद्धि हो। चतुर्थ वर्षके ग्रीष्म ऋतुके १ ले महीनेके २० वें दिन, वारणगण, अर्य हाट्टकिय (आर्य हाट्टकीय) कुल, वजणगरी (वज्र-नगरी) शाखाके --- पुष्यमित्रकी शिष्या, साथिसिहा (षष्ठिसिंहा) की शिष्या, सिहमित्र (सिंहमित्र) की सढचरी (श्राद्धचरी)···।

[El, II, n° XIV, n° 11]

१८

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[हुविष्ककाल ?] वर्ष ५

··· स्य व ५ गृ ४ दि ५ **कोट्टिया**···············

त [ो] शाखात [ो] वाचकस्य अर्य्य····

अनुवाद—···के ५ वें वर्षकी ग्रीष्म ऋतुके चौथे महीनेके ५ वें दिन, ···········कोट्टिय (गण)······शाखाके वाचक अर्य्य···(आर्य)···

[El, II, n° XIV, n° 12]

१९

मथुरा—प्राकृत।

[कनिष्क सं० ५]

अ. १.····[१] दे [व] पुत्रस्य **क[नि]ष्कस्य** सं ५ हे १ दि १ एतस्य पूर्व्वे [ा] यं **कोट्टियातो** गणातो **ब्रह्मदासिका** [तो]

२. [कु]लातो **[उ]चेनागरि**तो शाखातो सेथि-ह-स्य ि- ि- ि- **सेन**स्य सहचरि**खुडाये दे [व]**—

ब. १. **पालस्य** धि [त] ·······

२. वधमानस्य प्रति[मा] ॥

अनुवाद—देवपुत्र कनिष्कके ५ वें वर्षकी हेमन्त ऋतुके १ ले महीनेके १ ले दिन, कोट्टियगण, ब्रह्मदासिका कुल और उच्चनागरी शाखाकी खुदा (क्षुद्रा) ने वर्धमानकी प्रतिमा समर्पित की। यह क्षुद्रा श्रेष्ठी······ सेनकी पत्नी और देव ·····पालकी पुत्री थी।

[El, I, XLIII, n° 1]

---

१ 'सिद्धं' की पूर्ति करो।

२०

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[?] वर्ष ५

अ. १. सिद्ध[म्] स ५ हे १ दि १० २ अस्य[ा] पूर्व्व[ा]ये कोट्टि[याते]।

२. [ग] णातो ब्रह्मदासिकातो उच[ा] ना (क) रितो [शाखातो] ।

ब. १. श्र[ी] गृहातो स[-भोगातो⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯।

२.⋯⋯⋯⋯स निड(?)

स. १.⋯⋯ि त्रोधिलामे ए वासुदेवा पुत्रि⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯

२.⋯सर्व-सत्[त्वा] न[म्] ह[ि]त-सुख[ा] ये।

अनुवाद—सिद्धि हो। वर्ष ५, हेमन्तका पहिला महिना, १२ वाँ दिन। इस दिन कोट्टिय गण, ब्रह्मदासिक (कुल), उचेनाकरी (उच्चा-नागरी) शाखा, (श्रीगृह) सम्भोग⋯⋯⋯के⋯⋯⋯(प्रार्थना पर)⋯⋯⋯सब जीवोंके हित और सुखके लिये⋯⋯⋯।

[IA, XXXIII, p. 36–37, n° 5]

२१

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[?] वर्ष ५

⋯⋯तो पतिव⋯⋯ब्रह्मजाति⋯स ५ हे ४ दि २० अस्य पूर्व्वायि कु महिलनस्य शिष्य अर्य्यगरिकतो

[यह शिलालेख अर्य्य गरिकके किसी दानका उल्लेख करता है। गरिक महिलनके शिष्य थे। यह दान सं० ५ के वर्षमें, शीतऋतुके चौथे महीनेके २० वें दिन किया गया।]

[A Cunningham, Reports III, p. 31 n° 3]

२२

मथुरा—प्राकृत।

[विना कालनिर्देशका]

अ. १. सिद्ध **को[ट्टि]** यतो गणतो **उचेन—**

२. **गरि**तो शखतो **ब्रम्हा**(ह्मा)**दासिअ**तो

३. कुलतो **शिरिग्रिह**तो संभोकतो

४. अय्य **जेष्टहस्ति**स्य शिष्यो अ [**र्य्यमि**] [**हि**] **लो**]

ब. १. तस्य शिष्य [ो] **अर्य्यक्षेर**

२. [**को**] वाचको तस्य निर्वत—

३. न **वर** [**ण**] हस्ति [स्य]

स. १. [च] **देवियच** धित **जय—**

२. **देव**स्य वधु **मोषिनिये**

३. वधु कुठस्य **कसुथ**स्य

द. १. धम्रप [ति] ह **स्थिरए**

२. दन शवदोभद्रिक

३. सर्व्रसत्वन हितसुखये

[El, II, n° XIV, n° 37]

अनुवाद—कोट्टिय गण, उच्चेनगरी (उच्चनागरी) शाखा, (और) ब्रह्मदासिअ (ब्रह्मदासिक) कुल, शिरिग्रह संभोगके अय्य जेष्टहस्ति (ज्येष्ठहस्तिन्) के शिष्य अर्य्य मिहिल (आर्य मिहिर) थे; उनके शिष्य वाचक अर्य्य क्षेरक (आर्य क्षैरक ?) थे; उनके कहनेसे वरणहस्ती और देवी, दोनोंकी पुत्री, जयदेवकी बहू तथा मोषिनीकी बहू, कुठ कसुथकी धर्मपत्नी स्थिराके दानमें, सर्व जीवोंके कल्याण और सुखके लिये, सर्वतोभद्रिका प्रतिमा दी गई।

२३

मथुरा—प्राकृत।

[विना कालनिर्देशका]

अ. १. सिद्धम् ॥ **कोट्टियातो** गणातो **ब्रह्मदासिकात**[ो] कुलातो

२. उ[च्चे]**नागरि**तो शाखातो—**रिना**तो सं[भ] ो[गातो] अ [र्य्य]-

व. १. **जेष्टहस्ति**[स्य] शि[ष्यो] अर्य्य**महलो** अर्य्य**जेष्ट**[**हस्तिस**]
[शिशो] अर्य्य[**गा**]**ढक** [ो] [त] स्य शिशिनि [अर्य्य-]

२. **शामये** निर्वतना । उ[स]····प्रतिमा **वर्मये** धीतु [**गुल्हा**]
ये जयदासस्य कुटुंविनिये दानं

अनुवाद—सफलता प्राप्त हो। अर्य्य (आर्य) ज्येष्ठहस्तिके शिष्य अर्य महल थे। वे कोट्टिय गण, ब्रह्मदासिक कुल, उच्चनागरी शाखा और··· रिन संभोगके थे । ज्येष्ठहस्तिके एक और शिष्य आर्य गाढक थे। उनकी शिष्या शामाके कहनेसे गुल्हाने, जो कि वर्माकी पुत्री और जयदासकी पत्नी थी, एक ऋषभदेवकी प्रतिमा समर्पित की।

[EI, 1, XLIII, n° 14]

२४

मथुरा—प्राकृत।

[कनिष्क सं० ७]

१. [सिद्धम् ॥] महाराजस्य राजातिरास्य देवपुत्रस्य षाहि-
कणिष्कस्य सं० ७ हे १ दि १० ५ एतस्य पूर्व्वायां अर्य्यो-
देहिकियातो

२. गणातो अर्य्य**नागभुतिकिया**तो कुलातो गणिस्य अर्य्य**बुद्ध-**
शिरिस्य शिष्यो वाचको अर्य्य**स**[**न्धि**]**क**स्य भगिनि अर्य्य**जया**
अर्य्य**गोष्ट**····

अनुवाद—सफलता हो। महाराज, राजाधिराज, देवपुत्र, शाहि कनिष्कके ७ वें वर्षमें, हेमन्तऋतुके पहले महीनेके १५ वें दिन (अमावस्या) (Lunar day) अर्य्योदेहिकीय (आर्य उद्देहिकीय) गण और अर्य्य-नागभुतिकिय (आर्य नागभूतिकीय) कुलके गणी अर्य्य बुद्धिशिरि (आर्य-बुद्धश्री)के शिष्य वाचक अर्य्य (सन्धि) ककी भगिनी अर्य्य जया (आर्य जया) अर्य्य गोष्ठ······

[EI, 1, XLIII, n° 19]

२८

मथुरा—प्राकृत।

[कनिष्क वर्ष ९···]

१. सिद्धं महाराजस्य **कनिष्कस्य** संवत्सरे नवमे··················
मासे प्रथ १ दिवसे ५ अस्य पूर्व्वायि **कोट्टिया**तो गणातो

२. ·········धव····दिस······ ·न बुद·· ·····भ जिमित·············
त्रिकद

[यह महत्त्वपूर्ण लेख नववें संवत्, पहले महीने (ऋतुका नाम लुप्त है) पाँचवें दिनका है। यह महाराज कनिष्कके राज्यकाल (ईस्वी पूर्व ४८) का है।]

[A Cunningham, Reports, III, p 31, n° 4.]

२९

मथुरा—प्राकृत।

[कनिष्कका १५ वाँ वर्ष]

अ. १.········[१] सं १० ५ गृ ३ दि १ अंस्या पूर्व्वे [I] य

ब. १.········**हिकातो**[२] कुलातो अर्य्य**जयभूति**····

स. १. स्य शिशीनिनं अर्य्य**सङ्घमिकये** शिशीनि····[३]

द. १. अर्य्य**वसुलये** [निर्वर्त्ते] नं

---

१ 'सिद्धं' की पूर्त्ति करो। २ 'मेहिकातो' पढ़ो। ३ 'शिशीनिनं' पढ़ो।

अ. २.········लस्य धी [तु]····[ ]········धु[1] **वेणि**

ब. २.····श्रेष्ठि [स्य] धर्मपत्निये **भट्टि[से]नस्य**

स. २. [मातु] **कुमरमितयो**[2] दनं भगवतो [प्र]····

द. २. मा सव्वतोभद्रिका [॥]

अनुवाद—[सफलता हो।] १५वें वर्षकी ग्रीष्म ऋतुके तीसरे महीनेके पहले दिन, भगवानकी एक सर्वतोभद्रिका प्रतिमाको कुमरमिता (कुमारमित्रा) ने [मेहिक] कुलके अर्य्यजयभूतिकी शिष्या अर्य्य सङ्गमिकाकी शिष्या अर्य्य वसुलाके आदेशसे समर्पित की। कुमारमित्रा···लकी पुत्री,···की बहू (वधू), श्रेष्ठी वेणीकी धर्मपत्नी और भट्टिसेनकी माँ थी।

[EI, I, n° XLIII, No 2]

२७

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क ?] वर्ष १८

अ. स १० ८ गृ ४ दि ३ [अस्या पु]–[य] ···· [या] तो गण [तो]····

ब. संभोगातो **वच्छलियातो** कुलातो गणि········

द. १. ····वासि **जयस्य**–तु **मासिगिये** [?] दानं सव्वत[ो]भ–[द्र]········

२. – [सर्व्वस] त्त्वा [नं] सुखाय भवतु।

अनुवाद—वर्ष १८ ग्रीष्मऋतुका ४ था महीना, तीसरे दिनके अवसर पर, [कोट्टि] य गण,···संभोग, वच्छलिय (वात्सलीय) कुलके गणि······के आदेशसे जयकी (माता) मासिगिका दान एक सर्वतोभद्र [प्रतिमा] के रूपमें किया गया।

[EI, II, n° XIV, n° 13]

---

१ 'वधु' पढ़ो। २ इसे 'कुमारमितये' पढ़ना चाहिये।

२८

मथुरा—प्राकृत-भग्न ।

[हुविष्क ?] वर्ष १८

अ.····ष १० [८] व २ दि. १० १

ब. धितु **मि [तशि] रिये** भगवती अरिष्टणेमिस्य [वेवर्त] ?

अनुवाद—वर्ष १८, वर्षाऋतुका २ रा महीना, ११ वां दिन, इस दिन·· की पुत्री मितशिरि (? मित्रश्री) के दानके रूपसें भगवान अरिष्टणेमि (अरिष्टनेमि) की···[की प्रतिष्ठा)······

[EI, II, XIV, n° 14]

२९

मथुरा—प्राकृत ।

[कनिष्क सं. १९]

अ. १. सिद्धम् । सं १० ९ व ४ दि १० अस्यां पु····

२. र्व्वायं वाचकस्य अर्य्यबल····

३. **दिनस्य** शिष्यो [वाच] को अर्यमा····

४. **तृदिनः** तस्य [नि] र्व्वर्त्त [न]।

ब. १. [**कोट्टिया**तो गणातो **ठानिया**तो

२. [कुलातो **श्रीगृहा**तो संभोगातो]

३. [अर्यवेरिशाखातो **सु**] **चि**····

स. **[ल]** स्य धर्म्यपत्निये ले···

द. दानं भगवतो स [न्ति]········[प्र] तिमा

अ. ५. नाश··········तनं

व. ४.····। [न] मो अरत्ततानं सर्व्वलोकुत्त [मानं]

अनुवाद—सिद्धि हो । १९ वें वर्षकी वर्षाऋतुके चौथे महीनेमें, वाचक अर्य्य वलदिन (वलदत्त) के शिष्य वाचक अर्य्य मातृदिनके आदेशसे भगवान शान्तिनाथकी प्रतिमा ले······की तरफसे अर्पित की गई । यह अर्पण करनेवाली स्त्री सुचिल (शुचिल) की धर्मपत्नी थी और वह कोट्टिय गण, ठानीय कुल, श्रीगृह सम्भोग तथा अर्य्य वेरि (आर्य-वज्र) शाखाकी थी । सर्व लोकोंमें उत्तम ऐसे अर्हतोंको नमस्कार हो ।

[El, 1, n° XLIII, n° 3]

३०

मथुरा—प्राकृत ।

[कनिष्क वर्ष २०]

अ १. सिद्ध स [२०] गृमा—दि १० ५ कोट्टियातो गणतो [ठ] णियातो कुलतो वेरितो शखतो शिरिकातो

व १. [संभो]गातो वाचकस्य अर्य्यसघसिहस्य निर्व्वर्त्तना दातिलस्य·······मति—

२. लस्य कुठुविणिये जयवालस्य देवदासस्य नागदिनस्य च नागदिनय च मातु

स. १. श्राविकाये दि—

२. [ना] ये दानं ॥

३. वर्द्धमानप्र—

४. तिम ।

अनुवाद—सिद्धि हो । २० वें वर्षकी ग्रीष्मऋतुके १ ले महीनेके १५ वें दिन, कोट्टियगण, ठानीय कुल, वेरि (वज्री) शाखा और शिरिक सम्भोगके वाचक अर्य्य सघसिह (आर्य सङ्घसिंह) के आदेशसे श्राविका दीना (दिन्ना) की तरफसे वर्धमानकी प्रतिमा [अर्पित की गई] । यह

दिन्ना दातिल [की पुत्री], मातिलकी पत्नी और जयपाल, देवदास, नागदिन (नागदत्त) तथा नागदिना (नागदत्ता) की माँ थी।

[EI, 1, n° XLIV, n° 28]

३१

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[हुविष्क सं० २०]

अ. १. [सिद्धं सं २० गृ ३] दि [१०] ७ [एत]स्य पूर्व्वाय **कोट्टिय[ा]** तो गणातो **ब्रह्मदासिया**तो कुलातो **उच्चे [नागरि**तो शा] खातो **[श्री] गृह [ा]** तो संभोगातो [बृहंतव]ाचक च गणिन च **ज [–मित्र]** स्य....[1]

२. अर्य्य **[ओ] घ**स्य शिष्यगणिस्य [अ] र्य्यपालस्य श्र [द्धच] रो [वाच]कस्य अर्य्य**[दत्त]**स्य शिष्यो वाचको अर्य्य-सीहा [त] स्य निव्वर्त्तणा [खो] द्दमि [त्त]स्य मानिकरस्य [गी]– **जयभ[ट्टि]** धीतु **दा**स्य—

ब. १. [लो] हवाणियस्स **वाधर**....वधू **[ह] ग्गु [देव]**स्य धर्म्मपत्निये **मित्राये** [दानं].... [सर्व्वे] स [त्वानं] हि [तसु] खाये काक [तेय]......क्ष–

२.—वाज......ि.... ो...........रज...........।

अनुवाद—सिद्धि हो। हुविष्कके २० वें वर्षकी ग्रीष्मऋतुके तीसरे महीनेके १७ वें दिन, वाचक अर्य्य सीह (सिंह)–जो वाचक दत्तके शिष्य थे, और जो कोट्टियगण, ब्रह्मदासीय कुल, उच्चनागरी शाखा तथा श्रीगृह

---

[1] 'शिष्य' पढ़ो।

संभोगके थे—की आज्ञासे सब सत्त्वोंके सुख और कल्याणके लिये, मित्राकी तरफसे'''समर्पित की गई। यह मित्रा हग्गु देव (फल्गुदेव) की धर्मपत्नी, लोहेका व्यापार करनेवाले वाधरकी वहू खोट्टमित्रके मानिकर'''जयभट्टिकी पुत्री'''''''''। अर्य्यदत्त गणी अर्य्यपालके श्राद्धचर थे। अर्य्यपाल अर्य्य ओघके शिष्य थे और अर्य्य ओघ महावाचक गणी जयमित्रके शिष्य थे।

[EI, 1, n° XLIII, n° 4]

३२

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[विना कालनिर्देशका है, पूर्ववर्ती शिलालेखसे ही मिलता-जुलता होनेसे इसका भी समय हुविष्क सं. २० है]

वाचकस्य **दत्तशिष्यस्य सीहस्य** नि''''''''

[EI, 1, p. 383, n° 60]

३३

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क सं. २२]

१. सिद्ध सव २०''''२ ग्रि १ दि स्य पुर्व्वायं वाचकस्य अर्य्य-**मात्रिदिनस्य** णि''''[1]

२. सर्त्तवाह्निनिये **धर्म्मसोमाये** दानं॥ नमो अरहंतान

अनुवाद—सिद्धि प्राप्त हो। [हुविष्कके] २२ वें वर्षकी ग्रीष्मके पहले महीनेके ''दिन, वाचक अर्य्य-मात्रिदिन (आर्य-मातृदत्त) के आदेशसे यह धर्म्मसोमाका दान है। धर्मसोमा एक सार्थवाहकी स्त्री थी। अर्हन्तोंको नमस्कार हो।

[EI, 1, n° XLIV, n° 29]

---

१ 'निर्वर्तना'।

३४

मथुरा—प्राकृत।
[हुविष्क सं. २२]

[सि] द्धं सं २० (?) [२] ग्रि २ दि ७ वर्धमानस्य प्रतिमा
वारणातो गणातो **पेतिवामि[क]**...

अनुवाद—सिद्धि प्राप्त हो। २२ वें वर्षकी ग्रीष्मके दूसरे महीनेके ७ वें दिन, वारणा गण, पेतिवामिक [कुल] की तरफसे वर्धमानकी प्रतिमा [प्रतिष्ठापित की गई]।

[El, 1, n° XLIII, n° 20]

३५

मथुरा—प्राकृत।
[हुविष्क वर्ष २५]

अ. १. सवत्सरे पचविशे हेमंतम [से] त्रितिये दिवसे वीशे अस्मि क्षुणे

ब. १. **कोट्टियतो** गणतो **ब्र[ह्म]दासिकतो** कुलतो **उचेनागरितो** शाखातो अयबलत्रतस्य शिपो **सधि**

२. स्य शिषिनि ग्रर्हा ———ि.... — वतन [ना] दिअ [रि] त
जभ[क] स्य वधु **जयभट्टस्य** कुंटूबिनीय **रयगिनिये** [वु]सुय [॥]

अनुवाद—२५ वें वर्षकी शीतऋतुके तीसरे महीनेके १२ वें दिनके समय रयगिनिने जो नान्दिगिरि (?) के जभककी बहू थी, एक वुसुय[1] ग्रर्हा — — की आज्ञासे समर्पित की। रयगिनि जयभट्टकी पत्नी थी। ग्रर्हा — — सधिकी शिष्या थी। सधि अर्य्य बलत्रत (बलत्रात) के शिष्य थे। यह बलत्रात कोट्टिय गण, ब्रह्मदासिक कुल (और) उच्चनागरी शाखाके थे।

[El, 1, XLIII, n° 5]

---

१ यह एक प्रकारकी या तो प्रतिमा है या कोई दान है।

३६

मथुरा—प्राकृत ।

[विना कालनिर्देशका, संभवतः हुविष्कके २५ वें वर्षका]

१. **उचेनगरि**तो शखतो अर्य्य**बलत्र**तस्य शिसिणि अर्य्य**ब्रह्म**--

२. अर्य्य**बलत्र**तस्य शिष्यो अर्य्य**सन्धि**स्य परिग्रहे **नवहस्ति**स्य धिता **ग्रहसेन**स्य वधु ....

३. **शिवसेन**स्य **देवसेन**स्य **शिवदेव**स्य च भ्रात्रिनं मातु जायये प्रतीमा प्र.... ....

४. [मा] नस्य सर्व्वसत्वानं हितसुखय ॥

अनुवाद—अर्य्य ब्रह्म (आर्य ब्रह्म) [और] अर्य्य बलत्रत (आर्य बलत्रात) के शिष्य अर्य्य सन्धि (आर्य सन्धि) के ग्रहणके लिये उचेनगरि (उच्चनागरी) शाखाके अर्य्य बलत्रत (आर्य बलत्रात) की शिष्या, जयाने सब जीवोंके कल्याण और सुखके लिये वर्धमानकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा की । यह जया नवहस्तीकी पुत्री, ग्रहसेनकी बहू तथा शिवसेन, देवसेन और शिवदेव इन तीन भाइयोंकी माँ थी ।

[EI, 11, n° XIV, n° 34]

३७

मथुरा—प्राकृत ।

[हुविष्क वर्ष २९]

अ. महाराज........ष्कस सं. २० ९ हे २ दि ३० अस क्षुणे भगवतो वर्धमानस प्रति [मा] प्रतिष्ठापिता **ग्रहह[थ]**स्य धितर सुखिताये **बोधिनदि** [ये]

ब. कुटुंविनिये **वारणे** गणे **पुष्यमित्रीये** कुले गणिस अर्य [**दत्तस्य** शिष्यस्य] **गह [प्र] कि [व]** स निर्वर्त [ना] अर[हं] तपुजाये ।

अनुवाद—महाराज ···ष्क के २९ वें वर्षकी शीतऋतुके दूसरे महीनेके तीसवें दिन, एक विवाहिता बोधिनदि (बोधिनन्दि ?) की आज्ञासे भगवान वर्धमानकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा की गई । बोधिनदि ग्रहहथि (ग्रहहस्ती) की प्यारी लड़की थी। यह प्रतिष्ठा ग्रहप्रकिव (?) की प्रेरणासे हुई । यह ग्रहप्रकिव आर्य दत्तके जो वारण गण और पुश्यमित्रीय (पुष्यमित्रीय) कुलके थे, शिष्य थे।

[El, I, n° XLIII, n° 6]

३८

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[संभवतः हुविष्क वर्ष २९]

अ. १. एकुनती [श] ब. १. अ [र] [ह] तो सं. १.....

२. वा– –   २. [ह] रबल   २ प्रतिस– –

द. १. स्ध म-र- स्य देव [पु] त्रस्य [हु] क्षस्य

२. [वा] सि [क] नगदतस्य शिषो मि [ग क] ··· ो स– –

[इस खण्ड-लेखका ठीक ठीक अनुवाद नहीं दिया जा सकता । इतना निश्चित है कि द. १. २. पंक्तियाँ हमें महाराज देवपुत्र हुक्ष (हुष्क या हुविष्क) और एक भिक्षु नगदत्त (नागदत्त) का नाम बताती हैं। यह भी हो सकता है कि यह लेख द. १ से शुरू हुआ हो, क्योंकि उस पंक्तिमें 'स्ध', 'सिद्ध' का स्थानीय मालूम पड़ता है, तथा उसमें राजाका भी नाम है। इसकी धारा अ. १ हो सकती है । २९ वां वर्ष हुविष्कके राज्यमें आयेगा।

[El, II, n° XIV, n° 26]

३९

मथुरा—संस्कृत—भग्न।

[काल लुप्त-संभवतः हुविष्कका २९ वां वर्ष]

········ [व] पुत्रस्य हुविष्कस्य स ····[1]

---

१ 'देवपुत्रस्य' और 'सवत्सरे' पढो।

अनुवाद—... देवपुत्र हुविष्कके ...... वर्षमें ...

[El II, n° XIV n° 25]

४०

मथुरा—प्राकृत ।

[वर्ष ३१ हुविष्ककाल]

अ-स ३० १ व १ दि १० अस्म क्षुणे

व. १.....यातो गणतो [अ]र्य्य वेरितो शाखतो [ठा] णियातो कुलातो वह [तो] । कुटुम्बिणिये [ग्र] ह

२. .... [अर्य]–दासस्य निवर्तना बुद्धिस्य धितु देविलस्य शिरिये दाणं ।

[ऊपरके शिलालेखका ठीक क्रम, जी. बूल्हरकी सम्मतिमें, इस तरह है:—]

[कोट्टि]यातो गण [तो] अर्य्यवेरितो शाखतो [ठा]णियातो कुलातो वह [तो] (?) [गणिस्य] अर्य [गो] दासस्य निवर्तना बुद्धिस्य धितु देविलस्य कुटुम्बिणिये ग्रहशिरिये दाणं ॥

अनुवाद—३१ वें वर्षकी वर्षाऋतुके पहले महीनेके १० वें दिन, बुद्धिकी पुत्री (तथा) देविलकी पत्नी गृहशिरि (गृहश्री)ने, कोट्टिय गण, अर्य्य वेरि (आर्य वज्री) शाखा, ठाणिय (स्थानीय) कुलके [गणी] आर्य गोदासके आदेशसे दान किया ।

[El, II, n° XIV, n° 15]

४१

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क काल] वर्ष ३२

अ. १. सिद्धम्। सव [त्स] रे ३० २ हेमन्तमासे ४ दिवसे २ वारणातो गणा····यातो [कु] ० ?[१]

२. ·····································

ब. १. –णि **अर्यनन्दिकस्य** निर्व्वर्त्तना **जितामित्रय**[रितु] **नन्दिस्य** धीतु **बुद्धिस्य** कुटुम्बिनिये प्रा—[२]

तारिकस्य—नी ि – प्य मातु गन्धिकस्य अरहन्तप्रतिमा सर्व्वतोभद्रिका।

अनुवाद—सिद्धि हो। ३२ वें वर्षकी शीतऋतुके चौथे महीनेके दूसरे दिन, रितुनन्दि (ऋतुनन्दि) की पुत्री, बुद्धिकी पत्नी तथा गंधिककी माँ ···जितामित्राने, वारण गण ··य कुल···अर्य-नन्दिक (आर्यनन्दिक) के आदेशसे एक अर्हन्तकी सर्वतोभद्रिका प्रतिमाकी प्रतिष्ठापना की।

[EI, II, n° XIV, n° 16]

४२

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क वर्ष ३५]

अ. १. [सिद्धं]। सं ३० [५] व ३ दि १० अस्य [ा] पूर्व्वायां कोट्टियातो गणतो [स्थानि] या [तो] कु—

ब. १. वइरातो श [ा] ख [ा]तो शिरिकातो सं[भो]कातो अर्य्य-**बलदिनस्य** शिशिनि **कुमरमि[त]**

---

१ संभवतः 'गणातो हट्टियातो' पढ़ो। २ सभवतः 'प्रातारिकस्य' पढ़ना चाहिये।

२. तस्य पुत्रो कुम[ा]रभटि गंधिको तस····नं प्रतिमा वर्धमानस्य सशितमखित [बो] धित

स. १. अ [र्य्य]

२. कुमार-

३. मित्रा-

४. ये-

द. १. र्व्व

२. [त] न [।।]

सारांश—आर्य बलदिन (बलदत्त) की शिष्या कुमरमित्रा (कुमारमित्रा) थी। वह कोट्टिय गण, स्थानीय कुल, वइरा शाखा (तथा) शिरिक संभोक (संभोग) की थी। उसका पुत्र कुमारभटि गन्धिक (तेल, इत्रका व्यापार करनेवाला) था। उसने तीक्ष्ण, उज्वल, प्रबुद्ध कुमारमित्राके आदेशसे वर्धमानकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा की।

[EI, I, n° XLIII, n° 7]

४३

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क संवत् ३९—हस्तिस्तम्भ]

१. महाराजस्य देवपुत्रस्य हुविष्कस्य सं० ३९

२. हे ३ दि० ११ एतय पुर्व्वये नन्दि विशाल

३. प्रतिष्ठपितो सिवदास श्रेष्ठिपुत्रेण श्रेष्ठिना

४. अर्य्येन रुद्रदासेन अरहनतं पुजाये

अनुवाद—देवपुत्र महाराज हुविष्कके राज्यमें, सं० ३९ की शीतऋतुके तीसरे महीनेके ११ वें दिन, यह विशाल नन्दी शिवदास श्रेष्ठीके पुत्र आर्य श्रेष्ठी रुद्रदासने अर्हन्तोंकी पूजाके लिये बनवाया (१८ ई० पूर्व)।

[A Cunningham, Reports, III, p. 32-33, n° 9.]

४४

मथुरा—प्राकृत ।

[हुविष्क वर्ष ४०]

अ. १.—४०—हे—दि १०

ब. १. ए [त] स्य पू [र्व्वा] य वरणतो ग [ण]-

स. १. तो आर्य्य हटिकियतो कुलतो

द. १. वजनगरित[ो] श [ा] ख[ा] त [ो] शि [रि] यत [ो]

अ. २.— — [ग] तो [द] तिस्य शिशिनिये

ब. २. **महन [न्दि]** स्य सढचरिये

स. २. **बल [वर्म]** ये **[नन्द]** ये च शिशिनिये

द. २. **अ [कक]** ये [निर्व्वर्त्तना]······

अ. ३.—[स्य] धीतु ग्रमि [क] **जयदेवस्य** वधूये

ब. ३.···मिको **जयनागस्य** धर्म्मपत्निये **सिहदता** [ये]

स. ३.···[लथभ] ो[1] ` दनं =····

अनुवाद—[सिद्धि हो ।] ४० वें [वर्षमें] शीत ऋतुके······महीनेके दसवें दिन, सिहदता (सिंहदत्ता) ने एक पाषाण-स्तम्भकी स्थापना की। यह सिंहदत्ता ग्रामिक जयनागकी धर्मपत्नी, जयदेव ग्रामिक (गाँवका मुखिया) की बहू (तथा) ·····की पुत्री थी। इस पाषाणस्तम्भकी स्थापना वारण गण, आर्य-हाटीकीय कुल, वज्रनागरी शाखा तथा शिरिय संभोगकी अकका (?) के आदेशसे हुई थी। यह अकका नन्दा और बलवर्माकी शिष्या, महनन्दि (महानन्दि) की श्राद्धचरी तथा दति (दत्ती) की शिष्या थी।

[El, 1, n° XLIII, n° 1]

---

1 पढ़ो 'शिलाथंभो'।

४५

मथुरा—प्राकृत—भग्न

[हुविष्क वर्ष ४४]

अ. सू—नमशर [स] तममहरजस्य **हुविक्षस्य** सव [त्स] रे ४० ४ हनगृ [स्य] मस ३ दिविस २ ए [त]—

व. [स्यां] पूर्वय [ा] ··· गणे अर्यचेटिये कुले हरीतमालकढिय [श] ाख ········ाचक [स्य] हगिनंदिअ शिसो ग ··· नागसेणस्य नि ····

अनुवाद—स्वस्ति। नमः। प्रतापी (?) महाराज हुविष्कके ४४ वें वर्षकी ग्रीष्म ऋतुके तीसरे महीनेके द्वितीय दिवस, [वारण] गण, अर्य्य चेटिय (आर्य-चेटिक) कुल, हरीतमालकढि (हरीतमालगढ़ी) शाखाके वाचक हगिनंदि (भगनन्दि ?) के शिष्य आर्य्य नागसेनके आदेशसे—

[EI, 1, n° XLIII, n° 9]

४६

मथुरा—प्राकृत—भग्न

[हुविष्क वर्ष ४५]

१. सिद्धम् सं ४० ५ व [३] दि १० [७] एतस्य पूर्व्व[ा]य-

·········· ये वुद्धिस्य वधुये **धर्म्मवृद्धिस्य**—

अनुवाद—सिद्धि हो। ४५ वें वर्षकी वर्षाऋतुके तीसरे (?) (महीने) के १७ वें दिन, धर्म्मवृद्धिकी······बुद्धिकी बहूने···················

[EI, 1, n° XLIII, n° 10]

४७

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क वर्ष ४७]

१. स ४० ७ गृ २ दि २० एतस्य पुर्वयं वरणे गणे पेतिवमि-

के कुले वाचकस्य **ओहनदिस्य** शिसस्य **सेनस्य** निवतना सत्रकस्य

२. पुषस्य वधुये गिह···[कुटिम्बिनि]···[पुष] दिन [स्य] [मातु] ···· यं

अनुवाद—४७ वें वर्ष की ग्रीष्मऋतुके २ रे महीनेके २० वें दिन, वरण (वारण) गण, पेतिवमिक (प्रैतिवर्मिक) कुलके वाचक और ओह-नदि (ओघनन्दि) के शिष्य सेनकी प्रार्थनापर पुष (पुष्य) श्रावककी बहू, गिहकी गृहिणी, पुषदिन (पुष्पदत्त) की माँ,····की तरफसे [यह समर्पित किया गया]।

[El, 1, n° XLIV, n° 30]

४८

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[काल लुप्त, संभवतः वर्ष ४७]

१. सिद्धम् । महाराजस्य राजातिराजस्य·· ········

२. ओहनन्दिस्य शिष्येण से····न·········ि—[१]

अनुवाद—सिद्धि हो। महाराज, राजातिराज······ओहनन्दि (ओघ-नन्दि) के शिष्य सेनने·········

[El, II, n XIV, n° 27]

४९

मथुरा—संस्कृत।

[हुविष्क वर्ष ४७]

दानं देविलस्य दधिकर्णदेविकुलकस्य सं ४० ७ गृ० ४ दिवसे २९

अनुवाद—४७ वें वर्षकी ग्रीष्मऋतुके चौथे महीनेके २९ वें दिन, दधिकर्ण मन्दिर (या चैत्यालय) के पुजारी (या माली) देविलका दान।

[IA, XXXIII, p 102-103, n° 13]

---

१ 'सेनेन' पढ़ो।

५०

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[हुविष्क वर्ष ४८]

१. महाराजस्य **हुविष्कस्य** स ४० ८ हे ४ दि ५

२. **बमदासिये** कुल [`] उ [च] ो नागरिय शाखाया **धर**····

अनुवाद—महाराज हुविष्कके राज्यमें, ४८ वें वर्षकी शीतऋतुके चौथे महीनेके ५ वें दिन, ब्रह्मदासिक कुल, उच्चनागरी शाखाके धर ······

[IA, XXXIII, p 103, n° 14]

५१

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्ककाल वर्ष ५०]

१. पण ५० हेमतमासे प····

२. आर्य्यचेरस्य

३. ये **युधदिनस्य**

४. धित

५. पूपवुधिस्य····

[इस खण्ड-शिलालेखका पूरा अनुवाद संभव नहीं है। काल ५० वाँ वर्ष और शीतऋतुका पहला या पाँचवां महीना है।]

[El, II, n° XIV, n° 17]

५२

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[हुविष्कका ५० वां वर्ष]

१. –,– ५० (?) हे २ दि १ अस्य पुर्व्वय वरणतो गणतो अय्यभिस्त कुलतो [स] –

२. ग्वतो **शिरिग्रहतो** सभोगतो वहवो वचक च गणिनो च समदि [अ]····

३.····वस्य **दिनरस्य** शिशिनि अय्य **जिनदसि** पणति-धरितय शिशिनि अ·······

४. **घकरब**पणतिहरमसोपवसिनि **बुबुस्य** धित **रज्यवसुस्य**धर्म...[१]

५. [द] **विलस्य** मतु **विष्णु**[भ]वस्य पिदमहिक **विजय-शिरिये** दन वध········[२]

६. ··············· ·······

अनुवाद—५० वां वर्ष, शीतऋतुका दूसरा महीना, पहला दिन, इस दिन, वरण (वारण) गण, अय्यभिस्त (?) कुल, सं [कासिया] शाखा, शिरिग्रह (श्रीगृह) संभोगके महावाचक तथा गणि समदि···व दिनर की शिष्या अय्य-जिनदसि (आर्य जिनदासी) की आज्ञाको माननेवाली... अय्य घकरब (?) की आज्ञाको धारण करनेवाली विजयशिरि [विजयश्रीने] दानमें वध [मान] अर्थात् वर्धमान की प्रतिमा······। यह विजयश्री बुबुकी पुत्री, रज्यवसु (राज्यवसु) की धर्मपत्नी, देविलकी माँ (और) विष्णुभवकी नानी थी और इसने एक महीनेका उपवास किया था।

[El, II, n° XIV, n° 36]

५३

रामनगर—प्राकृत।

[काल ? वर्ष ५०]

वर्ष	राजा	स्थान	कहाँ	विशेषता
५०	—	रामनगर (अहिच्छत्र)	A S N-W-P-O, Annual report 1891-1892, p 3	दूसरा महीना, शीतऋतु, पहला दिन; ब्राह्मी लिपि

[JRAS, 1903, p 7–14, n° 40]

१ 'धर्मपत्नी' पढ़ो। २ 'वधमान प्रतिमा' या शायद 'प्रतिमा'।

५४

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क वर्ष ५२]

१. सिद्ध संवत्सर द्वापना ५० २ हेमन्त [मा] स प्रथ—दिवस पंचवीश २० ५ अस्म क्षुणे **क[ो]ट्टिया** तो गणात[ो]

२. **वेरा**तो शखतो **स्थानिकि**यातो कुलात[ो] **श्रीगृह**तो संभोगातो वाचकस्यार्य्य**घस्तुहस्तिस्य**

३. शिष्यो गणिस्यार्य्य**मंगुहस्तिस्य** पढचरो वाचको अर्य्य**दिवि**-तस्य निर्व्वर्तना शूरस्य श्रम-

४. णकपुत्रस्य गोट्टिकस्य लोहिकाकारकस्य दानं सर्व्वसत्वानं हितंसुखायास्तु।

अनुवाद—सिद्धि हो। ५२ वें वर्षके शीतऋतुके पहले महीनेके २५ वें दिन, कोट्टिय गण, वेरा (वज्रा) शाखा, स्थानिकिय कुल (तथा) श्रीगृह संभोगके वाचक आर्य्य घस्तुहस्तिके शिष्य और गणी आर्य मङ्गुहस्ति-के श्राद्धचर ऐसे वाचक अर्य्यदिवितके आदेशसे श्रमणकके पुत्र, शूर लुहार गोट्टिकने दान दिया।

[EI, II, n° XIV, n° 18]

५५

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क वर्ष ५४]

१.—धम्। सत्र ५० ४ हेमंतमासे चतुर्थे ४ दिवसे १० अ—

२. स्य पुर्व्वाया **कोट्टिया**तो [ग] णातो **स्थानि [य]**तो कुलातो

३. **वैरा**तो शाखातो **श्रीगृह** [ा] तो संभोगातो वाचकस्यार्य्य-

४. [ह] **स्तहस्तिस्य** शिष्यो गणिस्य अर्य्य**माघहस्तिस्य** श्रद्धचरो वाचकस्य अ-

५. र्य्यदेवस्य निर्व्वर्त्तने **गोवस्य सीह**पुत्रस्य लोहिककारुकस्य दानं

६. सर्व्वसत्वानां हितसुखा एकसरस्वती प्रतीष्ठाविता अवतले रङ्गान[र्त्तन] ो

७. मे [॥]

अनुवाद—सिद्धि हो। ५४ वें वर्षकी शीतऋतुके चौथे महीनेके (शुक्ल-पक्षके) १० वें दिन, वाचक आर्यदेवकी प्रेरणासे सीहके पुत्र गोव लुहारके दानरूपमें एक सरस्वतीकी (प्रतिमा) प्रतिष्ठापित की गई। आर्य्य देव कोट्टियगण, स्थानिय कुल, वैरा शाखा तथा श्रीगृहसंभोगके वाचक आर्य्य हस्तहस्तिके शिष्य गणि आर्य्य माघहस्तिके श्राद्धचर थे। अवतलमें मेरा रङ्गशालीय नृत्य (?)।

[El, 1, n° XLIII, n° 21]

५६

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क वर्ष ६०]

अ. सिद्धम्। म [हा] रा [ज] स्य र [ाजा] तिराजस्य देवपुत्रस्य **हुवष्कस्य** सं ४० (६०?) हेमन्तमासे ४ दि० १० एतस्या पूर्व्वायां **कोट्टिये** गणे **स्थानिकीये** कुले अय्य[**वेरि**] याण शाखाया वाच-कस्यार्य्य**वृद्धहस्ति** [स्य]

ब. शिष्यस्य गणिस्य आर्य्यख[**र्ण**]स्य पुय्यम[न] ······[स्य] ···[व] **तकस्य** [क]–**सकस्य** कुटुम्बिनीये दत्ताये–नधर्म्मो[1] महा-भोगताय प्रीयताम्भगवानृषभश्रीः।

अनुवाद—सिद्धि हो। महाराज, राजातिराज, देवपुत्र हुविष्कके ६० वें वर्षकी शीतऋतुके चौथे महीनेके १० वें दिन, कोट्टियगण, स्थानिकीय कुल (तथा) अर्य्य वेरियों (आर्य-वज्रके अनुयायियों) की शाखाके वाचक आर्य वृद्धहस्तिके शिष्य, गणि आर्य्य खर्णके आदेशसे···वतके निवासी

---

१ 'दानधर्मो' पढ़ो।

पसककी पत्नी दत्ताने महाभोगता (महासुख)के लिये यह दानधर्म किया। भगवान् ऋषभदेव प्रसन्न होवें।

[EI, I, n° XLIII, n° 8]

५७

मथुरा—प्राकृत।

[हु० संवत् ६२]

वाचकस्य अर्य-ककसघस्तस्य शिष्या आतपिको ग्रहवलस्य निर्वर्तन........

अनुवाद—वाचक आर्य ककसघस्त (कर्कशघर्षित)के शिष्य आतपिक ग्रहवलके आदेशसे।

इस शिलालेखसे मालूम पड़ता है कि किसी मुनिके आदेशसे जैन श्राविका वैहिकाने एक प्रतिमाका दान किया।

[1A, XXXIII, p. 105-106, n° 19]

५८

मथुरा—प्राकृत।

[हु० वर्ष ६२]

१. सिद्ध। स ६० २ व २ दि ५ एतस्य पुवय वाचकस्य आयकर्कुहस्थ [स]

२. वारणगणियस शिषो ग्रहबलो आतपिको तस निवर्तना।

अनुवाद—सिद्धि हो। वर्ष ६२, वर्षाऋतुका २ रा महीना, दिन ५, इस दिन, वारणगणके वाचक आय-कर्कुहस्थ (आर्य कर्कशघर्षित) के शिष्य आतपिक ग्रहबल थे। उनकी प्रेरणासे.........

[EI, II, n° XIV, n° 19]

५९

मथुरा—प्राकृत।

[ ] वर्ष ७९

अ. १. सं. ७० ९-वं ४ दि २० एतस्या पुर्व्वायं कोट्टिये गणे वइरायां शाखायां.........

२. को अयवृधहस्ति अरहतो णन्दि [आ] वर्तस प्रतिमं निर्वर्तयति।

ब.········भार्य्यये श्राविकाये [दिनाये] दानं प्रतिमा वोद्दे थुपे देवनिर्मिते प्र········[1]

अनुवाद—वर्ष ७९, वर्षाऋतुका चौथा महीना, २० वां दिन, इस दिन, कोट्टियगण (तथा) वइरा (वज्रा) शाखा के वाचक अय-वृधहस्ति (आर्य वृद्धहस्ति) ने दीना [दत्ता] श्राविकाको, जो··· · की भार्या थी, एक अर्हत् णन्दिआवर्त्त (नन्द्यावर्त्त)[2] की प्रतिमाके निर्माणके लिए कहा। दीनाकी यह प्रतिमा देवनिर्मित वोद्द स्तूपपर प्रतिष्ठित हुई।

[El, II, n° XIV, n° 20]

६०

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[हुविष्क वर्ष ८०]

१. [सिध] महरजस्य सं ८० हण व १ दि १२ एतस पूर्व्वाया········

२. धितु संघनधि [स्य] वधुये बलस्य········

अनुवाद—[स्वस्ति।] महाराज वासुदेवके ८० वें वर्षमें, वर्षाऋतुके १ ले महीनेके १२ वें दिन,·········की पुत्री, संघनधि (?) की बहू, बलकी ··············(अपूर्ण).

[El, n° XLIII, n° 24]

६१

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[ ] वर्ष ८१

१. स ८० १ व १ दि ६ एतस्य पुवाय [अ] यिकाजीवाये अंते-

२. वासिकिनिये दताये निवतना। [ग्र) हशिरिये····

---

१ 'प्रतिष्ठापिता'। २ नन्द्यावर्त्त जिसका चिह्न है ऐसे १८ वें तीर्थङ्कर अर्हनाथ भगवान्की प्रतिमा।

अनुवाद—वर्ष ८१, वर्षाऋतुका १ ला महीना, ६ ठा दिन, इस दिन, अयिका-जीवा (आर्यिकाजीवा) की शिष्या दत्ताकी प्रार्थनापर ग्रहशिरि (ग्रहश्री) ··· ।

[El, II, n° XIV, n° 21]

६२

मथुरा—प्राकृत ।

[वासुदेव] वर्ष ८३

१. सिद्धं महाराजस्य **वासुदेवस्य** सं ८० ३ गृ २ दि १० ६ एतस्य पूर्व्वये **सेनस्य**

२. [धि] तु **दत्तस्य** वधुये **ब्य**····**च**····स्य गन्धिकस्य कुटुम्बिनिये **जिनदासिय** प्रातिमा ध [र्मद]ानं

अनुवाद—सिद्धि हो । महाराज वासुदेवके राज्यमें ८३ वें वर्षकी ग्रीष्मऋतुके दूसरे महीनेके १६ वें दिन, सेनकी पुत्री, दत्तकी बहू , गन्धिक (तेल, इत्र वेचनेवाले) ब्य-च···की पत्नी जिनदासीके पवित्रदानमें एक प्रतिमा ··· ··· ।

[1A, XXXIII, p. 107, n° 21]

६३

मथुरा—प्राकृत ।

[हुविष्क वर्ष ८६]

१. सं ८० ६ हे १ दि १० २ **दसस्य** धितु **पृयस्य** कुटुविनिये

२. ···· [क] तो कुलतो **अयस** [**क्क**] **मि** [क] य शिशिनिय **अयवसुल** [ये] नि [व] तने [॥]

अनुवाद—८६ वें वर्षकी शीतऋतुके पहले महीनेके १२वें दिन, दस (दास) की पुत्री, पृय (प्रिय) की पत्नी ······ का दान अर्पित किया गया। यह दान [मेहि] क कुलकी अर्य सक्कमिकाकी शिष्या अर्य्य वसुलाके कहनेसे हुआ।

[El, I, n° XLIII, n° 12]

६४

मथुरा—प्राकृत।

[हुविष्क वर्ष ८७]

[सं ८० ७ ?] गृ १ दि [२० ?] अ [स्मि] क्षुणे उच्चेनागर-
स्यार्य्यकुमारनन्दिशिष्यस्य मित्रस्य..........

अनुवाद—८७ (?) वें वर्षमें ग्रीष्मऋतुके १ ले महीनेके २० (?) वें दिन, उच्चनागरके, कुमारनन्दीके शिष्य, मित्रके......

[El, 1, n° XLIII, n° 13]

६५

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[वासुदेव] वर्ष ८७

१. सिद्ध। महाराजस्य राजातिराजस्य शाहि=वासुदेवस्य
२. सं ८० ७ हे २ दि ३० एतस्या पुर्वाया.........

अनुवाद—सिद्धि हो। महाराज राजातिराज शाहि वासुदेवके ८७ वें वर्षकी शीतऋतुके २ रे महीनेके तीसवें दिन, ..."

[1A, XXXIII, p. 108, n° 22]

६६

मथुरा—प्राकृत—भग्न

[सं० ९०]

१. सव [९० व] .... टुबनिए दिनस्य वधूय
२. को ... तो ग [णा] तो प—व [ह]–[क] तो कुलातो
मझमातो शाखा [तो]....सनिकय भतिबलाए भिनि

[यह लेख बहुत टूटा हुआ है। इसमें खास कामकी चीज मझमा शाखा और प-वह-क कुलका उल्लेख है। प-वहक कुल जैन परम्पराका प्रश्नवाहनक या पण्हवाहणय कुल है। वर्ष (सं) ९० है]

[El, 11, n° XIV, n° 22]

अनुवाद—वर्ष ९८ की शीतऋतुके १ ले महीनेके ५ वें दिन, कोट्टिय गण, उच्चनगरी (उच्चानागरी) [शाखा] ………

[El, II, n° XIV, n° 24]

७१

मथुरा—प्राकृत।

[विना कालनिर्देशका]

१. नमो अरहंतानं सिहकस वानिकस पुत्रेण कोशिकिपुत्रेण

२. सिहनादिकेन आयागपटो प्रतियापितो आरहंतपुजाये [॥]

अनुवाद—अर्हन्तोंको नमस्कार हो। वानिक सिहक (सिंहक) के पुत्र तथा किसी कोशिकी (कौशिकी माँ) के पुत्र सिहनादिक (सिंह-नन्दिक?) के द्वारा एक आयागपटकी प्रतिष्ठा अर्हन्तोंकी पूजाके लिये की गई।

[El, II, n° XIV, n° 30]

७२

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[विना कालनिर्देशका]

नमो अरहंताना शिवघो [षक]स भरि [या]····ना····ना····

अनुवाद—अर्हन्तोंको नमस्कार। शिवघोषककी भार्या…………

[El, II, n° XIV, n° 31]

७३

मथुरा—प्राकृत।

[विना कालनिर्देशका]

पं. १. नमो अरहंतानं [मल]····णस धितु भद्रयशस वधुये भद्रनदिस भयाये

२. अ [चला]ये आ[या]गपटो प्रतियापितो अरहतपुजाये।

अनुवाद—अर्हन्तोंको नमस्कार। मल—णकी बेटी, भद्रयश (भद्रयशस) की बहू, तथा भद्रनदि (भद्रनन्दिन्) की पत्नी अचलाने अर्हन्तोंकी पूजाके लिये एक आयागपट स्थापित किया।

[El, II, n° XIV, n° 32]

७४

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[काल लुप्त]

—शे. एत [स्या] पूर्व्वाया कोट्टियातो गणातो········

अनुवाद—उक्त समय पर, कोट्टियगणके·········

[El, 1, n° XLIII, n° 15]

७५

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[काल लुप्त]

पं. १.·······अरहंतानं वधमानस्य [क]लस्य धितु सिनविषुस्य भ [स्नि] न [ा] य

२.················[श] [ति] स्य नि[नत्र] तेन [||]

अनुवाद—शतिके आदेशसे सिनविषु (विष्णुषेण)की बहिन, कलकी पुत्रीका दान यह अर्हत् वर्धमानकी प्रतिमा है।

[El, 1, n° XLIII, n° 16]

७६

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[विना कालनिर्देशका]

वारणातो गणातो आर्यकनियसिकातो कुलातो ओद··········

अनुवाद—वारण गण, पूजनीय कनियसिक कुल, ओद···(शाखा) के

[El, 1, n° XLIII, n° 23]

७७

मथुरा—प्राकृत—भग्न ।

[काल लुप्त]

………र्षमासे १ दीवसे ३० अस्मि क्षु… …[१]

अनुवाद—………वर्षाऋतुके पहले महीनेके ३० वें दिन, उस अवसर (या, उत्सव) पर……

[El, 1, n° XLIII, n° 25]

७८

मथुरा—प्राकृत—भग्न ।

[विना कालनिर्देशका]

दासस्य पुत्रो चीरि तस्य दत्तिः [॥]

अनुवाद—दासके पुत्र चीरिका दान ।

[El, 1. n° XLIII, n° 26]

७९

मथुरा—प्राकृत—भग्न ।

[विना कालनिर्देशका]

पं. १. [प्रतिमा] वधमान [स्य] प्रतिथापिता

२. …ठानियातो—ल…………त आर्यग]………

अनुवाद—ठानिय (स्थानीय) शाखाके………वधमान (वर्धमान)-की प्रतिमा प्रतिष्ठापित की गई ।…

[El,I, n° XLIII, n° 27]

---

१ पढ़ो 'वर्षमासे' और 'क्षुणे' ।

८०

मथुरा—प्राकृत—भग्न ।

[विना कालनिर्देशका]

पं. १. [सि] द्ध नमो अरहताण····द्धन[1] **वारणे** गणे **अयहाट्टि** [ये][2]

२. कुले **वजनागरिया** शाखाया **अर्यशिरिकिये** संभो········[3]

अनुवाद—सिद्धि हो । अर्हन्तोंको नमस्कार । [सिद्धोंको नमस्कार] । वारण गण, अय हाट्टिय (आर्य हालीय)कुल, वजनागरि (वज्रनागरी) शाखा, अर्य-शिरिकिय संभोगके······

[El, 1, XLIV, n° 34]

८१

मथुरा—प्राकृत ।

[विना कालनिर्देशका]

पं. १. **[ते]–रुसनंदिक**स पुत्रेन **नंदिघोषेन** [ते] वणिकेन अ····त····अले········

२. णानं मंदिरे [आ] यागपटा प्रतिथापित [ा]···········

अनुवाद—ते–रुस (?)-नंदिकके पुत्र, तेवणिक (त्रैवर्णिक) नंदिघोषके द्वारा आयागपट ······के मन्दिरमें स्थापित की गई ।

[El, 1, XLIV, n° 35]

८२

मथुरा—प्राकृत ।

[विना कालनिर्देशका]

अ. ··· भगवतो उसभस **वारणे** गणे **नाडिके** कुले ···· ····खा [यं] ····

---

१ पढ़ो 'नमो सिद्धान' । २ संभवत· 'होळिये' । ३ पढ़ो 'संभोगे' ।

ब. ढुकस वायकस सिसिनिए सादिताए नि ····

अनुवाद—भगवान् वृषभ (उसभ) को नमस्कार हो। वारण गण, नाडिक कुल तथा············के वाचक······ढुककी शिष्या सादिताके आदेशसे············

[EI, II, n° XIV, n° 28]

८३

मथुरा—प्राकृत।

[विना कालनिर्देशका]

स्थ [।]निकिये कुले, गनिस्य उग्गहिनिय शिषो वाचको घोषको आर्हतो पर्श्वस्य प्रतिमा····

अनुवाद—"स्थानिकिय (कीय) कुलके गणि (गणिन्) उग्गहिनिके शिष्य वाचक घोषकने एक अर्हत् पार्श्वकी प्रतिमा···

[EI, II, n° XIV, n° 29]

८४

मथुरा—प्राकृत—भग्न।

[विना कालनिर्देशका]

अ. वर्धमानपटिमा वजरनधस्य धिता वाधिशिव···

१.—ि— स्य— कुटीविनि दिनाये दाति वडिम [शि] ये····

२.················

अनुवाद-"वजरनध (वज्रनन्दिन्) की पुत्री, वाधिशिव (वृद्धिशिव ?) की बहू, ि ··· की पत्नी दिना (दत्ता) के दानके रूपमें एक वर्धमानकी प्रतिमा ··· ··· वडिमशिके······

[EI, II, n° XIV, n° 33]

८५

मथुरा—प्राकृत—भग्न।
[विना कालनिर्देशका]

अ. तिये निर्वर्तना

ब. १. तो शखतो **शिरिक**तो संभोकतो अर्य्य

३. .... लनस्य मतु हि [स्त].........

२. ि—धराये निवतना **शिवद [त]**

[EI, II, n° XIV, n° 35]

[नोट—'निर्वर्तना' और 'निवतना' इन दो शब्दोंके एक ही शिलालेखमें आ जानेसे एक ही शिलालेखके दो खण्ड मालूम पड़ते हैं और वे सम्बद्ध अर्थको व्यक्त नहीं करते हैं।]

८६

मथुरा—प्राकृत।
(विना कालनिर्देशका)

१.................ये **मोगलिपुतस पुफकस** भयाये

२. असाये पसादो

अनुवाद—किसी मोगली (माँ मौद्गलीविशेष) के पुत्र, पुफक (पुष्पक) की पत्नी, असा (अश्वा ?) का दान।

[IA, XXXIII, p. 151, n° 28.]

८७

राजगिरि—संस्कृत।

[ ]

T. Bloch के आर्कीओलोजिकल सर्वे, वङ्गाल सार्किल, वार्षिक रिपोर्ट १९०२, पृ० १६, विश्लेषणमें इस शिलालेखका उल्लेख है। मूलका पता नहीं है।

[AS, Bengal circle, Annual report 1902, p. 16. a.]

८८

मथुरा—संस्कृत—भग्न।

[सं० २९९]

१. नमस्-सर्वसिद्धाना अरहन्ताना । महाराजस्य रजातिराजस्य संवच्छरशते द [ु] [तिये नव (?) -नवत्यधिके ।]

२. २०० ९० ९ (?) हेमन्तमासे २ दिवसे १ आरहातो महावीरस्य प्रातिमा

३.····स्य ओखारिकाये धितु उझतिकाये च ओखाये श्राविका भगिनिय [ ]··········

४.········शरिकस्य शिवदिनास्य च एतैः आराहातायताने स्थापित [।]··········

५.············देवकुलं च ।

अनुवाद—सब सिद्धों और अर्हन्तोंको नमस्कार हो। महाराज और राजातिराजके (९९ से अधिक) दूसरी शताब्दिमें, २९९ (?), शीतऋतुके दूसरे महीनेके पहले दिन—भगवान महावीरकी प्रतिमा अर्हन्मन्दिरमें ······ के द्वारा तथा······की पुत्री,···ओखरिकाकी···उज्झतिका द्वारा, ···श्राविका-भगिनी ओखाके द्वारा, तथा शिरिक और शिवदिन्ना इनके द्वारा स्थापित की गई···साथमें एक जिनमन्दिर भी।

[G. Buhler, J R A S, 1896, p 578–581]

८९

मथुरा—संस्कृत – भग्न

[गुप्तकाल? वर्ष ५७]

संवत्सरे सप्तपञ्चाश ५० ७ हेमन्यत्रिती····[1]

—रसे [दि] वसे त्रयोदशे अ-पूर्व्वायां····

---

१ 'हेमन्त' और 'तृतीय' या 'तृतीये' पढ़ो।

अनुवाद—५७ वें वर्ष, शीतऋतुकी तीसरे महीनेके १२ वें दिन, इसदिन.........

[EI, II, n° XIV, n° 38]

९०

नोणमङ्गल—संस्कृत

गुप्तकालसे पहिले, संभवतः ३७० ई० का

[नोणमंगलमें ताम्र-पट्टिकाओंपर]

[१ ब] स्वस्ति नमस् सर्वज्ञाय ॥ जितं भगवता गत-घन-गगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्-जाह्नवेय-कुलामल-व्योमावभासन-भास्करस्य स्व-भुज-जवज-जय-जनित-सुजन-जनपदस्य दारुणारिगण-विदारण-रणोपलब्ध-व्रण-विभूषण-भूषितस्य काण्वायनसगोत्रस्य श्रीमत्**कोङ्गुणिवर्म-धर्म-महाधिराजस्य** पुत्रस्य पितुरन्वागत-गुण-युक्तस्य विद्या-विनय-विहित-वृत्तस्य

[२ अ] सम्यक्-प्रजा-पालन-मात्राधिगत-राज्य-प्रयोजनस्य विद्वत्कवि-काञ्चन-निकषोपल-भूतस्य विशेपतोऽप्यनवशेषस्य नीति-शास्त्रस्य वक्तृ-प्रयोक्तृकुशलस्य सुविभक्त-भक्त-भृत्यजनस्य **दत्तक-सूत्र-वृत्ति-प्रणेतुः श्रीमन्माधववर्म-धर्म-महाधिराजस्य** पुत्रस्य पितृ-पैतामह-गुणयुक्तस्य अनेक-चतुर्दन्त-युद्धावाप्त-चतुरुदधि-सलिलास्वादित-यशसः समद-द्विर-दतुरगारोहणातिशयोत्पन्न-कर्म्मणः श्रीमद् **हरिवर्म्म-महाधिराजस्य** पुत्रस्य गुरु-गो-ब्राह्मण-पूजकस्य नारायण-चरणानुध्या

[२ ब] तस्य श्रीम**द्विष्णुगोप-महाधिराजस्य** पुत्रेण पितुरन्वागत-गुण-युक्तेन त्र्यम्बकचरणाम्भोरुहराजः(ज)पवित्रीकृतोत्तमाङ्गेन व्यायामो-दवृत्त-पीन-कठिनभुजद्वयेन स्व-भुज-बल-पराक्रम-क्रय-क्रीत-राज्येन क्षुत्-

क्षामोष्ठ-पिसिताशनप्रीतिकर-निसित-धारासिना श्रीमता **माधववर्म्म-महाधिराजेन** आत्मनःश्रेयसे प्रवर्द्धमानविपुलैश्वर्य्ये त्रयोदशे संवत्सरे फाल्गुने मासे शुक्ल-पक्षे तिथौ पञ्चम्यां श्रीमद्-वीर-देव-शासनाम्बरावभासन-सहस्रकरस्य आचार्य्य**वीर-देवस्य**

[३ अ] निज-कृतान्तपर-राद्धान्त-प्रवीणस्य उपदेशनात् **मुदुकोत्तूर**-विषये **पेब्बोलल्**-ग्रामे अर्हदायतनाय मूलसंघानुष्ठिताय महा-तटाकस्य अधस्तात् द्वादश-खण्डुकावापमात्र-क्षेत्रं च तोट्ट-क्षेत्रं च पटु-क्षेत्रं च **कुमारपुर**-ग्रामश्च एतत्सर्वं स-सर्व्व-परिहार-क्रमेणाद्भिर्दत्तः योऽस्य लोभात् प्रमादाद्वापि हर्त्ता स पञ्च-महा-पातक-संयुक्तो भवति अपि चात्र मनुगीता[:] श्लोका[:]

स्व-दत्तां पर-दत्ता वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्ठि-वर्ष-सहस्राणि घोरे तमसि वर्तते ॥

(अन्य हमेशाके अन्तिम श्लोक)

[इस लेखमें गंगकुलके राजाओंकी परम्परा—कोङ्गणिवर्मा, माधववर्मा, हरिवर्मा, विष्णुगोप और माधववर्मा—देकर यह बताया है कि अन्तिम राजाने अपने राज्यके १३ वें वर्षमें, फाल्गुनसुदी पंचमीको, आचार्य वीरदेवकी सम्मतिसे, मुदुकोत्तूर-देशके पेब्बोवल् गांवमें मूलसंघद्वारा प्रतिष्ठापित जिनालयमें (उक्त) भूमि और कुमारपुर गांव दानमें दिये।]

[EC, X, Malur tl., n° 73.]

९१

उदयगिरि (सांची के निकट)-संस्कृत ।

[गुप्तकाल १०६= ई. सं० ४२६]

Corrected transcript of the facsimile.

[१] नमः सिद्धेभ्यः[॥]

श्रीसंयुतानां गुणतोयधीनाम्
गुप्तान्वयानां नृपसत्तमानाम् [।]

[२] राज्ये कुलस्याभिविवर्द्धमाने
षड्भिर्य्युते वर्षशतेऽथ मासे [।।] १.
सुकार्त्तिके बहुलदिनेऽथ पञ्चमे

[३] गुहामुखे स्फुटविकटोत्कटामिमां [।]
जितद्विषो जिनवर**पार्श्व**संज्ञिकाम्
जिनाकृती शमदमवान

[४] चीकरत् [।।] २. **आचार्य-भद्रा**न्वयभूषणस्य
शिष्यो ह्यसावार्य्यकुलोद्गतस्य [।]
आचार्य-**गोश**

[५]र्म्म मुनेस्सुतस्तु पद्मावत [स्या]**श्वपते**र्भटस्य [।।] ३.
परैरजेयस्य रिपुघ्नमानिनस्
स **सङ्घ**

[६] **ल**स्येत्यभिविश्रुतो भुवि [।] स्वसंज्ञया **शंकर**नामशब्दितो
विधानयुक्तं यतिमार्ग्गमास्थितः [।।] ४.
स उत्तराणां सदृशे गुरूणां
उदग्दिशादेशवरे प्रसूतः [।]

[८] क्षयाय कर्म्मारिगणस्य धीमान्
यदत्र पुण्यं तदपाससर्ज्ज [।।] ५.

[इस शिलालेखमें शम-दमवाले किसी व्यक्तिकेद्वारा पार्श्वनाथ जिनेन्द्रकी प्रतिमाकी कार्तिक वदी पचमीके दिन स्थापनाकी बात है। यह प्रतिमा किसी गुफाके द्वारपर खड़ी की गई थी। इस प्रतिमाकी स्थापना करने वाला या उसको खड़ा करनेवाला आचार्य गोशर्माका शिष्य था। ये गोशर्मा आचार्य भद्रके वंशमें हुए थे, इनकी परम्परा आर्यकुलकी थी और अश्वपति योद्धाके लड़के थे। ये अश्वपति सङ्कल (या सिंहल) के नामसे प्रसिद्ध थे और इन्होंने जिनदीक्षा लेनेके बाद अपना नाम शंकर रक्खा था।]

[इण्डियन एण्टीक्वेरी, जिल्द ११, पृ० ३१०]

९२

मथुरा—संस्कृत।

[गुप्तकाल, वर्ष ११३]

१. सिद्धम् । परमभट्टारकमाहाराजाधिराज **श्रीकुमारगुप्तस्य** विजयराज्यसं [१०० १०] ३ क.........न्तमा.....[दि]—स २० अस्यां ५ [पूर्व्वाया] कोट्टिया गणा-

२. द्विद्याधरी [तो] शाखातो **दतिलाचार्य्य**प्रज्ञपिताये **शामाढ्याये** भट्टिभवस्य धीतु ग्रहमित्रपालि [त] प्रा [ता] रिकस्य कुटुम्बिनीये प्रतिमा प्रतिष्ठापिता ।

अनुवाद—सिद्धि हो। परमभट्टारक महाराजाधिराज श्रीकुमारगुप्तके विजयराज्यके ११३ वें वर्षमें, [शीतऋतु महीने] कार्तिकके २० वें दिन, कोट्टियगण (तथा) विद्याधरी शाखाके **दतिलाचार्य** (दत्तिलाचार्य) की आज्ञासे **शामाढ्य** (श्यामाढ्य) ने एक प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करवाई। श्यामाढ्य भट्टिभवकी बेटी (और) ग्रहमित्रपालित प्रावारिक (घाटी या नाविक) की पत्नी थी।

[EI, II, nº XIV, nº 39]

१३

कहायूँ—संस्कृत

[गुप्तकाल १४१ वां वर्ष=४६१ ई. स.]

सिद्धम् ।

[१] यस्योपस्थानभूमिर्नृपतिशतशिर:पातवातावधूता
[२] गुप्तानां वंशजस्य प्रविसृतयशसस्तस्य सर्व्वोत्तमर्द्धेः
[३] राज्ये शक्रोपमस्य क्षितिपशतपतेः **स्कन्दगुप्तस्य** शान्ते
[४] वर्षे त्रिंशद्दशैकोत्तरकशततमे ज्येष्ठमासि-प्रपन्ने ॥ १ ॥
[५] ख्यातेऽस्मिन् ग्रामरत्ने **ककुभ** इति जनैस्साधुसंसर्गपूते
[६] पुत्रो य**स्सोमिलस्य** प्रचुरगुणनिधे**र्भट्टिसोमो** महात्मा
[७] तत्सूनू**रुद्रसोम[:]** प्रथुलमतियशा **व्याघ्र** इत्यन्यसंज्ञो
[८] **मद्र**स्तस्यात्मजोऽभूद् द्विजगुरुयतिषु प्रायश. प्रीतिमान् यः ॥
[९] पुण्यस्कन्धं स चक्रे जगदिदमखिलं संसरद्वीक्ष्य भीतो
[१०] श्रेयोऽर्थं भूतभूत्यै पथि नियमवतामर्हतामादिकर्तॄन्
[११] पञ्चेन्द्रांस्थापयित्वा धरणिधरमयान् सन्निखातस्ततोऽयम्
[१२] शैलस्तम्भः सुचारुर्गिरिवरशिखराग्रोपमः कीर्त्तिकर्त्ता ॥ २ ॥

[इस शिलालेखमें, जो कि गुप्तकालके १४१ वें वर्षका है, बताया गया है कि किसी भद्र नामके व्यक्तिने, जिसकी कि वंशावली यहां उसके प्रपितामह सोमिल तक गिनाई है, अर्हन्तों (तीर्थंकरों)में मुख्य समझे जाने वाले, अर्थात् आदिनाथ, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्व, और महावीर, इन पांचोंकी प्रतिमाओंकी स्थापना करके इस स्तम्भको खड़ा किया। लेखकी ११ वीं पंक्तिके 'पञ्चेन्द्रान्' से इन्हीं पांच तीर्थङ्करोंसे मतलब है।]

[इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द १०, पृ० १२५–१२६]

९४

नोणमंगल—संस्कृत तथा कन्नड़।

[गुप्तकालसे पहिले, संभवतः ४२५ (?) ई० का]

[नोणमंगल (लक्कूर परगना) में, ध्वस्त जैन बस्तिके ताम्र-पत्रों पर[1]]

(१ व) स्वस्ति जितं भगवता गतघन-गगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज् **जाह्नवेय**-कुलामल-व्योमावभासन-भास्करस्य स्व-भुज-जव-ज-जय-जनित-सुजन-जनपदस्य दारुणारि-गण-विदारण-रणोपलब्ध-व्रण-विभूषण-भूषितस्य काण्वायनस-गोत्रस्य श्रीमत्**कोङ्गणिवर्म्म-धर्म्म-महाधिराजस्य** पुत्रस्य पितुरन्वागत-गुण-युक्तस्य विद्या-विनयविहित-वृत्तस्य सम्यक्-प्रजा-पालन-मात्राधिगत-राज्य-प्रयोजनस्य विद्वत्-कवि-काञ्चन-निकषो

[२ अ] पल-भूतस्य विशेष्यतोऽप्यनवशेषस्य नीति-शास्त्रस्य वक्तृ-प्रयोक्तृकुशलस्य सुविभक्त-भक्त-भृत्य-जनस्य दत्तक-सूत्र-वृत्ति-प्रणेतुः श्रीमन्**माधववर्म्म**-धर्म्म-महाधिराजस्य पुत्रस्य पितृ-पैतामह-गुण-युक्तस्य अनेक-चतुर्दन्त-युद्धावाप्त-चतुरुदधि-सलिलास्वादित-यशसः समद-द्विरद-तुरगारोहणातिशयोत्पन्न-कर्म्मणः धनुरभियोगस-म्पद्-विशेषस्य श्रीमद्-**हरिवर्म्म**-महाधिराजस्य पुत्रस्य गुरु-गो-ब्राह्मण-पूजकस्य नारायण-चरणानुध्यातस्य श्रीमद्**विष्णुगोप**-महाधिराजस्य पुत्रस्य पितुरन्वा

[२ व] गत-गुण-युक्तस्य त्र्यम्बक-चरणाम्भोरुह-रजः-पवि-त्रीकृतोत्तमाङ्गस्य व्यायामोद्वृत्त-पीन-कठिन-भुज-द्वयस्य स्वभुजबल-परा-

[1] ये ताम्रपत्र जमीनमें मिले हैं।

क्रम-क्रयक्रीत-राज्यस्य चिर-प्रनष्ट-देव-भोग-ब्रह्मदेय-नैक-सहस्र-विसर्गा-ग्रयण-कारिणः क्षुत्-क्षामोष्ट-पिसिताशन-प्रीतिकर-निशित-धारासेः कलि-युग-बलावमग्न-धर्म्मोद्धरण-नित्य-सन्नद्धस्य श्रीमतो **माधववर्म्म**-धर्म्म-महा-धिराजस्य पुत्रेण जननी-देवताङ्क-पर्य्यङ्क-तले-समधिगत-राज्य-विभव-विलासेन निज-प्रभावांशु-चक्रवालाखण्डित-शत्रु-नृपति-मण्डलेनाखण्ड

[३ अ] ल-विडम्बि-शौर्य्य-वीर्य्य-यशो-धाम-भूतेन गज-धुरि-हय-पृष्ठे कार्म्मुके चाद्वितीयेन ललना-नयन-भ्रमरावली-नित्यकृतानुयात्रेण प्रजा-परिपालन-कृत-परिकर-बन्धेन किं बहुना इदङ्कलि-युधिष्ठिरेण-श्रीमता **कोङ्गुणिवर्म्म**-धर्म्म-महाधिराजेन आत्मनः श्रेयसे प्रवर्द्धमान-विपुलैश्वर्य्ये प्रथमसंवत्सरे फाल्गुन-मासे शुक्ल-पक्षे तिथौ पञ्चम्यां सो(खो)पाध्यायस्य परमार्हतस्य **विजयकीर्तेः** सकलदिङ्मण्डलव्यापिकीर्त्तेरुपदेशतः **चन्द्रनन्द्या**चार्य्य-प्रमुखेन मूल-संघेनानुष्ठिताय **उरनूरार्हतायत**

[३ब] **नाय कोरिकुन्द**-विषये **वेन्नैलकरनि**ग्रामः **पेरूरेवानि-अडि गल**र्हदायतनाय शुल्क-बहिश्कर्षापणेषु पादश्च देव-भोगक्रमेणाद्भिर्दत्तः योऽस्य लोभाद् प्रमादाद्वापि हर्त्ता स पञ्च-महा-पातक-संयुक्तो भवति अपि चात्र मनुगीताः श्लोकाः

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्ठि-वर्ष-सहस्राणि घोरे तमसि वर्त्तते
भूमि-दानात् परं दानं न भूतं न भविष्यति ।
तस्यैव

[४ अ] हरणात् पापं न भूतं न भविष्यति ॥

(दो[1] हमेशाके श्लोक)महाराज-मुखाज्ञाप्त्या **मारिषेण** त्वट्टकारेण लिखितेय ताम्र-पट्टिका

[EC, X, Mālur tl., n° 72.]

अनुवाद—**कोङ्गणिवर्म्म धर्म्म-महाधिराज** जाह्नवी (या गंग)-कुलके निर्मल आकाशमें चमकनेवाले सूर्य थे; वे काण्वायनसगोत्रके थे।

इनके पुत्र **माधववर्मधर्ममहाधिराज** थे, जो एक 'दत्तकसूत्र-वृत्ति' के प्रणेता थे।

इनके पुत्र **हरिवर्मा**-महाधिराज थे।

इनके पुत्र **विष्णुगोप**-महाधिराज थे।

इनके पुत्र **माधववर्म**-धर्म महाधिराज थे, जो कलियुगकी कीचड़में फंसे हुए धर्मरूपी बैलको निकालनेमें हमेशा सन्नद्ध रहते थे।

इनके पुत्र कोङ्गणिवर्म-धर्म्म-महाधिराजने जो कि कलियुगी युधिष्ठिर कहलाते थे, अपने कल्याणकेलिये, अपने बढ़ते हुए राज्यके प्रथम वर्षकी फाल्गुन सुदी पञ्चमीको, अपने उपाध्याय परमार्हत (भक्तजैन) विजयकीर्तिकी सम्मतिसे, मूलसंघके चन्द्रनन्दि इत्यादिके द्वारा प्रतिष्ठापित उरनूर के जैन मन्दिरको कोरिकुन्द-देशमेंका वेन्नेल्करनि गाँव दिया था, और पेरूर एवानि-अडिगल्के जिनमन्दिरमें बाहरकी चुङ्गीके कार्षापणे (या धन) का चतुर्थ भाग दिया था।

हमेशाके शापात्मक (imprecatory) श्लोक। महाराज अपने मुँहसे जैसा बोलते जाते थे, मारिषेण त्वट्टकार वैसा ही इन ताम्र-पट्टिकाओं-पर खोदता जाता था।

---

१. ८० रत्तीके तोलके ताम्बेके सिक्के, जो प्राचीनतम देशी मुद्राके थे। (डा० बूल्हरकी Grundriss, मे रैपसनका 'Indian Coins' नामका लेख देखो।)

९५

मर्करा—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ३८८=४६६ ई.]

अविनीत कोङ्गणिका मर्करा-पत्र

(मर्कराके खजानेमेंसे प्राप्त ताम्रपत्रोंके ऊपर)

(१ ब) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्म(भ)नाभेन श्रीमद्जाह्नवीय[कु]लामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखण्डित-महाशिलास्तम्भलब्धबलपराक्रमो दारणो(रुणा)रिगणविदारणोपलब्धव्र(व्र)-णविभूषणविभूषित **काण्वायन**सगोत्रस्य(?) श्रीमान् **कोङ्गणि**महाधिराज॥ तत्पुत्र पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविने(न)यविहितवृत्तः सम्या(म्य)क्प्र-जापालना(न)मात्राधिगतराज्यात्प्र(ज्यप्र)योजन विद्वत्कविकाञ्चननिक-षोपलभूतो नीतिशास्त्रस्यवक्तृप्रयोक्तृकुशलस्य(?) दत्तकसूत्रवृत्तिः(त्तेः) प्रणेता(ता) श्रीमान्**माधव**महाधिराज॥ तत्पुत्र पितृपैतामहा(ह)गुणयुक्तो व(ऽ)नेकचातुर्दन्तयुद्ध(द्धा)वाप्तिचतुरुदधिसलिलास्वादितयश श्रीमद् **हरि-वर्म्म**महाधिराज॥ तत्पुत्र॥ द्विजगुरुदेवताः(ता)पूजनपरो नारायण-चरणानुद्ध(ध्या)त श्रीम**द्विष्णुगोप**म

(२ अ) हाधिराज॥ तस्य पुत्र॥ त्रियम्भ(त्र्यम्ब)कचरणाम्भोरुहरा-जाः(रजः)पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग स्वभुजबलपराक्रमक्रियाकृतराज्य कलियुगबल-पङ्कावसन्नवृषोद्धरणनित्यसन्नद्ध श्रीमान्**माधव**महाधिराज॥ तस्य पुत्र॥ श्रीमद्**कदम्ब**कुलगगनगभस्तिमालिन **कृष्णवर्म्म**महाधिराजस्य प्रिया(य) भागिनेयो विद्याविनय(या)तिस(श)यपरिपूरितान्तरात्म(त्मा) निरवग्रहप्रया-(थ)नसौर्य्य विद्वत्सु प्रथमगण्य श्रीमान् **कोङ्गणि**महाधिराज **अविनीत**ना-मधेय दत्तस्य **देसिग**-गण **कोण्डकुन्दान्वयगुणचन्द्र**भटारशिष्यस्य **अभ**-

णन्दि(अभयनन्दि)भटार तस्य शिष्यस्य **शीलभद्र**भटारशिष्यस्य **जयणन्दि**[1]भटारशिष्यस्य **गुणणन्दि**भटारशिष्यस्य **चन्दणंदि**भटारर्गे अष्टा-अ-सीति-उत्तरस्य त्रयो-स(श)तस्य संवत्सरस्य माघमासं सोमवारं स्वातिनक्षत्र सुद्ध पञ्चमी **अकालवर्ष**-पृथुवीवल्लभमन्त्री **तळवननगर** श्रीविजयजिनालयके पूनाडुच्छ(च्छट्)सहस्रएडेनाडुसप्तरिमध्ये **वदणेगुप्पे**नाम **अविनीत**म-हाधिराजेन दत्तेन पडिये आरोंळ्मूरू ।

(२ व) रोळ् पन्निर्कण्डुगङ्गेन्दुअम्बलिमणणुं **तलवनपुर**दोळ् **तळवित्तियमन्** **पोगरिगेल्ले**योल् पन्निकण्डुगं **पिरिकेरे**योळम् राज-मानमनुमोदन पन्निर्क्कण्डुगं मनोहरं दत्त **वदणेगुप्पे**ग्रामस्य सीमान्तरं पूर्व्वस्यां दिसि केञ्जिगेमोरॅडिए गजसेलेये करिवल्लिय कोट्टगर**वदणे-गुप्पे**यत्रिसन्धिय सत्ति-कोरॅडु आग्नेयदिनन्ते वन्दुकागणि-तटाकं पुन दक्षिणस्या दिसि वहुण्णुहिये वल्कणिवृक्षमे पुन पश्चिम-मुखदे सन्द वहुमूलिकपन्तिये पुन **वदणेगुप्पे**य-कोट्टगरमुल्तगिय-त्रिसन्धिय कोळे चण्डिगाले पुन नैरत्यदे सन्दु कथक-वृक्षमे पुन पश्चिमस्यां दिसि पेल्डुल्दिल्-वृक्षमे सान्तेरॅतिय वट-वृक्षमे पुन तोरेवल्लमे उत्तरा-मुखदे सन्द वहुमूलिक-पन्तिये जम्बूपडिय-तटाकमे पुन वायव्यदे गळे-चिञ्च-वृक्षमे पुन **वदणेगुप्पे**य-मुल्तगिय-कोळेयनूरदासनूर-त्रिसन्धिय-नेर्गिल-गुम्वे निडुवेलुङ्ग पुन गजसेलेयग्राम उत्तरदिसि काया-मोरॅडिए इल्लिट्टु केम्ब रेये पुन पूर्व्व-मुखदे सन्द वहुमूलिक-प ।

(३ अ)न्तिये पुन कडपल्तिगाल वट-वृक्षमे पुन ईसानदे **वदणेगुप्पे**य-दासनूर-पोलमद-त्रिसन्धिय तटाकमे कोडिगाट्टि चिञ्च-वृक्षमे केन्तरम्चिन दिणेइं पूर्व्वदे कूडित्त सीमान्तरं ॥ तस्य साक्षिणा गङ्गराज

---

१ "जनाणन्दि", इं ए०, १, पृ० ३६३ ।

कुलसकलास्थयिक-पुरुष पेर्ब्बिक्कवाण मर्ऱुगरेय सेन्दिक गञ्जेनाड निर्ग्गुण्ड मणियुगुरेय नन्याल सिम्बालादय भृत्ययां देश-साक्षि तगड्डूर कुळुगो वरुगणिगनूर तगडरु आलगोडते नन्दकरुं उम्मत्तूर बेळ्ळुररुमाळ-गेयरुं बदणेगुप्पेय झंसन्द बेळ्ळुररु पेर्ग्गिवियरु ॥

स्वदत्तपरदत्तां वा यो हरेथ(त) वसुन्धरीं(रां) षष्टिं वर्षसहस्राणि विष्ठाया जायते कृमि[ः] [॥]

वसुभि[र्] वसुधा भुक्तां(क्ता)राजभिस्सक-राजभिः[1] यस्य यस्य यदा भूमि तस्य तस्य तदा फलम् ॥

देवस्व तु विष घोरं न विष विषमुच्यते । विषमेकाकिनं हन्ति देवस्व[--] पुत्रपौत्रिकं(कां) ॥

सामान्योयं धर्म्म हेतु(सेतुं) नृपाणाम् काले काले पालनीयो भवद्भि[ः] सर्व्वा(र्व्वा)नेतां भागिन(न् भाविनः) पार्थिवेन्द्रान् भूयो भूयो याचते रामभद्र[ः] ॥ विश्वकर्म्म लिखितम्

चेर राजाओंकी वंशावली इस दानपत्रमें इस प्रकार दी हुई है:—

१. कोङ्गणि प्रथम । २. माधव प्रथम । ३. हरिवर्म्म । ४. विष्णु-गोप । ५. माधव द्वितीय । ६. कोङ्गणि द्वितीय (अविनीत) ।

ये अविनीत महाधिराज कदम्बकुलसूर्य कृष्णवर्म्म-महाधिराजकी प्रिय बहि-नके पुत्र थे । इनके लिये दानपत्रमें कहा गया है कि—'इनका अन्तरात्मा विद्या, विनयकी वृद्धिसे परिपूरित था, अजेय शौर्य इनमें था और विद्वानोंमें प्रथम गिने जाते थे ।' इन्हींसे देसिग (देशीय) 'गण' कोण्डकुन्द 'अन्वय' के गुणचन्द्र-भटारके शिष्य अभयनन्दि-भटार, उनके शिष्य शीलभद्र-भटार, उनके शिष्य जयणन्दि- भटार, उनके शिष्य गुणणन्दि-भटार, उनके शिष्य चन्दणन्दि-भटारको तलवननगरके श्रीविजय जिनालयके मन्दिरके लिये

---

१ सामान्यतया 'सगरादिभि.' ।

वढणेगुप्पे नामका सुन्दर गाँव दानमें प्राप्तकर अकालवर्ष पृथवी-वल्लभके मन्त्रीने शकसंवत्सर ३८८ के माघ महीनेकी शुक्ल पञ्चमी, सोमवारको स्वातिनक्षत्रके समय इसे भेट किया। यह गाँव पूनाड्डु छः हजारके एडेनाड्डु सत्तरके मध्यमें अवस्थित है। साथमें १२ 'कण्डुग' प्रत्येक छः आश्रित गांवोंमेंसे, तथा पोगरिगेल्ले और पिरिकेरेमें से भी दिया।]

९६

हल्सी (ज़िला बेलगाँव)—संस्कृत।

[ई० पाँचवीं शताब्दिका (फ्लीट)]

प्रथम पत्र।

[१] नमः ॥ जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो गुणरुन्द्रः प्र[थि]त [परम] कारुणिकः

[२] त्रैलोक्याश्वासकरी दयापताकोच्छ्रिता यस्य ॥ परम—

[३] श्रीविजय**पलाशिका**या प्रजासाधारणा [शा] नाम् ॥

दूसरा पत्र; पहला ओर।

[४] कदम्बानां युवराजः श्री**काकुस्थवर्म्मा** स्ववैजयिके अशीतितमे

[५] संवत्सरे भगवतामर्हताम् सर्व्वभूतशरण्यानाम् त्रैलोक्य-निस्तार-

[६] काणाम् **खेटग्रामे** वदोवरक्षेत्र [म्] **श्रुतकीर्त्ति**सेनापतये ॥

दूसरा पत्र; दूसरी ओर।

[७] आत्मनस्तारणार्त्थं दत्तवा [न्] [।।] तद्यो [हि] न (ना) स्ति स्ववंश्यः [प] रवश्यो वा

[८] न पञ्चमहापातकसंयुक्तो भवती (ति) [।] यो भिरक्षती (ति) तस्य सत्पर्व्वं (सर्व्वं, या सत्य सर्व्वं) गु-

[९] णपुण्यावाप्तिः [।।] अपि चोक्तम् [।] बहुभिर्व्वसुधा दत्ता ।।[1]

[१०] [रा] जभिस्सगरादिभिः यस्य यस्य य[दा]भू]मिः तस्य तस्य तदा फलम् [।।]

[११] स्वदत्ता परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां षष्टिवर्षसहस्र(स्रा) णी (णि)

[१२] नरके पच्यते तु सः ।। नमो नमः [।।] ऋपभाय नमः ।।

[इस लेखमें कदम्ब 'युवराज' काकुस्थ (काकुत्स्थ)वर्माके द्वारा श्रुतकीर्त्ति सेनापतिको दिये गये। एक क्षेत्र-दानका उल्लेख है । यह दान खेटग्राम नामक गाँवमें किया गया था ।]

[इं० ए०, जिल्द ६, पृ० २२-२४, नं० २०]

९७

देवगिरि (जिला धारवाड़)—संस्कृत ।

—[?]—

सिद्धम् जयत्यर्हंस्त्रिलोकेशः सर्वभूतहिते रतः
रागाद्यरिहरोनन्तोनन्तज्ञानदृगीश्वरः

स्वस्ति **विजयवैजयन्त्यां** स्वामिमहासेनमातृगणानुद्धयाताभिषिक्ताना **मानव्य**सगोत्राणां **हारिती**पुत्राणं(णा) अङ्गिरसां प्रतिकृतस्वाध्यायच्चर्चका-नां सद्धर्म्मसदम्त्राना **कदम्बा**नां अनेकजन्मान्तरोपार्जितविपुलपुण्यस्कन्धः आहवार्जितपरमरुचिरदृढ़सत्वः[2] विशुद्धान्वयप्रकृत्यानेकपुरुपपरंपरागते जगत्प्रदीपभूते महत्यदितोदिते काकुस्थान्वये **श्रीशान्तिवर्म्म**तनयः

---

१ यह पूर्ण विरामका चिह्न फजूल है । २ इन पत्रोंमें यह खास बात है कि जहाँ द्वित्वाक्षरोंका इतना अधिक प्रयोग किया गया हैं वहाँ 'सत्त्व' और 'तत्व'में 'त' अक्षर द्वित्व नहीं किया गया ।

श्रीमृगेश्वरवर्मा आत्मनः राज्यस्य तृतीये वर्षे पौषसंवत्सरे कार्तिकमासे वहुले पक्षे दशम्यां तिथौ उत्तराभाद्रपदे नक्षत्रे **बृहत्परलूरे** (?) त्रिदशमुकुटपरिघृष्टचारुचरणेभ्यः परमार्हद्देवेभ्यः संमार्जनोपलेपनाभ्यर्चनभग्नसंस्कारमहिमार्थं ग्रामापरदिग्विभागसीमाभ्यन्तरे राजमानेन चत्वारिंशन्निवर्त्तनं कृष्णभूमिक्षेत्रं चत्वारि क्षेत्रन्निवर्त्तनं च चैत्यालयस्य वहिः,[1] एकं निवर्त्तनं पुण्पार्थं देवकुलस्याङ्गनञ्च एकनिवर्त्तनमेव सर्वपरिहारयुक्तं दत्तवान् महाराजः । लोभादधर्माद्वा योस्याभिहर्त्ता स पंचमहापातकसंयुक्तो भवति योस्याभिरक्षिता स तत्पुण्यफलभाग्भवति । उक्तञ्च--

वहुभिर्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरा ।
षष्टिं वर्षसहस्राणि नरके पच्यते तु सः ॥
अद्भिर्दत्तं त्रिभिर्भुक्तं सद्भिश्च परिपालितम् ।
एतानि न निवर्तन्ते पूर्वराजकृतानि च ॥
स्वं दातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्यार्थपालनं ।
दानं वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयोनुपालनम् ॥

परमधार्मिकेण **दामकीर्ति**भोजकेन लिखितेयं पट्टिका इति सिद्धिरस्तु ॥

[इं० ए०, जिल्द ७, पृ० ३५-३७, नं. ३६]

[यह पत्र श्रीशान्तिवर्माके पुत्र महाराज श्री 'मृगेश्वरवर्मा' की तरफसे लिखा गया है, जिसे पत्रमें काकुस्था(स्था)न्वयी प्रकट किया है, और इससे ये कदम्बराजा, भारतके सुप्रसिद्ध वंशोंकी दृष्टिसे, सूर्यवंशी अथवा इक्ष्वाकु-

---

१ व्याकरणकी दृष्टिसे यह वाक्य बिलकुल शुद्ध नहीं मालूम होता । २ यह पद्य मिस्टर फ्लीटके शिलालेख नं० ५ में मनुका ठहराया गया है । आमतौर-पर यह व्यासका माना जाता है ।

वंशी थे, ऐसा मालूम होता है। यह पत्र उक्त मृगेश्वरवर्माके राज्यके तीसरे वर्ष, पौष[1] (?) नामके संवत्सरमें, कार्त्तिक कृष्णा दशमीको, जबकि उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र था, लिखा गया है। इसके द्वारा अभिषेक, उपलेपन, पूजन, भग्नसंस्कार (मरम्मत) और महिमा (प्रभावना) इन कामोंके लिये कुछ भूमि, जिसका परिमाण दिया है, अरहन्तदेवके निमित्त दान की गयी है। भूमिकी तफसीलमें एक निवर्तनभूमि खालिस पुष्पोंके लिये निर्दिष्ट की गई है। ग्रामका नाम कुछ स्पष्ट नहीं हुआ, 'बृहत्परलूरे' ऐसा पाठ पढ़ा जाता है। अन्तमें लिखा है कि जो कोई लोभ या अधर्मसे इस दानका अपहरण करेगा वह पंचमहापापोंसे युक्त होगा और जो इसकी रक्षा करेगा वह इस दानके पुण्य-फलका भागी होगा। साथ ही इसके समर्थनमें चार श्लोक भी 'उक्तं' च रूपसे दिये हैं, जिनमेंसे एक श्लोकमें यह बतलाया है कि जो अपनी या दूसरेकी दान की हुई भूमिका अपहरण करता है वह साठ हजार वर्ष तक नरकमें पकाया जाता है, अर्थात् कष्ट भोगता है। और दूसरेमें यह सूचित किया है कि स्वयं दान देना आसान है परंतु अन्यके दानार्थका पालन करना कठिन है, अतः दानकी अपेक्षा दानका अनुपालन श्रेष्ठ है। इन 'उक्तं च' श्लोकोंके बाद इस पत्रके लेखकका नाम 'दामकीर्ति भोजक' दिया है और उसे परम धार्मिक प्रकट किया है। इस पत्रके शुरूमें अर्हन्तकी स्तुतिविषयक एक सुन्दर पद्य भी दिया हुआ है जो दूसरे पत्रोंके शुरूमें नहीं है, परंतु तीसरे पत्रके बिल्कुल अन्तमें जरासे परिवर्तनके साथ जरूर पाया जाता[2] है।]

९८

देवगिरि (जिला-धारवाड़)—संस्कृत

—[?]—

सिद्धम्॥ **विजयवैजयन्त्याम्** स्वामिमहासेनमातृगणानुद्ध्याताभिषि-

---

१ साठ सवत्सरोंमे इस नामका कोई सवत्सर नहीं है। सम्भव है कि यह किसी सवत्सरका पर्याय नाम हो या उस समय दूसरे नामोंके भी सवत्सर प्रचलित हों। २ यह और आगेके लेख नं० ९८ और १०५ जैनहितैषी, भाग १४, अङ्क ७-८, पृ० २२८-२२९ से उद्धृत किये हैं।

त्तस्य **मानव्य**सगोत्रस्य **हारिती**पुत्रस्य प्रतिकृतचर्च्चापारस्य विबुधप्रति-विम्बाना **कदम्बाना** धर्ममहाराजस्य **श्रीविजयशिवमृगेशवर्म्मणः** विजयायुरोग्यैश्वर्यप्रवर्द्धनकरः **संवत्सरः चतुर्थः** वर्षापक्षः अष्टमः तिथिः पौर्ण्णमासी अनयानुपूर्व्या अनेकजन्मान्तरोपार्ज्जितविपुलपुण्यस्कंधः सुविशुद्धपितृमातृवशः उभयलोकप्रियहितकरानेकशास्त्रार्थतत्वविज्ञानविवेच्च (?) ने विनिविष्टविशालोदारमतिः हस्त्यश्वारोहणप्रहरणादिषु व्यायामिकीषु भूमिषु यथावत्कृतश्रमः दक्षो दक्षिणः नयविनयकुशलः अनेकाहवार्ज्जितपरमदृढ़सत्वः उदात्तबुद्धिधैर्यवीर्य्यत्यागसम्पन्नः सुमहति समरसङ्कटे स्वभुजवलपराक्रमावाप्तविपुलैश्वर्यः सम्यक्प्रजापालनपरः स्वजनकुमुदवनप्रबोधनशशाङ्कः देवद्विजगुरुसाधुजनेभ्यः गोभूमिहिरण्यशयनाच्छादनान्नादिअनेकविधदाननित्यः विद्वत्सुहृत्स्वजनसामान्योपभुज्यमानमहाविभवः आदिकालराजवृत्तानुसारी धर्ममहाराजेः कदम्बाना श्रीविजय**शिवमृगेश**वर्म्मा **कालवङ्ग**ग्रामं त्रिधा विभज्य दत्तवान् । अत्र पूर्वमर्हच्छालापरमपुष्कलस्थाननिवासिभ्यः भगवदर्हन्महाजिनेन्द्रदेवताभ्य एको भागः, द्वितीयोर्हत्प्रोक्तसद्धर्म्मकरणपरस्य **श्वेतपटमहाश्रमणसंघो**पभोगाय, तृतीयो **निर्ग्रन्थमहाश्रमणसंघो**पभोगायेति । अत्र देवभाग धान्यदेवपूजावलिचरुदेवकर्मकरभग्नक्रियाप्रवर्त्तनाद्यर्थोपभोगाय । एतदेवं न्यायलब्धं देवभोगसमयेन योभिरक्षति स तत्फलभाग्भवति, यो विनाशयेत् स पंचमहापातकसंयुक्तो भवति । उक्तञ्च-वहुभिर्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलं । **नरवर**सेनापतिना लिखितं ।

[इं० ए०, जिल्द ७, पृ० ३७-३८, नं० ३७]

---

१ इन प्रतिलिपियोंमें विसर्ग उस चिह्नके स्थानमें लिखा गया है जो कण्ठ्यवर्गों (Gutturals) से पहले विसर्गकी जगह प्रयुक्त हुआ है। २ 'देवभागं समयेन' शुद्ध पाठ मालूम पड़ता है।

[यह दानपत्र कदम्बोंके धर्ममहाराज 'श्रीविजयशिवमृगेश वर्मा' की तरफसे लिखा गया है और इसके लेखक हैं 'नरवर' नामके सेनापति। लिखे जानेका समय चतुर्थसंवत्सर, वर्षा (ऋतु) का आठवाँ पक्ष और पौर्णमासी तिथि है। इस पत्रके द्वारा 'कालवङ्ग' नामके ग्रामको तीन भागोंमें विभाजित करके इस तरहपर बाँट दिया है कि पहला एक भाग तो अर्हच्छाला परम-पुष्कल स्थाननिवासी भगवान् अर्हन्महाजिनेन्द्रदेवताके लिये, दूसरा भाग अर्हत्प्रोक्त सद्धर्माचरणमें तत्पर श्वेताम्बरमहाश्रमणसंघके उपभोगके लिये और तीसरा भाग निर्ग्रन्थमहाश्रमणसंघके उपभोगके लिये। साथ ही, देवभागके सम्बन्धमें यह विधान किया है कि वह धान्य, देवपूजा, बलि, चरु, देवकर्म, कर, भग्नक्रिया-प्रवर्तनादि अर्थोपभोगके लिये है, और यह सब न्यायलब्ध है। अन्तमें इस दानके अभिरक्षकको वही दानके फलका भागी और विनाशकको पंच महापापोंसे युक्त होना बतलायाहै, जैसाकि नं० ९७ के दानपत्रमें उल्लेखित हैं। परंतु यहाँ उन चार 'उक्तं च' श्लोकोंमेंसे सिर्फ पहलेका एक श्लोक दिया है जिसका यह अर्थ होता है कि, इस पृथ्वीको सगरादि बहुतसे राजाओंने भोगा है, जिस समय जिस-जिसकी भूमि होती है उस समय उसी-उसीको फल लगता है।

इस पत्रमें 'चतुर्थ' संवत्सरके उल्लेखसे यद्यपि ऐसा भ्रम होता है कि यह दानपत्र भी उन्हीं मृगेश्वरवर्माका है जिनका उल्लेख पहले नम्बरके पत्र (शि० ले० नं. ९७) में है अर्थात् जिन्होंने पूर्वका (नं० ९७) दान-पत्र लिखाया था और जो उनके राज्यके तीसरे वर्षमें लिखा गया था, परंतु यह भ्रम ठीक नहीं है। कारण कि एक तो 'श्रीमृगेश्वरवर्मा' और 'श्रीवि-जयशिवमृगेशवर्मा' इन दोनों नामोंमें परस्पर बहुत बड़ा अन्तर है; दूसरे, पूर्वके पत्रमें 'आत्मनः राज्यस्य तृतीये वर्षे पौष संवत्सरे' इत्यादि पदोंके द्वारा जैसा स्पष्ट उल्लेख किया गया है वैसा इस पत्रमें नही है; इस पत्रके समय-निर्देशका ढंग बिलकुल उससे विलक्षण है। 'संवत्सरः चतुर्थः, वर्षा पक्षः अष्टमः, तिथिः पौर्णमासी,' इस कथनमें 'चतुर्थ' शब्द संभवतः ६० संवत्सरोंमेंसे चौथे नम्बरके 'प्रमोद' नामक संवत्सरका द्योतक मालूम होता है; तीसरे, पूर्वपत्रमें दातारने बड़े गौरवके साथ अनेक विशेषणोंसे युक्त जो अपने 'काकुत्स्थान्वय' का उल्लेख किया है और साथ ही अपने पिताका नाम

भी दिया है, वे दोनों बातें इस पत्रमें नहीं हैं जिनके, एक ही दाता होनेकी हालतमें, छोड़ दिये जानेकी कोई वजह मालूम नहीं होती; चौथे, इस पत्रमें अर्हन्तकी स्तुतिविषयक मंगलाचरण भी नहीं है, जैसाकि प्रथम पत्रमें पाया जाता है; इन सब बातोंसे ये दोनों पत्र एक ही राजाके मालूम नहीं होते।

इस पत्र नं. ९८ में श्रीविजयशिवमृगेशवर्माके जो विशेषण दिये हैं उनसे यह भी पता चलता है कि, यह राजा उभयलोककी दृष्टिसे प्रिय और हितकर ऐसे अनेक शास्त्रोंके अर्थ तथा तत्त्वविज्ञानके विवेचनमें बड़ा ही उदारमति था, नय-विनयमें कुशल था और ऊँचे दर्जेके बुद्धि, धैर्य, वीर्य, तथा त्यागसे युक्त था। इसने व्यायामकी भूमियोंमें यथावत् परिश्रम किया था और अपने भुजबल तथा पराक्रमसे किसी बड़े भारी संग्राममें विपुल ऐश्वर्यकी प्राप्ति की थी; यह देव, द्विज, गुरु और साधुजनोंको नित्य ही गौ, भूमि, हिरण्य, शयन (शय्या), आच्छादन (वस्त्र) और अन्नादि अनेक प्रकारका दान दिया करता था; इसका महाविभव विद्वानों, सुहृदों और स्वजनोंके द्वारा सामान्यरूपसे उपभुक्त होता था; और यह आदिकालके राजा (संभवतः भरतचक्रवर्ती) के वृत्तानुसारी धर्मका महाराज था। दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों ही सम्प्रदायोंके जैनसाधुओंको यह राजा समानदृष्टिसे देखता था, यह बात इस दानपत्रसे बहुत ही स्पष्ट है।]

९९

हल्सी—संस्कृत।

—[?]—

स्वस्ति ॥

जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो गुणरुन्द्रः प्रथितपरमकारुणिकः
त्रैलोक्याश्वासकरी दयापताकोच्छ्रिता यस्य [॥]
कदम्बकुलसत्केतोः हेतोः पुण्यैकसम्पदाम्
श्रीकाकुस्थनरेन्द्रस्य सूनुर्भानुरिवापरः [॥]

श्रीशान्तिवरवर्म्मेति राजा राजीवलोचनः
खलेन वनिताकृष्टा येन लक्ष्मीर्द्विपद्गृहात् [॥]
तत्प्रियज्येष्ठतनयः श्रीमृगेशनराधिपः ।
लोकैकधर्मविजयी द्विजसामन्तपूजितः [॥]
मत्वा दानं दरिद्राणां महाफलमितीव यः
स्वय भयदरिद्रोऽपि शत्रुभ्योऽदान्महामयम्[1] [॥]
तुङ्गगङ्गकुलोत्सादी पल्लवप्रलयानलः
स्वार्यके नृपतौ भक्त्या कारयित्वा जिनालयम् [॥]

श्रीविजयपलाशिकायां यापनि(नी)यनिर्ग्रन्थकूर्च्चकानां स्ववैजयिके अष्टमे वैशाखे संवत्सरे कार्त्तिकपौर्ण्णमास्याम् ।[2] मातृसरित आरभ्य आ इङ्गिणीसङ्गमात् राजमानेन त्रयस्त्रिंड्शन्निवर्त्तनं । श्रीविजयवैजयन्ती-निवासी दत्तवान् भगवद्भ्योर्हद्भ्यः[।]तत्राज्ञाप्तिः । दामकीर्त्तिभोजकः जियन्तश्चायुक्तकः सर्व्वस्यानुष्ठाता इति [॥]

अपि च—उक्तम् [।]

बहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभिस्सगरादिभिः
यस्य यस्य यदा भूमिः तस्य तस्य तदा फलम् [॥]
स्वदत्ता परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धराम्
षष्ठिवर्षसहस्राणि कुम्भीपाके स पच्यते [॥]

सिद्धिरस्तु ।

[यह दानपत्र शान्तिवर्माके ज्येष्ठ पुत्र राजा मृगेशवर्माका है । उन्होंने

---

१ हमारी रायमें यह पाठ 'ऽदान्महाभयम्' ऐसा होना चाहिये। २ यह और आगे का १०३ वाँ शिलालेख (ताम्रपत्र) 'अनेकान्त', वर्ष ७, किरण १-२, पृष्ठ ८-९ से लिया है ।

स्वर्गगत राजा (शान्तिवर्मा) की भक्तिसे पलाशिका नामक नगरमें जिनालय निर्माण कराके अपनी विजयके आठवें वर्षमें यापनीयों, निर्ग्रन्थों और कूर्चकोंके लिये भूमि दान किया है । यहाँ कूर्चक सम्प्रदाय दिगम्बर सम्प्रदायका ही एक भेद मालूम पड़ता है[1] ।

[इं० ए०, जिल्द ६, पृ० २४-२५]

१००

हल्सी—संस्कृत ।

—[?]—

प्रथम पत्र

[१] जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो गुणरुन्द्र॰ प्रथितपरमकारुणिकः त्रैलोक्या

[२] श्वासकरी दयापताकोच्छ्रिता यस्य ॥ स्वामिमहासेनमातृगणानु-

[३] ध्यातानां मानव्यसगोत्राणां हारितीपुत्राणां प्रतिकृतस्वाध्याय च [चर्चा]-

दूसरा पत्र; पहिली ओर ।

[४] पारगाणाम् स्वकृतपुण्यफलोपभोक्तृणाम् स्ववाहुवीर्य्योपार्ज्जि-

[५] तैश्वर्यभोगभागिनाम् सद्धर्म्मसदम्बानां कदम्बानाम् ॥ काकुस्थ-

[६] वर्म्मनृपलब्धमहाप्रसादः संभुक्तवाञ्छितनिधिश्श्रुतकीर्त्तिभोजः

दूसरा पत्र; दूसरी ओर ।

[७] ग्रामं पुरा नृपु वर॰पुरुपुण्यभागी खेटाह्वकं यजनदानदयो-

[८] पपन्नः ॥ तस्मिन्स्वर्य्याते शान्तिवर्म्मावनीशः मात्रे धर्म्मार्थं दत्तवान् दा-

[९] मकीर्त्तिः भूमौ विख्यातस्तत्सुतश्श्रीमृगेशः पित्रानुज्ञातं धार्म्मिको दान-

---

१ देखो अनेकान्त, वर्ष ७, किरण १-२, पृष्ठ ७-८, में श्री पं. नाथूरामजी प्रेमीका 'कूर्चकोंका सम्प्रदाय' नामक लेख ।

तीसरा पत्र; पहली ओर।

[१०] मेव ॥ श्रीदामकीर्त्तेरुरुपुण्यकीर्त्तिः सद्धर्म्ममार्गस्थितशुद्ध-
बुद्धेः ज्याया-

[११] न्सुतो धर्म्मपरो यशस्वी विशुद्धबुद्ध्या (द्धय) झ्युतो गुणाद्यः
आचार्य्यैर्बन्धु-

[१२] षेणाद्यैः निमित्तज्ञानपारगैः स्थापितो भुवि यद्वंशः श्रीकीर्त्ति-

[१३] कुलवृद्धये [॥] तत्प्रसादेन लब्धश्रीः दानपूजाक्रियोद्यतः गुरु-

तीसरा पत्र; दूसरी ओर।

[१४] भक्तो विनीतात्मा परात्महितकाम्यया ॥ जयकीर्त्तिप्रतीहार×
प्रसादान्नृप-

[१५] तेः रवेः पुण्यात्र्थं स्वपितुर्म्मात्रे दत्तवान् पुरुखेटकं ॥ जिने-
न्द्रमहिमा

[१६] कार्य्या प्रतिसंवत्सरं क्रमात् अष्टाहकृतमर्य्यादा कार्त्तिक्या-
न्तद्धना-

[१७] गमात् वार्षिकाश्चतुरो मासान् यापनीयास्तपस्विनः
भु[ञ्जीरस्तु]

चतुर्थ पत्र; पहली ओर।

[१८] यथान्यार्य्यं महिमाशेषवस्तुकम् [॥] कुमारदत्तप्रमुखा
हि सूरयः

[१९] अनेकशास्त्रागमखिन्नबुद्धयः जगत्यतीतास्सुतपोधनान्विताः
गणो

[२०] स्य तेषां भवति प्रमाणतः ॥ धर्म्मेप्सुभिर्ज्जानपदैस्सनागरैः

[२१] जिनेन्द्रपूजा सततं प्रणेया इति स्थितिं स्थापितवान् रवीशः
पला [शिका]

चतुर्थ पत्र; दूसरी ओर।

[२२] यां नगरे विशाले ॥ स्थित्यानया पूर्व्वनृपानुजुष्ट्या यत्ताम्र-पत्रेषु नि-

[२३] वद्धमादौ धर्म्माप्रमत्तेन नृपेण रक्ष्यं संसारदोषं प्रविचार्य्य

[२४] बुध्या [॥] वहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः यस्य यस्य

[२५] यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत

पञ्चम पत्र

[२६] वसुन्धरां षष्टि वर्षसहस्राणि नरके पच्यते भृशम् ॥ अद्भि-र्दत्त त्रिभि-

[२७] र्भुक्तं सद्भिश्च परिपालितम् एतानि न निवर्त्तन्ते पूर्व्वराज-कृतानि च [॥]

[२८] यस्मिञ्जिनेन्द्रपूजा प्रवर्त्तते तत्र तत्र देशपरिवृद्धिः

[२९] नगराणा निर्भयता तद्देशस्वामिनाञ्चोर्जा ॥ नमो नमः [॥]

[ई० ए० जिल्द ६, पृ० २५–२७, नं. २२]

[यह लेख जैनधर्मका 'अष्टाहिका' नामका उत्सव मनानेके लिये रवि-वर्म्मा और अन्य लोगों द्वारा दिये गये दानों और हुक्मोंका उल्लेख करता है। इसमें कदम्बोंके राजा काकुस्थ (काकुत्स्थ) वर्मा का, उसके बाद शान्तिवर्मा, तत्पश्चात् श्री मृगेश (वर्मा) का और अन्तमें रविवर्माके दान-का वर्णन है। जिस गांव का दान दिया गया उसका नाम है पुरुखेटक।

१ मि० राइस इसको 'षड्भिश्च प्रतिपालितम्' पढ़ते हैं और उसका अर्थ 'छः पीढ़ियोंतक जानेवाला' दान करते हैं।

१०१

हल्सी—संस्कृत ।

—[?]—

प्रथम पत्र ।

[१] जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो गुणरुन्द्र× प्रथितपरमकारु-

[२] णिकः त्रैलोक्याश्वासकरी दयापताकोच्छ्रिता यस्य ॥

[३] **श्रीविष्णुवर्म्म**प्रभृतीन्नरेन्द्रान् निहत्य जित्वा पृथिवीं सम[स्तां]

[४] उत्साद्य **काञ्चीश्वर**चण्डदण्डम् **पलाशिका**यां समवस्थितस्सः[॥]

द्वितीय पत्र, पहली ओर ।

[५] **रवि कदम्बोरु** कुलाम्बरस्य गुणांशुभिर्व्याप्य जगत्सम[स्तं]

[६] मानेन चत्त्वारि निवर्त्तनानि ददौ जिनेन्द्राय महीम् महेन्द्रः [॥]

[७] संप्राप्य मातुश्चरणप्रसादं धर्म्मैकमूर्त्तेरपि **दामकीर्त्तेः**

[८] तत्पुण्यवृद्ध्यर्थमभून्निमित्तम् **श्रीकीर्त्ति**नामा तु च तत्कनिष्ठः[॥]

दूसरा पत्र; दूसरी ओर ।

[९] रागात्प्रमादादथवापि लोभात् यस्तानि हिंस्यादिह भूमि-

[१०] पालः आसप्तमं तस्य कुल कदाचित् नापैति कृत्स्नान्निरया-
न्निमग्नम् [॥]

[११] तान्येव यो रक्षति पुण्यकाङ्क्षः स्ववंशजो वा परवंशजो वा

[१२] स मोदमानस्सुरसुन्दरीभिः चिरं सदा क्रीडति नाकपृष्ठे [॥]

तीसरा पत्र ।

[१३] अपि चोक्तं **मनुना** [।] वहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभिस्सगरा-
दिभिः

[१४] यस्य यस्य यदा भूमिः तस्य तस्य तदा फलम् ॥

[१५] स्वदत्तां परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धराम्

[१६] षष्टिर्वर्षसहस्राणि निरये स विपच्यते ॥

[इस लेखमें रविवर्माके द्वारा जिनेन्द्रदेवके लिये दिये गये एक भूमि-दानका उल्लेख है। दान की गई भूमि नापमें ४ निवर्तन थी, दामकीर्ति, जो कि धर्ममूर्ति थे, की माताके चरणोंका प्रसाद पाकरके ही यह राजा दानमें प्रवृत्त हुआ। दामकीर्ति के छोटे भाईका नाम श्रीकीर्त्ति था। रविवर्मा पलाशिकामें रहते थे। इन्होंने श्रीविष्णुवर्मा(संभवतः 'विष्णुगोप' या 'विष्णुगोपवर्मा' नामका पल्लव राजा) और दूसरे अन्य राजाओंका वध किया था, समस्त पृथ्वीको जीता था और काञ्चीश्वरके चण्डदण्डका उत्सादन (निर्मूलन) किया था।]

[इं० ए०, जिल्द ६, पृ० २९-३०, नं० २४]

१०२

हल्सी—संस्कृत ।

—[?]—

प्रथम पत्र ।

स्वस्ति ॥

जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो गुणरुन्द्रः प्रथिनपरमकारुणिकः

त्रैलोक्याश्वासकरी दयापताकोच्छ्रिता यस्य ॥

श्रीमत्काकुस्थराजप्रियहिततनयश्शान्तिवर्म्मावनीश

तस्यैव ज्येष्ठसूनुः प्रथितपृथुयशा **श्रीमृगेशो** नरेशः ॥ (।)

दूसरा पत्र; पहली ओर ।

तत्पुत्रो दीप्ततेजा **रविनृ**पतिरभूत्सत्त्वधैर्य्यार्जितश्रीः

तद्भ्राता **भानुवर्म्मा** स्वपरहितकरो भाति भूप(:) कनीयान् ॥

तेनेयं वसुधा दत्ता जिनेभ्यो भूतिमिच्छता ।

पौर्ण्णमासीष्वनुच्छिद्य स्नपनार्त्थं हि सर्व्वदा ॥

पलाशिकायाम् कर्दमपट्यां राजमानेन

दूसरा पत्र; दूसरी ओर

पञ्चदशनिवर्त्तना तांम्रशासने भूमिर्निबद्धा उञ्छकरभरादिविवर्जिता श्रीमद्भानुवर्मराजलब्धपादप्रसादेन **पण्डर**भोजकेन परमार्हद्भक्तेन प्रवर्द्धमानराज्य**श्रीरविवर्म्म**धर्म्ममहाराजस्य एकादशे संवत्सरे हेमन्तपष्ठपक्षे

तीसरा पत्र।

दशम्यां तिथौ ॥ तां यो हिनस्ति स्ववंश्यः परवंश्यो वा स पञ्चमहापातकसंयुक्तो भवति ॥ उक्तञ्च ॥

बहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभिः सगरादिभिः
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलं ॥
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुंधरां
षष्टिवर्षसहस्राणि कुम्भीपाके स पच्यते

[इस लेखमें भानुवर्मा और उसके अधीनस्थ कर्मचारी पण्डर 'भोजक' के दानका उल्लेख है। यह दान भानुवर्माके बड़े भाई रविवर्माके राज्यके ११ वें वर्षमें, हेमन्तऋतुके छठे पक्षमें दसवीं तिथिको दिया गया था। इस भूमिका दान जिनभगवानकी हर पूर्णिमाके दिन पूजन करनेके लिये ही हुआ था। भूमिका नाप १५ निवर्तन था। यह भूमि पलाशिका गाँवके कर्दमपटी की थी। इस लेखसे कदम्बवंशके राजाओंकी रविवर्माके समयतककी वंशावलीका भी पता चलता है और वह यह है:—

१. काकुत्स्थवर्मा
|
२. शान्तिवर्मा
|
३. श्रीमृगेश
|
४. रविवर्मा (छोटा भाई भानुवर्मा)।

[इं० ए०, जिल्द ६, पृ० २७-२९]

दूसरा पत्र; दूसरी ओर।

श्रमणसङ्घान्वयवस्तुनः **धर्म्मनन्द्याचार्य्या**धिष्ठितप्रामाण्यस्य चैत्यालयस्य पूजासंस्कारनिमित्तम् साधुजनोपयोगार्त्थञ्च **सेन्द्रकाणां** कुललामभूतस्य **भानुशक्ति**राजस्य विज्ञापनया **मरदे** ग्रामं दत्तवान् [।।] य एतल्लोभाद्वै कदाचिदपहरेत् स पञ्चमहापातकसंयुक्तो भवति यश्चाभिरक्षति स तत्पुण्यफलम्

तीसरा पत्र।

अवाप्नोतीति [।।] उक्तञ्च ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम्
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके पच्यते तु सः ॥
वहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादि [भिः]
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥
ये सेतून्भिरक्षन्ति भग्नान् संस्थापयन्ति च ।
द्विगुणं पूर्व्वकर्तृभ्यः तत्फलं समुदाहृतम् [।।]

[इस लेखमें अपने राज्यके पाँचवें वर्षमें सेन्द्रकके कुलके भानुशक्ति राजाकी प्रार्थनापर हरिवर्म्माने 'मरदे' नामका गाँव दानमें दिया था, इस बातका उल्लेख है। यह हरिवर्मा रविवर्माका प्रियपुत्र है। यह दान राजधानी पलाशिकामें किया गया। इस दानका निमित्त वह चैत्यालय था जो कि 'अहरिष्टि' नामके श्रमणसङ्घकी सम्पत्ति थी और जिसपर आचार्य धर्मनन्दिकी आज्ञा चलती थी; उस चैत्यालयके पूजा इत्यादिके प्रबंधके लिये तथा साधुजनोंके उपयोगके लिये ही यह दान किया गया।]

[इं० ए०, जिल्द ६, पृ० ३१-३२.]

१०५

देवगिरि—संस्कृत।

—[?]—

विजय**त्रिपर्व्वते** स्वामिमहासेनमातृगणानुध्याताभिषिक्तस्य **मानव्य**-सगोत्रस्य प्रतिकृतस्वाध्यायचर्चापारगस्य आदिकालराजर्षिबिम्बानां आश्रितजनाम्बाना **कदम्बाना** धर्ममहाराजस्य अश्वमेधयाजिनः समरार्जितविपुलैश्वर्यस्य सामन्तराजविशेषरत्नसुनागजिनाकम्पदायानुभूतस्य (?) शरदमलनभस्युदितशशिसदृशैकातपत्रस्य धर्ममहाराजस्य **श्रीकृष्णवर्म्मणः** प्रियतनयो **देववर्म्मयु**वराजः स्वपुण्यफलाभिकांक्षया त्रिलोकभूतहितदेशिनः धर्मप्रवर्त्तनस्य अर्हतः भगवतः चैत्यालयस्य भग्नसंस्कारार्च्चनमहिमार्थं **यापनीय [स] ङ्घेभ्यः** सिद्धकेदारे राजमानेन (?) द्वादश निवर्त्तनानि क्षेत्रं दत्तवान् योस्य अपहर्त्ता स पंचमहापातकसंयुक्तो भवति योस्याभिरक्षिता स पुण्यफलमश्नुते (।) उक्तं च—बहुभिर्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः। यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तथा (?) फलं॥ अद्भिर्दत्तं त्रिभिर्युक्तं सद्भिश्च परिपालितं। एतानि न निवर्त्तन्ते पूर्व्वराजकृतानि च॥

स्वं दातुं सुमहच्छक्यं दु (?):ख (म) न्यार्थपालनं।
दानं वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयोनुपालनम्॥
स्वदत्ता परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां।
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके पच्यते तु सः॥
श्रीकृष्णनृपपुत्रेण कदम्बकुलकेतुना।
रणप्रियेण **देवेन** दत्ता भूमिस्त्रि**पर्व्वते**॥
दयामृतसुखास्वादपूतपुण्यगुणेप्सुना।
देववर्म्मैंकवीरेण दत्ता जैनाय भूरियम्॥

जयत्यर्हंस्त्रिलोकेशः सर्व्वभूतहितंकरः ।
रागाद्यरिहरोनन्तोनन्तज्ञानदृगीश्वरः ॥

[ई० ए०, जिल्द ७, पृ० ३३-३५, नं. ३५]

[यह दानपत्र कदम्बोंके धर्ममहाराज श्रीकृष्णवर्माके प्रियपुत्र 'देववर्मा' नामके युवराजकी तरफसे लिखा गया है और इसके द्वारा 'त्रिपर्वत' के ऊपरका कुछ क्षेत्र अर्हन्त भगवानके चैत्यालयकी मरम्मत, पूजा और महिमाके लिये 'यापनीय' संघको दान किया गया है ।

पत्रके अन्तमें इस दानको अपहरण करनेवाले और रक्षा करनेवालेके वास्ते वही कसम दिलाई है अथवा वही विधान किया है जैसा कि ९७ नम्बरके दानपत्रके सम्बन्धमें पहले बतलाया गया है। वही चारों 'उक्तं च' पद्य भी कुछ क्रमभंगके साथ दिये हुए हैं और उनके बाद दो पद्योंमें इस दानका फिरसे खुलासा दिया है, जिसमें देववर्माको रणप्रिय, दयामृतसुखास्वादनसे पवित्र, पुण्यगुणोंका इच्छुक और एकवीर प्रकट किया है । अन्तमें अर्हन्तकी स्तुतिविषयक प्रायः वही पद्य है जो ९७ नम्बरके दानपत्रके शुरूमें दिया है । इस पत्रमें श्रीकृष्णवर्माको 'अश्वमेध' यज्ञका कर्ता और शरद् ऋतुके निर्मल आकाशमें उदित हुए चंद्रमाके समान एक छत्रका धारक, अर्थात् एकछत्र पृथ्वीका राज्य करनेवाला लिखा है ।]

पूर्वके नं० ९७,९८ व इस दानपत्रपरसे निम्नलिखित ऐतिहासिक व्यक्तियोंका पता चलता है:—

१ स्वामिमहासेन—गुरु ।
२ हारिती—मुख्य और प्रसिद्ध पुरुष ।
३ शान्तिवर्मा—राजा ।
४ मृगेश्वरवर्मा—राजा ।
५ विजयशिवमृगेशवर्मा—महाराजा ।
६ कृष्णवर्मा—महाराजा ।
७ देववर्मा—युवराज ।
८ दामकीर्ति—भोजक ।
९ नरवर—सेनापति ।

१०६

अल्तेम (जिला कोल्हापुर)—संस्कृत ।

[शक ४११=४८८ ई०]

पहला पत्र ।

स्वस्ति ॥ जयत्यनन्तसंसारपारावारैकसेतवः
महावीरार्हतः पूताश्चरणाम्बुजरेणवः ॥

श्रीमतां विश्व-विश्वम्भराभिसंस्तूयमान**मानव्य**सगोत्राणां **हारीति**-पुत्राणा सप्तलोकमातृभिस्सप्तमातृभिरभिवर्द्धितानां कार्त्तिकेयपरिरक्षणप्राप्त-कल्याणपरम्पराणां भगवन्नारायणप्रसादसमासादितवराहलाञ्छनेक्षणक्षण-वशीकृताशेषमहीभृतानां (भृताम्) **चालुक्यानां** कुलमलंकरिष्णोः ॥ स्वभुजोपार्ज्जितवसुन्धरस्य निजयशश्श्रवणमात्रेणैवावनतराजकस्य कीर्त्तिप-ताकावभासितदिगन्तरालस्य **जयसिंहस्य राजसिंहस्य** (?) सूनुस्सूनृत-वागनवरतदानार्द्रीकृतकरस्सुरगज इव प्रशमनिधिस्तपोनिधिरिव दृप्तवैरिषु प्राप्तरणरागो **रणरागो**ऽभवत् [॥] तस्य चात्मजे श्वमेधनाव (०मेधाव) भृत (थ)-स्नानपवित्रीकृतगात्रे प्रणतपरनृपतिमकुटतटघटितहटन्मणिगण-किरणवार्द्धाराधौतचारुचरणकमलयुगले चित्रकण्ठाभिधानतुरङ्गमकण्ठीरवे-णोत्सारितारातिस्तम्भेरममण्डले वर्ण्णाश्रमसर्व्वधर्म्मपरिपालनपरे गङ्गासेतु(?) मध्यवर्तिदेशाधीश्वरे शक्तित्रयप्रवर्द्धितप्राज्यसाम्राज्ये गङ्गायमुनापालि-

दूसरा पत्र; पहली ओर ।

ध्वजदडक्कादिपञ्चमहाशव्दचिह्ने करदीकृत**चोल-चेर-केरल-सिंहल-कलिंग**भूपाले दण्डित**पाण्ड्या**दिमण्डि (ण्ड) लिके अप्रतिशासने **'सत्याश्रय'-श्री-पुलके**श्यभिधानपृथिवीवल्लभमहाराजाधिराजे पृथिवीमे-कातपत्रं शासति सति [॥] राजा **रुन्द्रनीलसैन्द्रक**वशशशांकायमानः

प्रचण्डदोर्दण्डमण्डितमण्डलाग्रो **गोण्ड**नामासीत् [।।] अय-नय-विनयसम्पन्नस्तनयोऽस्य समररसरसिक**स्सिवारा**ख्यया ख्यातः [।।] पुत्रोऽस्य भूता (तो) धात्रीतिलकायमानः पराक्रमाक्रान्तवैरिनिकुरुम्बः अवार्य्यवीर्यसमन्वितः कार्य्याकार्य्यनिपुणः हनूमानिव रामस्याभिरामस्य तस्य भृत्यस्सत्यसन्धो धार्मिक**स्सामियार**स्समभूत् [।।] स तत्प्रसादसमासादित**कुहुण्डी**विषयस्तं परिपा[ल] यं (यन्) तदन्तर्भूता**लक्त**काभिधाननगर्य्यांग्रामसप्तशतराजधान्यामशेषविषयविशेषकायमानायां शालिव्रीहीक्षुवणचणकप्रियङ्गुवरकोदारकश्यामाकगोधूमाद्यनेकधान्यसमृद्धायां तद्देशविलासिनीमुखकमलमिव विराजमानायां धनधान्यपरिपूर्ण्णकृषीवलप्रायायाम् ।।

ऐन्द्र्यां दिशि महेन्द्राभः प्रासादं प्रवरम्महत् जिनेन्द्रा—

दूसरा पत्र; दूसरी ओर ।

यतनं भक्त्याकारयत् सुमनोहरम् ।।

प्रोत्तुंग-प्रासादं त्रिभुवनतिलकं जिनालयं प्रवरं

नानास्तम्भसमुद्धृतविराजमानं चिरं जगति ।।

शकनृपाब्देष्वेकादशोत्तरेषु चतुष्वष्टेषु व्यतीतेषु **विभव**संवत्सरे प्रवर्त्तमाने ।। कृते च जिनालये ।

वैशाखोदितपूर्ण्णपुण्यदिवसे राहो (हौ) विधौ (धोः) मण्डलं

श्लेष्टेन्देर्त्थिकमज्जनार्द्धुपगतं स्नेहाद् गृहं भूभुजम्[1]

श्रीसत्याश्रयमाश्रयं गुणवतां विज्ञापयामास स

नज्जैनालयपूजनोचितनुतक्षेत्राय धर्म्मप्रियः ।।

आयुर्ज्जन्मवतामिदं ननु तदि (डि) त् सन्व्येन्द्रा(न्द्र)चापोपमं

ज्ञात्वा धर्म्मम (ध) नार्ज्जनं वुधजनैर्म्मार्त्य (र्त्यै): फलं मन्यते

---

१ संभवतः शुद्ध पाठ 'श्लिष्टेऽन्वार्थिकमजनाद्' होना चाहिये ।

इत्येवं प्रविबोध्य सम्यजनतां **सत्याश्रयो** वल्लभो
भक्त्या तज्जिनमन्दिरोपमक्रिये क्षेत्रं ददौ शासनम् ॥
वैशाखपौर्ण्णमास्यां राहौ विधुमण्डलं प्रविष्टवति
सत्याश्रयनृपतिस्त्रि**भुवनतिलकाय** दत्तवान् क्षेत्रम् ॥
कनकोपलसम्भूतवृक्षमूलगुण (णा) न्वये
भूतस्समग्रराद्धान्तस्**सिद्धनन्दि**मुनीश्वरः ॥
तस्यासीत् प्रथमश्शिष्यो देवताविनुतक्रमः
शिष्यैः पञ्चशतैर्युक्त—

तीसरा पत्र; पहिली ओर ।

श्चितकचार्य्य-संज्ञितः ॥
श्रीमत्**काकोपला**म्नाये ख्यातकीर्त्तिर्बहुश्रुतः
लक्ष्मीवा**न्नागदे**व्याख्य**श्चितकाचार्य्य**दीक्षितः ॥
नागदेवगुरोश्शिष्यः प्रभूतगुणवारिधिः
समस्तशास्त्रसम्बोधि (धी) **जिननन्दिः** प्रकीर्त्तितः ॥
श्रीमद्विविधराजेन्द्रप्रस्फुरन्मकुटालिभिः
निघृष्टचरणाब्जाय प्रभवे जननन्दिने ॥

जिननन्द्याचार्य्यसूर्य्याय दुश्चरतपोविशेषनिकषोपलभूताय समधिसर्व्वशास्त्राय नगरांशतलभोगाश्च प्रददौ [॥] तत्र तलभोगसीमान्याह [।] चैत्यालयाद् वायव्यां दिशि तटाकं तटो ऋजुसूत्रक्रमेण पश्चिमाभिमुखं गत्वा पथ तस्य मध्ये निखातपाषाणं तस्माद् दक्षिणाभिमुखमनुपथं गत्वा प्रवाहं तस्य (स्य) मध्ये निखातपाषाण पूर्व्वाभिमुखं गत्वा तिन्त्रिणीकवृक्षं यावत् तस्मादुत्तराभिमुखं गत्वा पूर्व्वोक्त-तटाकं ।[1] यावत्

---

१ इस पूर्णविराम की यहाँ कोई जरूरत नहीं है । 'पूर्व्वोक्त-तटाकं यावत्' ऐसा सम्बन्ध है ।

स्थितं एतन्नगरनिवेशक्षेत्रम् [॥] तत्र तलभोगक्षेत्रसीमान्याह [।] नगरस्य दक्षिणस्यां दिशि सेतुबन्धात् प्रभृत्यनुजलवाहलं पूर्व्वाभिमुखं गत्वा यावदौञ्छिकक्षेत्रं तत्पश्चिमसीम्नि निखातपाषाणं यावत्तस्मादनुसीमोत्तराभिमुखं गत्वा यावच्छमीवल्मीकं तस्मात्पुनः पूर्व्वाभिमुखं गत्वा यावत् स्थलगिरिं तस्मात्पुनरनुगिर्य्युत्तराभिमुखं गत्वा यावद्गिरेरुच्चप्रदेशं तस्मात् पश्चिमाभिमुखं गत्वा यावद्गिरिं तस्मात् पश्चिमाभिमुखं गत्वा यावत्स्थलगिरिं तस्माद्दक्षिणाभिमुखं गत्वा यावत्सेतुबन्धन (नं) स्थितं राजमनेन पञ्चाशदुत्तरनिवर्त्तनशत तलभोगक्षेत्रं चतुस्सीमाविरुद्धम् ॥ **नरिन्दक**नामग्रामे नैर्ऋत्या दिशि नरिन्दक-सामरिवाद (ड) ग्रामपथि मध्यवर्त्तिसिंगतेगतटाकाद् ऋजुसूत्रक्रमेण नरिन्दकग्रामपथ यावत्तावत्स्थितं चत्वारिंशत् नि (सन्नि) वर्त्तनं क्षेत्रं दक्षिणदिशि राजमानेन ॥ **किणयिगे**नामग्रामे पूर्व्वस्या दिशि अशीतिनिवर्त्तनं क्षेत्रं राजमानेन पिशाचाराम नैर्ऋत्या दिशि यावच्छमीझाटवल्मीकं तस्मात् पूर्व्वाभिमुख गत्वा यावत्पथं तस्माद्दक्षिणाभिमुखं गत्वा यावत्स्थलगिरिं तस्मात् पश्चिमाभिमुखमनुस्थलगिरिं गत्वा यावच्छमीस्थलं तस्मादुत्तराभिमुखं गत्वा यावच्छमी-झाटवल्मीकं स्थितं चतुस्सीमाविरुद्धम् ॥ **पन्तिगणगे** नामग्रामे

चतुर्थ पत्र; पहिली ओर।

नैर्ऋत्या दिशि मान्यस्य क्षेत्रं उत्तरस्यां दिशि चत्वारिंशन्निवर्त्तन क्षेत्रं राजमानेन पश्चिमस्यां दिशि स्थलगिरिं तस्मादनुसीमं पूर्व्वाभिमुख गत्वा यावच्छमीवल्मीकं तस्माद्दक्षिणाभिमुखं गत्वा **कोमरञ्चे**-ग्राम-सीम तस्मात्पूर्व्वाभिमुखमनुसीमं गत्वा यावज्जलवाहलं तस्मादुत्तराभिमुखमनुवाहलं गत्वा यावच्छमीझाटवल्मीकं तस्मात्पश्चिमाभिमुखं गत्वा यावत्तटाकोत्तरकोडि (टि) तस्माद्दक्षिणाभिमुखमनुस्थलगिरिं गत्वा यावत्तावत्स्थितं चतुस्सीमाविरुद्धम् ॥

मंगलीनामग्रामपश्चिमदिशि राजमानेन चत्वारिंशन्निवर्त्तन क्षेत्र तस्य सीमान्याह स्थलगिरेः पश्चिमाभिमुखमनुपथं गत्वा याव**द्दूविक**ग्रामसीम तस्मादुत्तराभिमुखमनुसीम गत्वा यावत्स्थलगिरि तस्मात्पूर्व्वाभिमुखमनुस्थलगिरि गत्वा यावत्स्थलगिरि तस्माद्दक्षिणाभिमुखमनुस्थलगिरि गत्वा स्थितं चतुस्सीमाव (वि) रुद्धम् ॥ **करण्डिगे** नाम ग्रामे प–

चतुर्थ पत्र; दूसरी ओर।

श्चिमस्यां दिशि **चन्दवुर-पन्दङ्गवल्लि**नामग्राममार्गमध्ये अश्वत्थतटाकाद् वायव्यां दिशि राजमानेन पञ्चविंशतिनिवर्तनं क्षेत्रम् ॥ **दावनवल्लि**नामग्रामे पश्चिमस्यां दिशि **अलक्तकनगरकुम्बयिज**नामग्राममार्गमध्ये बिम्बालयपिशाचारामात्पश्चिमे राजमानेन चत्वारिंशन्निवर्तनं क्षेत्रम् ॥ पुनरपि तस्मिन्नेव ग्रामे दक्षिणस्यां दिशि हिङ्गुटीतटाकादुत्तरसमीपस्थं राजमानेन शतं नि (शत-नि) वर्तनं क्षेत्रम् ॥ **नन्दिणिगे**नाम ग्रामे पूर्व्वस्यां दिशि **बरवुलिक**सीम **श्रीपुर**मार्गमध्ये राजमानेन चत्वारिंशन्निवर्तनं क्षेत्रम् ॥ **सिरिपत्ति**नामग्रामे पश्चिमस्यां दिशि **श्रीपुर**मार्गतो दक्षिणतो राजमानेन चत्वारिंशन्निवर्तनं क्षेत्रम् ॥ **अर्ज्जुनवाद** (ड) नामग्रामे पश्चिमस्या दिशि श्रीपुरमार्ग्गतो उत्तरतो राजमानेन पञ्चाशन्निवर्तनं क्षेत्रम् ॥ ग्रामनामान्याह ॥ **कुम्बयिज**-द्वादशस्यो (स्या) न्तः **रूविको** नाम

पाँचवाँ पत्र।

ग्रामः प्रथमः ॥ **सामरिवादो (डो)** नाम ग्रामः द्वितीयः ॥ वढमाले द्वादशस्यान्तः **लहिवादो (डो)** नाम ग्रामः तृतीयः ॥ श्रीपुरद्वादशस्य मध्ये **पेल्लिदको** नाम ग्रामः चतुर्त्थः ॥ इत्येते चत्वारो ग्रामाः चतुस्सीमाव (वि) रुद्धक्षेत्रः (त्राः) सोदङ्गाः स (सो) परिकराः अचाटभटप्रवेश्याः

[॥] तदागामिभिरस्मद्वंश्यैरन्यैश्च राजभिरायुरैश्वर्य्यादीनां विलसितमच्छि-रांशुचञ्चलमवगच्छद्भिराचन्द्रार्कधरार्ण्णवस्थितिसमकालं यशश्चिचीशुभिः स्वदत्तिनिर्व्विशेष परिपालनीयमुक्तं च **मन्वादिभिः** ॥

बहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभि-
र्यस्य यस्य यदा भूमिः तस्य तस्य तदा फलम् ।
स्वं दातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्यस्य पालनं
दानं वा पालनं श्रेयो श्रेयो दानस्य पालनम् ॥
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टिं वर्षसहस्राणि विष्ठाया जायते कृमिः ॥

[इं. ए., ७, पृ० २०९–२१७, नं. ४४]

[इस दानपत्रमें पुलिकेशीकी वंशावलि उसके पितामह (बाबा) जयसिंह और उसके पिता रणराग से लेकर दी हुई है। ऊपर विरुदावलिमें यह वाक्यावली आती है, 'जयसिंहस्य राजसिंहस्य सूनुः⋯रणरागोऽभवत्°'— जिससे सर वाल्टर ईलियटने सन्देहास्पदरूपसे यह फलितार्थ निकाला है कि 'राजसिंह' जयसिंहका दूसरा नाम था। पर यदि 'राजसिंह' यह व्यक्तिवाचक नाम हो भी, तो इससे जयसिंहकी उपाधिका ही पता लगेगा, जयसिंहके दूसरे नामका नहीं।

तत्पश्चात् दानपत्रमें उसके (जयसिंहके) एक सामन्त सामियारका उल्लेख है जो रुन्द्रनील—सैन्द्रक वंशका है। यह सामियार कुहुण्डी जिलेका शासक था। इसके बाद यह वर्णन है कि सामियारने अलक्तकनगरमें, जो कि उस जिलेके ७०० गावोंके समूहोंमें एक प्रधान नगर था, एक जैनमन्दिर बनवाया, और राजाज्ञा लेकर, विभव संवत्सरमें जब कि शकवर्ष ४११ व्यतीत हो चुका था वैशाख महीने की पूर्णिमाके दिन चन्द्रग्रहणके अवसर-पर कुछ जमीन और गाँव मन्दिरको दिये।]

१०७

आडूर [जिला धारवाड]; संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

—[?]—

पूर्ववर्ती चालुक्य कीर्त्तिवर्म्मा प्रथमका शिलालेख

[१]............जयत्यनेकधा विश्वं विवृण्वन्नंशुमानिव
............श्री-**वर्द्धमान**देवे....................

[२]..........न् (?) यप-दुःप्रबाधनः [॥]
प्रभास (?) ति भुवं भूयो........................

[३]............प्रताप-क्षत........ि........ि............दान
....

[४]..........कु (?) र (?)-तेजसा **वैजय**
...........र...............

[५]............त्पाशभृद्विषमो यमः चित्तं वा मानसं सत्यं स्थितं
............[॥] तेनेप (?)..........

[६]....**गामुण्ड**-निर्म्मापितजिनालयदानशालादिसंवृद्ध्यै विज्ञप्तेन यशस्विना [।] पञ्चविं-

[७] शति-संख्यान-निवर्त्तन-कृत-श्रमं क्षेत्रं राजमानेन् दत्तं त्वहितरक्षणं [।] [वि]-

[८] श्राव्य साक्षिणः कृत्वा उञ्छोरिन्द-प्रधानकानन्यैरपि च राजन्यै रक्षणीयं स..........[॥]

[९] उक्तं च [।] स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् षष्टिं वर्षसहस्राणि विष्टाय(ा)म् [जाय]-

शूरे विदुषि च विभजन्दानं मानं च युगपदेकत्र ।
अविहितयाथातथ्यो जयति च **सत्याश्रयः**[१] सुचिरम् ॥ ३ ॥
पृथिवीवल्लभशब्दो येषामन्वर्थतां चिरं जातः ।
तद्वंशे (श्ये) षु जिगीषुषु तेषु बहुष्वप्यतीतेषु ॥ ४ ॥
नानाहेतिशताभिघातपतितभ्रान्ताश्वपत्तिद्विपे
नृत्यद्भीमकबन्धखड्गकिरणज्वालासहस्रे रणे ।
लक्ष्मीर्भावितचापलादिव कृता शौर्येण येनात्मसा-
द्राजासीज्जय**सिंहवल्लभ** इति ख्यातश्चु**लुक्यान्वयः** ॥ ५ ॥
तदात्मजोऽभूद्र**णराग**नामा दिव्यानुभावो जगदेकनाथः ।
अमानुषत्व किल यस्य लोकः सुप्तस्य जानाति वपुःप्रकर्षात् ॥६॥
तस्याभवत्तनूजः **पुलकेशी** यः श्रितेन्दुकान्तिरपि ।
श्रीवल्लभोऽप्ययासीद्वा**तापिपुरी**वधूवरताम् ॥ ७ ॥
यत्त्रिवर्गपदवीमलं क्षितौ नानुगन्तुमधुनापि राजकम् ।
भूश्च येन हयमेधयाजिना प्रापितावभृथमज्जना बभौ ॥ ८ ॥
नलमौर्यकदम्बकालरात्रिस्तनयस्तस्य बभूव **कीर्तिवर्मा** ।
परदारनिवृत्तचित्तवृत्तेरपि धीर्यस्य रिपुश्रियानुकृष्टा ॥ ९ ॥
रणपराक्रमलब्धजयश्रिया सपदि येन विरुग्णमशेषतः ।
नृपतिगन्धगजेन महौजसा पृथुकदम्बकदम्बकदम्बकम् ॥१०॥
तस्मिन्सुरेश्वरविभूतिगताभिलाषे
राजाभवत्तदनुजः किल **मङ्गलीशः** ।
यः पूर्वपश्चिमसमुद्रतटोषिताश्वः
सेनारजःपटविनिर्मितदिग्वितानः ॥ ११ ॥

---

१ 'सत्याश्रय' यह पुलकेशीका नामान्तर है ।

स्फुरन्मयूखैरसिदीपिका शतैर्व्युदस्य मातङ्गतमिस्रसंचयम् ।
अवाप्तवान् यो रणरङ्गमन्दिरे **कलच्चुरि**श्रीललनापरिग्रहम् ॥ १२ ॥

पुनरपि च जिघृक्षोः सैन्यमाक्रान्तसालं
रुचिरबहुपताकं **रेवती**द्वीपमाशु ।
सपदि महदुदन्वत्तोयसंक्रान्तबिम्बं
वरुणबलमिवाभूदागतं यस्य वाचा ॥ १३ ॥

तस्याग्रजस्य तनये नहुषानुभावे
लक्ष्म्या किलाभिलषिते **पुलकेशि**नाम्नि ।
सासूयमात्मनि भवन्तमतः पितृव्यं
ज्ञात्वापरुद्धचरितव्यवसायबुद्धौ ॥ १४ ॥

स यदुपचितमन्त्रोत्साहशक्तिप्रयोग-
क्षपितबलविशेषो **मङ्गलीशः** समन्तात् ।
स्वतनयगतराज्यारम्भयत्नेन सार्धं
निजमतनु च राज्यं जीवितं चोज्झति स्म ॥ १५ ॥

तावत्तच्छत्रभंगे जगदखिलमरात्यन्धकारोपरुद्धं
यस्यासह्यप्रतापद्युतिततिभिरिवाक्रान्तमासीत्प्रभातम् ।
नृत्यद्विद्युत्पताकैः प्रजविनि मरुति क्षुण्णपर्यन्तभागै-
र्गर्जद्भिर्वारिवाहैरलिकुलमलिनं व्योम या(जा)त कदा वा ॥ १६ ॥

लब्ध्वा कालं भुवमुपगते जेतुमाप्यायिकाख्ये
गोविन्दे च द्विरदनिकरैरुत्तराम्भोधिरथ्याः ।
यस्यानीकैर्युधि भयरसज्ञत्वमेकः प्रयात-
स्तत्रावाप्तं फलमुपकृतस्यापरेणापि सद्यः ॥ १७ ॥

वरदातुङ्गतरङ्गरङ्गविलसद्धंसानदीमेखलां
वनवासीमवमृद्गतः सुरपुरप्रस्पर्धिनी संपदा ।
महता यस्य बलार्णवेन परितः संछादितोर्वीतलं
स्थलदुर्गं जलदुर्गतामिव गतं तत्तत्क्षणे पश्यताम् ॥१८

गङ्गाम्बु पीत्वा व्यसनानि सप्त हित्वा पुरोपार्जितसंपदोऽपि ।
यस्यानुभावोपनताः सदासन्नासन्नसेवामृतपानशौण्डाः ॥ १९ ॥

कोङ्कणेषु यदादिष्टचण्डदण्डाम्बुवीचिभिः ।
उदस्तास्तरसा **मौर्य**पल्वलाम्बुसमृद्धयः ॥ २० ॥

अपरजलधेर्लक्ष्मीं यस्मिन्पुरीं पुरभित्प्रभे
मदगजघटाकारैर्नावां शतैरवमृद्गति ।
जलदपटलानीकाकीर्णं नवोत्पलमेचकं
जलनिधिरिव व्योम व्योम्नः समोऽभवदम्बुधिः ॥ २१ ॥

प्रतापोपनता यस्य **लाटमालवगूर्जराः** ।
दण्डोपनतसामन्तचर्या वर्या इवाभवन् ॥ २२ ॥

अपरिमितविभूतिस्फीतसामन्तसेना-
मुकुटमणिमयूखाक्रान्तपादारविन्दः ।
युधि पतितगजेन्द्रानीकबीभत्सभूतो
भयविगलितहर्षो येन चाकारि हर्षः ॥ २३ ॥

भुवमुरुभिरनीकैः शासतो यस्य रेवा
विविधपुलिनशोभावन्ध्यविन्ध्योपकण्ठा ।
अधिकतरमराजत्स्वेन तेजोमहिम्ना
शिखरिभिरिभवर्ज्या वर्ष्मणां स्पर्धयेव ॥ २४ ॥

विधिवदुपचिताभिः शक्तिभिः शक्रकल्प-
स्तिसृभिरपि गुणौघैः स्वैश्च माहाकुलाद्यैः ।
अनमदधिपतित्वं यो **महाराष्ट्रकाणां**
नवनवतिसहस्रग्रामभाजां त्रयाणाम् ॥ २५ ॥

गृहिणां स्वगुणैस्त्रिवर्गतुङ्गा विहितान्यक्षितिपालमानभङ्गाः ।
अभवन्नुपजातभीतिलिङ्गा यदनीकेन स**कोसलाः कलिङ्गाः** ॥२६॥

पिष्ट पिष्टपुरं येन जात दुर्गमदुर्गमम् ।
चित्रं यस्य कलेर्वृत्तं जातं दुर्गमदुर्गमम् ॥ २७ ॥

संनद्धवारणघटास्थगितान्तराल
नानायुधक्षतनरक्षतजाङ्गरागम् ।
आसीज्जलं यदवमर्दितमभ्रगर्भा-
कैणालमम्बरमिवोर्जितसांध्यरागम् ॥ २८ ॥

उद्धूतामलचामरध्वजशतच्छत्रान्धकारैर्बलैः
शौर्योत्साहरसोद्धितारिमथनैर्मौलादिभिः षड्विधैः ।
आक्रान्तात्मबलोन्नतिं बलरजःसंछन्न**काञ्चीपुरः**
प्राकारान्तरितप्रतापमकरोद्यः **पल्लवानां** पतिम् ॥ २९ ॥

कावेरी द्रुतशफरीविलोलनेत्रा **चोला**नां सपदि जयोद्यतस्तस्य (?) ।
प्रश्च्योतन्मदगजसेतुरुद्धनीरा संस्पर्शं परिहरति स्म रत्नराशेः ॥ ३० ॥

चोलकेरलपाण्ड्यानां योऽभूत्तत्र महर्द्धये ।
पल्लवानीकनीहारतुहिनेतरदीधितिः ॥ ३१ ॥

उत्साहप्रभुमन्त्रशक्तिसहिते यस्मिन्समन्तादिशो
जित्वा भूमिपतीन्विसृज्य महितानाराध्य देवद्विजान् ।

वातापीं नगरीं प्रविश्य नगरीमेकामिवोर्वीमिमां
चञ्चन्नीरधिनीरनीलपरिखां **सत्याश्रये** शासति ॥ ३२ ॥
त्रिंशत्सु त्रिसहस्रेषु भारतादाहवादितः ।
सप्ताब्दशतयुक्तेषु श (ग) तेष्वब्देषु पञ्चसु (३७३५) ॥३३॥
पञ्चाशत्सु कलौ काले **षट्सु पञ्चशतासु च** (६५६) ।
समासु समतीतासु **शकाना**मपि भूभुजाम् ॥ ३४ ॥
तस्याम्बुधित्रयनिवारितशासनस्य
सत्याश्रयस्य परमाप्तवता प्रसादम् ।
शैलं जिनेन्द्रभवनं भवनं महिम्नां
निर्मापितं मतिमता **रविकीर्तिने**दम् ॥ ३५ ॥
प्रशस्तेर्वसतेश्चास्या जिनस्य त्रिजगद्गुरोः ।
कर्ता कारयिता चापि **रविकीर्तिः** कृती स्वयम् ॥३६॥
येनायोजि नवेऽश्मस्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म ।
स विजयतां **रविकीर्तिः** कविताश्रित**कालिदासभारवि**कीर्तिः ३७

[प्राचीनलेखमाला, प्रथमभाग, ले० १६, पृ० ६८–७२, से उद्धृत]

[यह शिलालेख बीजापुर (पूर्वका कलाद्गी) जिलेके हुङ्गुण्ड तालुकाके ऐहोळेके मेगुटि नामके प्राचीन मन्दिरकी पूर्वकी तरफकी दीवालपर है। लेखमें कुल १९ पंक्तियाँ हैं, जिनमेंसे १८ वी पंक्ति पूर्ण और १९ वीं छोटी पंक्ति बादमें किसीकी जोड़ी हुई हैं और जिनमें महत्त्व-पूर्ण कोई बात नहीं है।

समूचा शिलालेख किसी रविकीर्त्तिका बनाया हुआ है। ये (रविकीर्त्ति) चालुक्य पुलकेशी सत्याश्रय (अर्थात् पश्चिमी चालुक्य पुलकेशी द्वितीय) के राज्यमें थे। यह राजा उनका संरक्षक या पोषक था। इन्होंने शिलालेखवाले जिनालयमें जिनेन्द्रकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा की। प्रतिष्ठाके समय यह लेख उत्कीर्ण करवाया गया था जिसमें सामान्यरूपसे चालुक्य वंशकी, और विशेषतः पुलकेशी द्वितीय (रविकीर्तिके आश्रयदाता) के

पराक्रमोंकी प्रशस्ति है । इस लेखमें आये हुए ऐतिहासिक तथ्योंका पूरा विवरण प्रो० भाण्डारकर और डा० फ्लीटने दिया है[1] ।

इस लेख (या काव्य) का मुख्य भाग १७-३२ श्लोकोंका है । इनको रविकीर्त्ति के आशयानुसार, रघुवंशके (चौथे सर्गके) रघुदिग्विजयके समान, 'पुलकेशी-सत्याश्रय दिग्विजय' कहा जा सकता है । इस काव्य (कविता) की रचनामें रविकीर्त्तिका कालिदासके रघुवंशका तथा भारविके किरातार्जुनीयका गहरा अध्ययन स्पष्ट काम कर रहा है; इसलिए उन्हींके शब्दोंमें उनका यह कथन कि 'स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित-कालिदासभारवि-कीर्तिः' सचमुचमें ठीक है ।

श्लोक २२ में बताया गया है कि पुलकेशीका प्रताप इतना तेज था कि लाट, मालव और गूर्जर लोग अपने-आप ही उनकी शरण आते थे, बलपूर्वक नहीं ।]

[इं० ए०, जिल्द ५, पृ० ६७-७१]

१०९

लक्ष्मेश्वर—संस्कृत ।

—[?]—

जयत्यतिशयजिनैर्भासुरस्सुरवन्दितः ।
श्रीमाञ्जिनपतिस्सृष्टेरादेः कर्त्ता दयोदयः ॥

देहहिसरि (इह हि स्वस्ति) ॥

चालुक्यपृथ्वीवल्लभकुलतिलकेषु वहुष्वतीतेषु **रणपराक्रमाङ्क**महाराजो भवत्तद्राजतनयः राजितनयो विवर्द्धितैश्वर्यश्चतुस्समुद्रान्तख्याततुरङ्गेभपदातिसेनासमूहः **एरेय्य**नामधेयः श्रीमान् ॥

---

१ देखो प्रो० भाण्डारकरकी Early History of the Dekkan, 2nd ed., especially p. 51; और डॉ० फ्लीटकी Dynasties of the Kanarese Districts, 2nd ed. especially p. 349 ff.

अपि च ॥

शासतीमां समुद्रान्तां वसुधां वसुधाधिपे ।
सत्याश्रयमहाराजे राजत्सत्यसमन्विते ॥

भुजगेन्द्रान्वयसेन्द्रावनीन्द्रसन्ततौ अनेकनृपसंत्तेमेश्वतीतेषु तत्कुल-गगनचन्द्रमाः वहुसमरविजयलब्धपताकावभासितदिगन्तरालवलयः **विजयशक्ति**र्न्नाम नृपतिर्ब्बभूव [।॥] तत्सूनुरुदिततरुणदिवाकरकरसम-प्रभः सौ (शौ)र्य्य-धैर्य्य-सत्त्व-गुणोपपन्नः सामन्तवृ(वृ)न्दमौलि-मालवलीढचरणः **कुंन्दशक्ति**र्न्नाम राजाभूत् तस्य प्रियतनयः ॥ अद्वि-तीयपुरुषकारसम्पन्नः । धर्म्मार्थकामप्रधानः अनेकरणविजयवीरपताका-ग्रहणोद्धतकीर्त्तिः [।॥] तेन **दुर्ग्गशक्ति**नामधेयेन **शङ्खजिनेन्द्र**चैत्यनिल-पूजार्थं पुण्याभिवृद्धये च **पुलिगेरे**-नामनगरस्योत्तरपार्श्वे पञ्चाशन्नि-वर्त्तनपरिमाणक्षेत्रं दत्तम् ॥ तस्य सीमा समाख्यायते [।] पूर्व्वतः **किन्न-रीक्षेत्रम्** । पावकदिशि **ज्येष्ठलिङ्ग**भूमिः । दक्षिणतः **घटिका**क्षेत्रम् । नैर्ऋत्यां दिशि **दं (? पं)-डीस (श)** श्रेष्ठिभूमिः । पश्चिमतः **रामे-श्वर**क्षेत्रम् वायव्यां **होनेश्वर**क्षेत्रम् । उत्तरतः **सिन्देश्वर**क्षेत्रं ई (ऐ) शान्यां दिशि **भट्टारी**क्षेत्रम् । तद्दक्षिणतः पूर्व्वोक्त**किन्नरी**क्षेत्रम् ॥

देवस्वं विषं लोके न विषं नें (?) विषमुच्यते ।
विषमेकाकिन हन्ति देवस्वं पुत्र-पौत्रिकम् ॥

[यह लेख, जिसमें उस बड़े शिलालेख (नं. १४९) का दूसरा भाग (पंक्तियाँ ५१-६१) निहित है, 'सेन्द्र' कुलका लेख है।

---

१ यहाँ 'क' की जगह 'म' भी हो सकता है और तब 'मन्दशक्ति' पढ़ा जायगा। २ यह 'न' अतिरिक्त है और भूलसे जुड़ गया है।

इसका प्रारम्भ 'रणपराक्रमाङ्क' नामके एक चालुक्य राजा और उसके पुत्र एरेय्यके उल्लेखसे हुआ है। लेकिन ये दोनों नाम पश्चिमी या पूर्वी चालुक्योंमेंसे किसीकी भी वंशावलीमें अभीतक नहीं मिले हैं। रणपराक्रमाङ्क शायद 'रणराग'के लिये उल्लेखित हुआ है, जो जयसिंह प्रथमका पुत्र और पुलिकेशी प्रथमका पिता था। जयसिंह प्रथमका जो दक्षिणके इस वंशके प्रथम पुरुष हैं, वर्णन कभी-कभी आता है।

इसके अनन्तर 'सत्याश्रय' नामके एक राजाका उल्लेख आता है। परन्तु उससे यह पता नहीं चलता कि इस उपाधि (सत्याश्रय) को धारण करनेवाले किस पश्चिमी चालुक्य राजासे मतलब है।

इसके बाद, सत्याश्रयके समकालवर्तीके तौरपर, 'दुर्गशक्ति' राजाका उल्लेख आता है। यह राजा 'भुजगेन्द्र' अर्थात् नागवंशके अन्वयसे सम्बन्ध रखनेवाले सेन्द्र राजाओंके वंशका था। यह विजयशक्तिके पुत्र कुन्दशक्तिका पुत्र था।

इसमें दुर्गशक्तिके द्वारा शङ्खजिनेन्द्र नामके चैत्यके लिये दिये गये भूमिदानका कथन है। यह भूमिदान पुलिगेरे नगरमें किया गया था।

लेखका काल नहीं दिया गया है। यह संभवतः प्राचीनतर कालका मालूम पड़ता है, जो यहाँ सिर्फ पूर्वकालके लेखके निश्चय या सुरक्षाके लिये ही दुहराया गया है।]

[इं० ए०, जिल्द ७, पृ० १०१-१११, नं० ३८ (पंक्तियाँ ५१-६१)]

११०

[यह लेख श्रवण-बेल्गोलाका संस्कृत और कन्नडमें है। इसे 'जैन शिलालेख-संग्रह प्रथम भाग' में देखना चाहिये।]

[L. Rice, EC, II, sr.-Bel. ins. no. 24.]

१११

लक्ष्मेश्वर—संस्कृत।

[शक ६०८=ई० सन् ६८७]

[यह लेख (मूल) इलियटके हस्तालिखितसंग्रहकी पहली जिल्दमें पृष्ठ २२ पर दिये गये ८७ पंक्तिवाले एक लेखका चौथा भाग है और पंक्ति ६९

वींसे शुरू होता है। उस समस्त लेखका सिर्फ कुछ भाग ही उस पुस्तकमें पाषाण-लेखपरसे लिया गया है, पूरा लेख नहीं। इसलिये उस लेखका यहाँ देना मुश्किल होनेसे सिर्फ उसकी विगत यहाँ दी जाती है।

उस विशाल लेखकी ६९ वीं पंक्तिसे एक दूसरा पश्चिमी चालुक्य शिलालेख शुरू हो जाता है। इस लेखकी ६९ से ८२ तककी पंक्तियाँ यद्यपि अस्पष्ट हैं, फिर भी अति सुरक्षित हैं; उसके नीचेकी पाँच पंक्ति-योंका भी कुछ निशानोंसे पता चल जाता है, यद्यपि अक्षर इतने घिसे हुए हैं कि पढनेमें नहीं आते। इसमें पो(पु)लिकेशीवल्लभसे लेकर विनया-दित्य-सत्याश्रय तककी वंशावली है और मूलसङ्घ अन्वयकी देवगण शाखाके किसी आचार्यको, उसके द्वारा दिये गये, दानका उल्लेख है। यह दान ६०८ शक वर्षके वीतनेपर जब उसके राज्यका पाँचवाँ या सातवां वर्ष चालू था और जब उसकी विजयका कैम्प (विजयस्कन्धा-वार) रक्तपुर नगरमें लगा हुआ था, माघ महीनेकी पूर्णमासीको दिया गया था। यह काल ७७-७८-पंक्तियोंमें यों दिया हुआ है:—अष्टोत्तर-षट्-छतेषु शकवर्षेष्वतीतेषु प्रवर्द्धमानविजयराज्यपञ्चम-(? सप्तम)-संवत्सरे श्री रक्तपुरमधिवसति विजयस्कन्धावारे माघमासे पौर्णमास्याम्। यहाँ वार (दिन) नहीं दिया हुआ है।]

[इं० ए० ७, पृ० ११२, नं० २९, चतुर्थभाग]

११२

श्रवणबेलगोला (विना कालका)-कन्नड।

(देखो "जैन शिलालेख संग्रह प्रथम भाग"।)

११३

लक्ष्मेश्वर—संस्कृत।

[शक ६५१=ई० सन् ७२९]

[यह लेख (मूल) इलियटके हस्तलिखित संग्रह (Elliot's Ms. Collection) की पहली जिल्दमें पृष्ठ २२ पर ८७ पंक्तिके एक बड़े लेखमें दिया हुआ है। उसमेंसे पंक्ति २८ से शुरू होकर पंक्ति ५३ तक

पश्चिमी चालुक्योंका शिलालेख है। इसमें पो (पु) लिकेशीवल्लभ, अर्थात् पुलिकेशी प्रथमसे लेकर विजयादित्य सत्याश्रय तककी वंशावली दी हुई है तथा यह भी उल्लेखित है कि अपने राज्यके चौतीसवें वर्षमें जब कि शक संवत्के ६५१ वर्ष व्यतीत हो चुके थे फाल्गुनकी पूर्णिमाके दिन, जब कि उसका विजय-स्कन्धावार-रक्तपुर नगरमें था, पुलिकर नगरकी दक्षिण सीमापर बसे हुए कर्दम गाँवका दान अपने पिताके पुरोहित उदयदेव पण्डितको, जिन्हें 'निरवद्यपण्डित' भी कहते थे, दिया। ये श्रीपूज्यपादके शिष्य थे तथा मूलसंघ अन्वयकी देवगण शाखाके थे। यह दान पुलिकर नगरमें शङ्ख-जिनेन्द्रके मन्दिरके हितार्थ दिया गया था। कालनिर्देश पंक्ति ४२–४४ में यों दिया हुआ हैः—एकपञ्चाशदुत्तरषट्छतेषु शकवर्षे-ष्वतीतेषु प्रवर्त्तमान-विजयराज्यसंवत्सरे चतुस्त्रिंशे वर्त्तमाने श्री-रक्तपुरमधि-वसति विजयस्कन्धावारे फाल्गुनमासे पौर्ण्णमास्याम्। वार (दिन) इसमें नहीं दिया हुआ है।]

[इं० ए०, ७, पृ० ११२, नं० २९ (द्वितीय भाग)]

११४

लक्ष्मेश्वर—संस्कृत।

[शक ६५६=७३४ ई०]

स्वस्ति [॥]

जयत्याविःकृतं **विष्णो**र्व्वाराहं क्षोभिताण्णर्वं।
दक्षिणोन्नतदंष्ट्राग्रविश्रान्तभुवनं वपुः ॥

श्रीमतां सकलभुवनसंस्तूयमान**मानव्य**सगोत्राणां **हारीति**-पुत्राणां सप्तलोकमातृभिः सप्तमातृभिरभिवर्द्धितानां **कार्त्तिकेय**परिरक्षणप्राप्त-कल्याणपरम्पराणां भगव**न्नारायण**प्रसादसमासादित**वराह**लाञ्छनेक्षणव-शीकृताशेषमहीभृतां **चालुक्यानां** कुलमलंकरिष्णोरश्वमेधावभृथस्नानप-वित्रीकृतगात्रस्य **श्रीपोलिकेशीवल्लभ**महाराजस्य प्रियसूनुः **श्रीकी-र्त्तिवर्म्म**पृथ्वीवल्लभमहाराजस्तस्यात्मजस्य **सत्याश्रय**श्रीपृथ्वीवल्लभमहा-

राजाधिराजपरमेश्वरस्य प्रियतनयः (यस्य) प्रभावकुलिशदलितपाण्ड्य-**चोल-केरल-कदम्ब**प्रभृतिभूभृदुदग्रविभ्रमस्य नित्यावनत**काञ्ची**पतिमुकुटचुम्बितपादाम्बुजस्य **विक्रमादित्यसत्याश्रय**श्रीपृथ्वीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरस्य प्रियसूनुः (नोः) सकलोत्तरापथनाथमथनोपार्ज्जितपालिध्वजादिसमस्तपारमैश्वर्यचिह्नस्य **विनयादित्यसत्याश्रय**श्रीपृथ्वीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरपरमभट्टारकस्य प्रियात्मजः साहसरसरसिकः पराङ्मुखीकृतशत्रमण्डलस्सकलपारमैश्वर्यव्यक्तिहेतुपालिध्वजाद्युज्व (ज्ज्व)लराज्यचिह्नो **विजयादित्यसत्याश्रय**श्रीपृथ्वीवल्लभमहाराजाधिराज(जः) [॥] [तत्-]प्रियसूनोः प्रतिदिनप्रवर्द्धमानया(यौ)वनो (नस्य) रिपुमण्डलाक्रान्तिराज्याभ्युदयः (यस्य) कस्तूरीकिशोरविक्रमैकरसो (सस्य) **विक्रमादित्यसत्याश्रय**श्रीपृथ्वीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरभट्टारकस्य विजयस्कन्धावारे **रक्तपुर**मधिवसति **षट्पञ्चाशदुत्तरषट्छतेषु शकवर्षेष्वतीतेषु प्रवर्द्धमानविजयराज्यसंवत्सरे द्वितीये वर्त्तमाने माघपौर्णमास्यां मूलसंघान्वयदेवगणो**दितः (ताय) परमतप(पः)श्रुतमूर्त्तिविशे(शो)**करामदेवाचार्य्य**शिष्यो (ष्याय) विजितविपक्षवादि**जयदेवपण्डि**तान्तेवासी (सिने) समुपगतैकवादित्वादि**श्रीविजयदेवपण्डिताचार्य्याय** जिनपूजाभिवृद्ध्यर्थं वाह्लवलिश्रेष्ठिविज्ञापनेन **पुलिकर**नगरस्य **शङ्खतीर्थवसते**र्म्मण्डनमण्डितं तस्य **धवलजिनालयस्य** जीर्णोद्धारणं कृत्वा खण्डस्फुटितनवसंस्कारबलिनिमित्तं दानशीलादिप्रवर्त्तनार्त्थं नगरादुत्तरस्यां दिशि गव्यूतिप्रमाणव्यवस्थितं **कर्प्पटि**तटाकाद्दक्षिणस्यां दिशि राजमानेन शतार्द्धनिवर्त्तनप्रमाणक्षेत्रं सर्व्वबाधापरिहारं दत्तम् [॥] तस्य सीमा समाख्यायते। पूर्व्वदिशि तत्साधिनकिन्नरपाषाणाद्दक्षिणस्यामाशायां धवलपाषाणपार्श्वे-

शम्यः । पश्चिमस्यां दिशि **श्वेतपाषाणा**देकशमी उत्तरस्यां दिशि **आनीलपाषाणात्** प्राक्प्रकाशिततटाकात् पूर्व्वस्यां दिशि **अरुणपाषाणात्** पूर्व्वोक्तव्यक्त**किन्नरपाषाण**संगता सीमा ॥

स्व दातु सुमहच्छक्यं दुःखमन्यस्य पालनम् ।
दानात्पालनाच्चेति (दानं वा पालनं चेति) दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम् ॥
न विषं विषमित्याहुः देवस्वं विषमुच्यते ।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्व पुत्र-पौत्रिकम् ॥
स्वदत्ता परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टि-र्वर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

प्रथ्यताम् जिनशासनम् [॥]

[इं० ए०, जिल्द ७, पृ० १०१–१११, नं० ३८ (पंक्तियॉ ६१–८२)]

[यह लेख उस बड़े लेख (नं. १४९) का तीसरा व अन्तिम भाग (पंक्तियाँ ६१-८२ तक) है। यह पश्चिमी चालुक्य विक्रमादित्य द्वितीय-का लेख है। यह उसके राज्यके द्वितीय वर्षका है जब कि शक वर्ष ६५६ (७३४-५ ई०) व्यतीत हो चुका था, और फलतः पूर्व किसी लेख (शिला-लेख या ताम्रपत्र) से यहॉ निश्चय या सुरक्षाके लिये दुहराया गया है। यह लेख उसकी छावनी 'रक्तपुर' से निकाला गया है। 'रक्तपुर' आज-कलका कौन-सा स्थान है, यह नहीं कहा जा सकता।

इसमें 'पुलिकर'—पूर्वके दो शिलालेखोंका 'पुलिगेरे'—शहरकी 'शङ्ख-तीर्थवसति' तथा 'धवलजिनालय' नामके एक दूसरे मन्दिरकी सजावट तथा मरम्मतका उल्लेख है और कहा गया है कि 'जिन' की पूजाके प्रबन्धके लिये कुछ भूमिदान किया गया।

यह लेख अपने वंशावली-परिचायक भागमें पश्चिमी चालुक्योंके शिला-लेखोंसे मिलता है। इसमें दो आगेकी पीढ़ियोंका—विजयादित्य और विक्र-मादित्य द्वितीयका, जो विनयादित्यके क्रमशः पुत्र और पौत्र हैं,—भी उल्लेख है।]

११५

पञ्चपाण्डवमलै—(आर्कटके निकट)-तामिल

—[?]—

१. नन्दिप्पोत्तरश[^] क्कु अय् [म्] वदावदु **नाग[ण]न्दि-** गुर [वर्]

२. [इरु] क **पोन्जिय [क्] किय[ा]र्** पडिमं कोट्टुघिट्टा [न्]

३. **पु[ग]ळालैमंग[ल]**त्तु मरुत्तुवर् मगन् **नारण-**

४. न् [॥]

अनुवाद—नन्दिप्पोत्तरशर्के ५ वें (वर्ष) में,—पुगळालैमङ्गलके मरुत्तुवरके पुत्र नारणन् (नारायण) ने नागणन्दि (नागनन्दि) गुरुकी मूर्तिके साथ-साथ पोन्जियक्कियार्की मूर्त्ति खुदवाई।

[EI, IV, no. 14, A.]

११६

अनहिलवाड-पाटन—संस्कृत।

(संवत् ८०२= ई० स० ७४५)

यह शिलालेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है।

[J. Burgess and H. Cousens, Antiquity of North Gujerat (A SI, XXXII).]

११७

श्रवणबेल्गोला (विना कालका)—संस्कृत।

[देखो "जैन शिलालेख-संग्रह प्रथम भाग"।]

११८

नन्दी (गोपीनाथ पर्वत)—संस्कृत।

विना कालनिर्देशका [=संभवतः ७५० ई० (लु० राइस)

[नन्दीमें, गोपीनाथ पहाड़ीके ऊपर गोपालस्वामी मन्दिरके पासकी चट्टानपर]

स्वस्ति श्रीमत् जितं भगवता जिनवर-वृषभेण वृषभेण पुरा कलि-अवसर्पिण्यां द्वावरे युगे लोक-स्थितिरक्षार्त्थं काङ्क्षित-मनुष्य-जन्मना पुरुषोत्तमेन सूर्य्य-वंश-व्योम-सूर्य्येण महारथेन दाशरथिना **राम-स्वामिना** प्रतिष्ठापिताय भगवतोर्हतः परमेष्ठिनः सर्व्वज्ञस्य चैत्य-भवनाय पश्चात् पाण्डवजनन्या **को(कु)न्तिदेव्या** पुनर्न्नवीकृत-संस्काराय भूमिदेव्यास्तिलकायमानाय स्वर्ग्गापवर्ग्ग-पदयोस्सोपान-पदवीभूताय धराधर-धरणेन्द्रस्य फणा-मणि-लीलानुकारिणे धराधरवराय जिनेन्द्र-चैत्य-सान्निध्यात् पावनाय परम-तीर्त्थाय तपश्चरण-परायण-महर्षि-गणाध्यासित-कन्दराय **श्रीकुन्दाख्याय** (यहाँ बन्द हो जाता है)

[वृषभ-देवको नमस्कार करनेके बाद,—

प्राचीन समयमें, कलि-अवसर्प्पिणीके द्वापर-युगमें, सूर्यवंशके गगनमें सूर्यके समान, दशरथके पुत्र महारथ राम-स्वामी (रामचन्द्रजी)के द्वारा अर्हन्त-परमेष्ठीका यह चैत्य-भवन प्रतिष्ठापित किया गया । बादमें, पाण्डवोंकी माता कुन्तीने इसे फिरसे नया बनवा दिया ।

भूमिदेवीको तिलकके समान, स्वर्ग और अपवर्ग दोनोंके लिये सीढ़ी, सब पर्वतोंमें उत्तम, जिनेन्द्र-चैत्य (बिम्ब)के सान्निध्यसे पवित्रीकृत, परमतीर्थ, जिसमें जगह-जगह तपश्चरण-परायण महर्षिगणोंके लिये कन्दराएँ (गुफायें) बनी हुई हैं, ऐसा 'श्रीकुन्द' नाम पर्वत (यहाँ लेख खतम हो जाता है ।[1])

[EC, X, Chik-ballapur tl , no. 29.]

११९

वेलवत्ते—कन्नड़ ।

विना काल-निर्देशका (संभवतः लगभग ७५० ई०)

[वेलवत्ते-मैसूर तालुकेमें, बसवेश्वर मन्दिरके पश्चिमकी ओर]

नेरेयर्दे एर्देनु मुने·······ळलियु प्रभिन्न-वाग्वि विळोरु गुर्रि····

---

१ प्रारम्भके शब्द 'स्वस्ति' को यहाँ अन्तमें लगा देनेसे यह लेख सभाव्य-रूपसे पूर्ण समझा जा सकता है, क्योंकि 'स्वस्ति'के योगमें चतुर्थी विभक्ति होती है, जो यहाँ है ।

डुं एल्दु दवे तम्म क्षेमकिरदल्लि-मेच्चिर ताळ्व्दु परत्रे यपुदेवदेरू महा-प्रभु-गोवपय्यन् इन्त् इळ्दपु समाधियोळे मुडिपि ताळ्दिदल्लितमरेन्द्र-भोगमं ॥ पदेदोम् श्री-पुरुषय्यल् आम्मु-मोदलोळ् कल्नाडन् अन्दों वळेक् एदेयोळ् अक्कुडु भूतिमूतुगानो दोत धाण धीक्षे सळे पडेदे····पितृ-कळत्र-मित्र-जनमं काव्यान्य ताळ्द् अप्पोडी-तुडियल् वेल्कुमे पेम्पन् ओप्प गुणते तोळमिकिळ्द गोपय्यनम् ॥

[महाप्रभु गोवपय्यको श्रीपुरुषकी तरफसे भूमि-दान मिला था और वे (गो. प.) समाधिमरणपूर्वक मरे थे ।]

[EC, III, Mysore tl., no. 6]

१२०

देवलापुर—कन्नड़ ।

विना कालनिर्देशका (संभवतः लगभग ७५० ई०)

[देवलापुर (कृष्णराजपेटे (कृष्णनहल्लि तालुका), मारीगुडीके पूर्वमें]

स्वस्ति श्रीपुरुष-महा········पृथुवी-राज्यकेये अरट्टि····रम्मगन्दिर् सिंगं दीक्षे वीळादु अरट्टि-तीरर् कुडलूरद गोट्टे मडिओडे-यम्बर् आळ्विकय

(पृष्ठभागपर)

नोकज-ओडे आगदीकड········कोट्ट नेल तेनेन्धक काल्र्केकु साक्षी कुडलूर पोक्कुलरुं एळमडियरु एळिरियरुं मद्गुगरुं कागव्वरुं साक्षि आग कोट्टदु आळ् आळ् किडिशिदोन वारणासिया शासिर-कविले शासिर-पार्वर् कोन्द कोले आका कोडिशिदोनु········कडुवेडिळोनुडि तेन्न·· ळिद् खचोनु····अरट्टिग तळर कुडलूर् आन्वत्ति

[जिस समय इस पृथ्वीपर श्री-पुरुष महाराज राज्य कर रहे थे;— अरट्टि······के पुत्र सिंगम् के (जिन) दीक्षा लेनेके बाद, (उसकी मां) अरट्टितिने कुडलूर् किलेके मडि-ओडेके द्वारा शासित प्रदेशमें भूमिदान् किया ।]

[EC, III, Mysore tl., no. 25.]

१२१

देवरहल्लि—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

शक सं० ६९८=७७६ ई०

[देवरहल्लि (देवलापुर प्रदेश)में, पटेल कृष्णय्यके ताम्रपत्रोंपर]

(Ib) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जाह्नवेयकुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखण्डितमहाशिलास्तम्भलब्धबलपराक्रमो दारुणारिगणविदारणोपलब्धव्रणविभूषणभूषितः काण्वायन-सगोत्रः श्रीमत्**कोङ्गणिवर्म्मधर्म्ममहाधिराजः** तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्तिः सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकाञ्चननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृ-प्रयोक्तृकुशलो **दत्तकसूत्रवृत्तेः** प्रणेता श्रीमान् **माधवमहाधिराजः** तत्पुत्रः पितृपैतामहगुणयुक्तोऽनेकचातुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्वादितयशः श्रीमद्**हरिवर्म्ममहाधिराजः** तस्य पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (IIa) नारायणचरणानुध्यातः श्रीमान् **विष्णुगोपमहाधिराजः** तत्पुत्रः त्र्यम्बकचरणाम्भोरुहरजःपवित्रीकृतोत्तमाङ्गः स्वभुजबलपराक्रमक्रयक्रीतराज्यः कलियुगबलपङ्कावसन्नधर्म्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्रीमान् **माधवमहाधिराजः** तत्पुत्रः श्रीमत्कदम्बकुलगगनगभस्तिमालिनः **कृष्णवर्म्ममहाधिराजस्य** प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितान्तरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वस्तु ? (विद्वत्सु) प्रथमगण्यः श्रीमान्

कोङ्गणिमहाधिराजः अविनीतनामा तत्पुत्रो विजृम्भमाणशक्तित्रयः **अन्दरि-आलत्तूर्-प्पोरुळरें-पेर्नगरा**द्यनेकसमरमुखमखहुतप्रहतशूर-पुरुषपशूपहारविघसविहस्तीकृतकृतान्ताग्निमुखः किरातार्जुनीयपञ्चदश-सर्ग- (IIb) टीकाकारो **दुर्व्विनीत**नामधेयः तस्य पुत्रो दुर्द्दान्तविमर्द्दविमृदितविश्वम्भराधिपमौलिमालामकरन्दपुञ्जपिञ्जरीक्रियमाणचरण-युगलनलिनो **मुष्कर**नामधेयः तस्य पुत्रश्चतुर्द्दशविद्यास्थानाधिगत-विमलमतिः विशेषतोऽनवशेषस्य नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो रिपुतिमिरनिकरनिराकरणोदयभास्करः **श्रीविक्रम**प्रथितनामधेयः तस्य पुत्रः अनेकसमरसम्पादितविजृम्भितद्विरदरदनकुलिशाघात-व्रणसंरूढभास्वद्विजयलक्षणलक्ष्मीकृतविशालवक्षस्थलः समधिगतसकलशास्त्रार्थतत्त्वस्समाराधितत्रिवर्गो निरवद्यचरितः प्रतिदिनमभिवर्द्धमानप्रभावो **भूविक्रम**-नामधेयः

अपि च—

> नानाहेतिप्रहारप्रविघटितभटोरःकवाटोत्थितासृग्-
> धारास्वाद-प्र(IIIa) मत्तद्विपशतचरणक्षोदसम्मर्द्दभीमे ।
> संग्रामे **पल्लवेन्द्रं** नरपतिमजयद्यो **विळन्दा**-भिधाने
> **राज-श्रीवल्लभा**ख्यस्समरशतजयावाप्तलक्ष्मीविलासः ॥
> तस्यानुजो नतनरेन्द्रकिरीटकोटि-
> रत्नार्कदीधितिविराजितपादपद्मः ।
> लक्ष्म्या स्वयम्वृतपतिर्**न्नवकाम**नामा
> शिष्टप्रियोऽरिगणदारणगीतकीर्त्तिः ॥

तस्य **कोङ्गणिमहाराजस्य शिवमारा**परनामधेयस्य पौत्रः सम-वनतसमस्तसामन्तमुकुटतटघटितवहलरत्नविलसदमरधनुष्खण्डमण्डितच-

रणनखमण्डलो नारायण[चरण]निहितभक्तिः शूरपुरुपतुरगनरवारणघटासं-घट्टदारुणसमरशिरसि निहितात्मकोपो भीमकोपः प्रकटरतिसमयसमनु-वर्त्तनचतुरयुवतिजनलोकधूर्त्तोऽलोकधूर्त्तः सुदुर्द्धरानेकयुद्धमूर्धलब्धविजय-सम्पद् हितगजघ (IIIb) टाकेसरी राजकेसरी । अपि च ।

> यो गङ्गान्वयनिर्म्मलाम्बरतलव्याभासनप्रोल्लसन-
> मार्त्तण्डोऽरिभयङ्करः शुभकरस्सन्मार्गरक्षाकरः ।
> सौराज्यं समुपेत्य राज्यसमितौ राजन् गुणैरुत्तमै-
> राज-**श्रीपुरुष**श्चिरं विजयते राजन्य-चूडामणिः ॥
> कामो रामासु चापे दशरथतनयो विक्रमे जामदग्न्यः
> प्राज्यैश्वर्ये बलारिर्ब्बहुमहसि रविस्स्व-प्रभुत्वे धनेशः ।
> भूयो विख्यातशक्तिस्स्फुटतरमखिलं प्राणभाज विधाता
> धात्रा सृष्टः प्रजानां पित(पति)रिति कवयो यं प्रशंसन्ति नित्यं ॥

तेन प्रतिदिनप्रवृत्तमहादानजनितपुण्याहघोषमुखरितमन्दिरोदरेण श्रीपुरुषप्रथमनामधेयेन **पृथुवीकोङ्गणिमहाराजेन अष्टानवत्युत्तरे-[षु] षट्च्छतेषु शकवर्षेष्वतीतेष्वात्मनः प्रवर्द्धमानविजयैश्वर्य्ये संवत्सरे पञ्चाशत्तमे प्रवर्त्तमाने मान्यपुर**मधिव-(IVa)सति विजयस्कन्धावारे श्रीमूल-मूलगणाभिनन्दित**नन्दिसङ्घा**न्वये **एरेगित्तू**-र्नाम्नि गणे **पुलिकल्**गच्छे स्वच्छतरगुणकिर[ण]प्रततिप्रह्लादितसकललोकः चन्द्र इवापरः **चन्द्रनन्दी**नाम गुरुरासीत् तस्य शिष्यस्समस्तविबुधलो-कपरिरक्षणक्षमात्मशक्तिः परमेश्वरलालनीयमहिमा कुमारवद्द्वितीयः **कुमार-ण(न)न्दी** नाम मुनिपतिरभवत् तस्यान्तेवासी समधिगतसकलतत्त्वार्थ-समर्थितवुधसार्थसम्पत्सम्पादितकीर्त्तिः **कीर्त्त(र्त्ति)नन्द्याचार्यो** नाम महामुनिस्समजनि तस्य प्रियशिष्यः शिष्यजनकमलाकरप्रबोधनकः

मिथ्याज्ञानसन्ततसन्तमससन्तानान्तिकसद्धर्मव्योमावभासनभास्करः **विमलचन्द्राचार्य**स्समुदपादि तस्य (IV b) महर्षेर्द्धर्म्मोपदेशनया श्रीमद्बाणकुलकलः सर्व्वतपमहानन्दीप्रवाहः महादण्डमण्डलाग्रखण्डितारिमण्डलद्रुमपण्डो दुण्डुप्रथमनामधेयो **नीर्गुन्द**युवराजो जज्ञे तस्य प्रियात्मजः आत्मजनिततनयविशेषनिःशेषीकृतरिपुलोकः लोकहितमधुरमनोहरचरितः चरितार्थत्रिकरणप्रवृत्तिः **परमगूळ**प्रथमनामधेयश्री**पृथुवीनीर्गुन्दराजो**ऽजायत पल्लवाधिराजप्रियात्मजाया सगरकुलतिलकात् **मरुवर्म्मणो** जाता **कुन्दाच्चि**नामधेया भर्तृभवन आवभूव भार्य्या तया सततप्रवर्त्तितधर्म्मकार्य्यया निर्म्मिताय **श्रीपुरो**त्तरदिशमलङ्कुर्व्वते **लोकतिलक**नाम्ने **जिनभवनाय** खण्डस्फुटितनवसंस्कारदेवपूजादानधर्म्मप्रवर्त्तनार्थं तस्यैव **पृ**(Va)**थिवीनीर्गुन्दराज**स्य विज्ञापनया महाराजाधिराजपरमेश्वरश्री**जसहितदेवेन** नीर्गुन्दविषयान्तर्पाति **पोन्नळ्ळि**नामग्रामस्सर्व्वपरिहारोपेतो दत्तः तस्य सीमान्तराणि पूर्व्वस्यां दिशि नोलिवेळ्दा वेळ्गल्-मोरीदि पूर्व्वदक्षिणस्यां दिशि पणयङ्केरी दक्षिणस्या दिशि वेळ्गाल्लिगेरेया ओळ्गेरेया पल्लदा कूडळ् दक्षिणपश्चिमायान्दिशि जैदरा केय्या वेळ्गल्-मोर्डु पश्चिमायान्दिशि पोङ्केत्रि नाल्तुवायराकेरी पश्चिमोत्तरस्यां दिशि पुणसेया गोट्टेगाल्य कल्कुप्पे उत्तरस्यां दिशि सामगेरेया पोल्लदा पेर्म्मुरिक्कु उत्तरपूर्व्वस्यां दिशि कळम्वेत्ति-गट्टु इमान्यन्यानि क्षेत्रान्तराणि दत्तानि दुण्डुसमुद्रदा वयल्ल् किर्उदारीमेगे **पदिर्कण्डुगं** मण्णं **पळेया एरेनल्लूरा** ऊर्प्पाळु ओर्कण्डुगं **श्रीवुरदा दु** (Vb) **ण्डुगामुण्डरा** तोण्टदा पडुवायोन्दुनोण्ट श्रीवुरदा वयल्ल् कर्म्मगोट्टिनल्लि इर्कण्डुगं कळनि पेर्गेरेया केळगे आर्उगण्डुगमेरे पुल्गेरेया कोयिलगोडा एडे इर्प्पत्तुगण्टुगं व्वेडे आदुवु श्रीवुरदा वडगण पडुवण कोणुळ्ळण् **देवङ्गेरि** मदमने ओन्दं

मूवत्ता-ओन्दु मनेय मनेताणमस्य दानसाक्षिणः अष्टादश प्रकृतयः ॥
(VIa) अस्य दानस्य साक्षिणः **षण्णवतिसहस्र**विषयप्रकृतयः योऽस्या-पहर्त्ता लोभात् मोहात् प्रमादेन वा स पञ्चभिर्म्महद्भिः पातकैस्संयुक्तो भवति यो रक्षति स पुण्यभाग्भवति अपि चात्र मनु-गीताः श्लोकाः

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टिं वर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥
स्वं दातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्यस्य पालनम् ।
दानं वा पालन वेति दानाच्छ्रेयोनुपालनम् ॥
वहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिः तस्य तस्य तदा फलम् ॥
देवस्वं तु विष घोरं न विषं विषमुच्यते ।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्र-पौत्रकम् ॥

सर्व्वकलाधारभूतचित्रकलाभिज्ञेन **विश्वकर्म्माचार्य्येणेदं** शासनं लिखितं चतुष्कण्डुकव्रीहिवीजावापमात्रं द्विकण्डुककङ्गुक्षेत्रं तदपि ब्रह्म-देयमिव रक्षणीयम् ॥

[इस लेखमें सर्वप्रथम गङ्गनरेशोंकी राजपरम्परा बताई गई है। वह निम्न भाँति थीः—

१ काण्वायनसगोत्रीय कोङ्गणिवर्म्म-धर्म्म-महाराजाधिराज ।
इनके पुत्र—
२ माधव-महाधिराज; ये दत्तकसूत्र-वृत्ति (टीका)के प्रणेता थे ।
इनके पुत्र—
३ हरिवर्म्म-महाधिराज ।
इनके पुत्र—
४ विष्णुगोप-महाधिराज ।
इनके पुत्र—

५ माधव-महाधिराज । इनके पुत्र—

६ कदम्बकुलके सूर्य कृष्णवर्म्म महाधिराजकी बहिनके पुत्र अविनीत नामके कोङ्गणि-महाधिराज थे । इनके पुत्र—

७ दुर्व्विनीत थे । इन्होंने अन्दरि, आलत्तूर्, पोरुळरे, पेळनगर तथा और भी अन्य जगहोंके युद्धोंको जीता था। ये किरातार्जुनीय संस्कृत काव्यके १५ सर्गों तकके टीकाकार भी थे । इनके पुत्र—

८ मुष्कर थे । इनके पुत्र—

९ श्रीविक्रम । इनके पुत्र—

१० भूविक्रम हुए, जिन्होंने विळन्द नामक स्थानमें पल्लवेन्द्र नरपतिको जीता था । सौ युद्धोंमें जीतनेसे प्राप्त लक्ष्मीका विलास (भोग) करनेसे इनको 'राज-श्रीवल्लभ' भी कहते थे। इनके अनुजका नाम नवकाम था।

इसके पश्चात्— उन कोङ्गणिमहाराजका जिनका दूसरा नाम 'शिवमार' था पौत्र

११ राज–श्रीपुरुष हुआ । इन्हींका द्वितीय नाम 'पृथिवीकोङ्गणिमहाराज' था। ये जब, शक सं० के ६९८ वर्ष वीत जाने पर और अपने राज्यका जब ५० वाँ वर्ष चालू था, अपने विजयस्कन्धावार मान्यपुरमें निवास कर रहे थे, तबः—

मूल मूलसंघमेंसे निकले हुए नन्दिसंघके एरेगित्तूर्-गणके पुलिकल्-गच्छमें चन्द्रनन्दि गुरु हुए । उनके शिष्य कुमारनन्दि मुनिपति, उनके शिष्य कीर्त्तिनन्द्याचार्य, उनके शिष्य विमलचन्द्राचार्य हुए।

१२ इन महर्षिके धर्मोपदेशसे निर्गुन्द युवराज, जिनका पहला नाम 'दुण्ड' था और जो 'बाणकुल' के नाशक प्रतिबुद्ध हुए थे । इनके पुत्र—

१३ पृथिवी-निर्गुन्द-राज हुए। इनका पहला नाम परमगूळ था। इनकी पत्नीका नाम कुन्दाचि था। यह सगरकुल-तिलक मरुवर्म्माकी पुत्री थीं और इनकी माता पल्लवाधिराजकी प्रियपुत्री थीं जो मरुवर्म्माकी पत्नी थीं। इसने (कुन्दाचिने) श्रीपुरकी उत्तर दिशामें 'लोकतिलक' नामका

जिनमन्दिर बनवाया था। उसकी मरम्मत, नई वृद्धि, देवपूजा, दानधर्म आदिकी प्रवृत्तिके लिये पृथिवी-निर्गुन्द-राजके कहनेसे महाराजाधिराज परमेश्वर श्री-जसहित-देवने निर्गुन्द देशमें आनेवाले 'पोन्नल्लि' ग्रामका दान, सर्व करों और बाधाओंसे मुक्त करके दिया।

इसके बाद इस लेखमें इस गाँवकी आठ दिशाओंकी सीमा दी हुई है। तथा अन्य क्या-क्या क्षेत्र दानमें दिये गये थे उनकी सूची है। दानके साक्षी कौन कौन थे, इसका उल्लेख है। तत्पश्चात् मनुके वे प्रसिद्ध चार श्लोक हैं जो बहुत-से शिलालेखोंके अन्तमें पाये जाते हैं। सबसे अन्तमें, इस लेख (शासन) को उत्कीर्ण करनेवाले शिल्पीने अपना नाम 'विश्व-कर्म्माचार्य' दिया है तथा उसी समय उसको भी कुछ भूमिदान किया गया था उसका भी इसमें उल्लेख है।]

[EC, IV, Nagamangala tl. n° 85]

१२२

मण्णे—संस्कृत।

शकवर्ष ७१९=७९७ ई०

[मण्णेमें, शीलवन्त रुद्रय्यके अधिकारके ताम्रपत्रों पर]

(१ व) स्वस्ति जित भगवता गत-घन-गगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जाह्नवेय-कुलामल-व्योमावभासन-भास्करः स्वखड्गैकप्रहार-खण्डित-महा-शिला-स्तम्भ-लब्ध-बल-पराक्रमो दारुणारि-गणविदारणोपलब्ध-व्रण-विभूषण-भूषितः काण्वायन-सगोत्रः श्रीमत्-**कोङ्गणि-वर्म्म-धर्म्म-महाधिराजः**, तस्य पुत्रः पितुरन्वागत-गुण-युक्तो विद्या-विनय-विहित-वृत्तः(त्तिः) सम्यक्-प्रजा-पालन-मात्राधिगत-राज्य-प्रयोजनो विद्वत्कवि-काञ्चन-निकषोपल-भूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृ-प्रयोक्तृ-कुशलो **दत्तक-सूत्र-वृत्तेः** प्रणेता श्रीमान् **माधव-महाधिराजः**, तत्पुत्रः पितृ-पितामह-गुण-युक्तोऽनेकचातुर-दन्त-युद्धावाप्त-चतुरुदधि-सलिलास्वादितयशश्श्रीम**द्धरिवर्म्म-महाधिराजः**, तत्पुत्रो द्विज-गुरु-देवता-पूजन-परो नारायण-चरणानुध्यातः

श्रीमान् **विष्णुगोपमहाधिराजः**, तत्पुत्रस् त्र्यम्बक-चरणाम्भोरुह-रजः पवित्रीकृतोत्तमाङ्गः स्व-भुज-बल-पराक्रम-क्रय-(२ अ)कृ(क्री)तराज्यः कलि युग-बल-पङ्कावसन्न-धर्म्म-वृषोद्धरण-नित्य-सन्नद्धः श्रीमान् **माधव-महाधि राजः**, तत्पुत्र [श्] श्रीमत्-कदम्ब-कुल-गगन-गभस्तिमालिनः **कृष्णव र्म्म-महाधिराजस्य** प्रिय-भागिनेयो विद्या-विनयातिशय-परिपूरितान्तरात्म निरवग्रह-प्रधान-शौर्य्यो विद्वत्सु प्रथम-गण्यः श्रीमान् **कोङ्गणि-महाधि राजः अविनीत**-नामा, तत्पुत्रो विजृम्भमाणशक्ति-त्रयः अन्दरि-आल त्तूर्-प्पोरुळरे-पेळ्नगराद्यनेकसमर-मुख-मख-हुत-प्रहत-शूर-पुरुष-पशूप- हार-विघस-विहस्तीकृत-कृतान्ताग्नि-मुखः किरातार्जुनीय-पञ्च-दश-सर्ग- टीकाकारो **दुर्व्विनीत**-नामधेयः, तस्य पुत्रो दुर्द्दान्त-विमर्द्द-विमृदित- विश्वम्भराधिप-मौळि-माला-मकरन्द-पुञ्ज-पिञ्जरीक्रियमाण-चरण-युगलन- लिनो **मुष्कर**-नामधेयः, तस्य पुत्रश्चतुर्द्दश-विद्या-स्थानाधिगत-विमल-मति- र्व्विशेषतोऽनवशेषस्य नीति-शास्त्रस्य वक्तृ (क्तृ)-प्रयोक्तृ-कुशलो रिपु- तिमिर-निकर-निराक[र]णोदय-भास्करः **श्रीविक्रम**-प्रथित-ना[म]धेयः, तस्य पुत्रः अनेक-समर-सम्पादित-विजृ (२ ब) म्भित-द्विरद-रदन- कुलिशाभिघात-वर्ण्ण(व्रण)संरूढ-भास्वद्विजय-लक्षण-लक्षीकृत-विशाल-व- क्षस्थलः समधिगत-सकल-शास्त्रार्थ-तत्त्वस्समाराधित-त्रिवर्गो निरवद्य- चरित[ः]प्रतिदिनमभिवर्द्धमान-प्रभावो **भूविक्रम**नामधेयः

अपि च

नाना-हेति-प्रहार-प्रविघटित-भटोरःकवाटोत्थितासृग्-
धारास्वाद-प्रमत्त-द्विप-शतचरण-क्षोद-सम्मर्द्द-भीमे ।
सङ्ग्रामे **पल्लवेन्द्रं** नरपतिमजयद् यो **विळन्दा**भिधाने
राजा **श्रीवल्लभा**ख्यस्समर-शत-जयावाप्त-लक्ष्मी-विलासः ॥

तस्यानुजो नत-नरेन्द्र-किरीट-कोटि-
रत्नार्क-दीधिति-विराजित-पाद-पद्मः ।
लक्ष्म्या स्वयम्वृत-पतिर्न्नव-काम-नामा
शिष्ट-प्रियोऽरि-गण-दारण-गीत-कीर्त्तिः ॥

तस्य **कोङ्गुणि-महाराजस्य शिवमारा**पर-नामधेयस्य पौत्रः समवनतसमस्त-सामन्त-मुकुट-तट-घटित-बहल-रत्न-विलसदमर-धनुष्-खण्ड-मण्डितचरण-नख-मण्डलो नारायण-चरण-निहित-भक्ति[:]शूर-पुरुष-तुरग-नरवारण-घटा-संघट्ट-दारुण-समर-शिरसि मी(निहि)तात्म-कोपो मीम-कोपः प्रकटरति-समय-समनुवर्तन-चतुर-युवति-जन-लोक-धूर्त्तोऽलोक-धूर्त्तः सुदुर्धरानेक-युद्ध-मूर्द्ध-लब्ध-विजय-सम्पदहित-गज-घटा-केसरी राज-केसरी ।

अपि च

यो गङ्गान्वय-निर्म्मलाम्बर-तल-व्याभासन-प्रोल्लसन्-
मार्त्तण्डोऽरि-भयकरश्शुभकरस्सन्मार्ग्ग(३ अ) रक्षा-करः ।
सौराज्यं समुपेत्य राजसमितौ राजद्(न्)-गुणैरुत्तमै
राजा श्रीपुरुषश्चिरं विजयते राजन्य-चूडामणिः ॥
कामो रामासु चापे दशरथ-तनयो विक्रमे जामदग्न्यः
प्राज्यैश्वर्य्ये बलारिर्बा(ब)हु-महसि रविः स्व-प्र[भुत्]वे धनेशः ।
भूयो विख्यात-शक्तिस्स्फुटतरमखिलप्राण-भाजं विधाता
धात्रा सृष्टः प्रजानां पतिरिति कवयो यं प्रशंसन्ति नित्यम् ॥

स तु प्रतिदिन-प्रवृत्त-महादान-जनित-पुण्याह-घोष-मुखरित-मन्दिरोदरः **श्रीपु[रु]ष**-प्रथम-नामधेयः **पृथिवी-कोङ्गणि-[म]हाधिराजः,** तत्पुत्रः प्रताप-विनमित-सकल-महीपाल-मौलि-माला-ललित-चरणारविन्द-युगलो निज-भुज-विराजि-निशित-खड्ग-पट्ट-समाकृष्टानिष्ट धरावल्लभ-

जय-श्री-समालिङ्गितस्समर-मुख-सम्मुखागत-रिपु-नृपति-गज-घटा-कुम्भ-निर्भेदनोच्चलित-रक्त-च्छटा-पात-पाटलित-निज-भुज-स्तम्भः आ-कर्ण-समाकृष्ट-चाप-चक्र-विनिर्मुक्त-नाराच-परम्परा-पात-पातितारातिमण्डलो बहु-समर-समार्जित-जय-पताका-शत-[श]वलित-नभस्-तलः

यस्मिन् प्रयातवति कोप-वशं महीशे
यान्ति क्षणादहित-भूमिभुजो रणाग्रे ।
अन्त्रावली-वलय-भीषणमन्तक (३ ब) स्य
वक्त्रान्तरं क्षतज-कर्द्दम-दुर्न्निरीक्ष्यम् ॥

स तु शिशिरकर-निर्म्मल-निज-यशो-राशि-विशदीकृत-दशाशा-चक्र[:] समस्त-चक्रवर्त्ति-लक्षणोपलक्षितो निरपेक्षा-परोपकार-सम्पादनैक-व्यसनः प्रवर्त्तित-न्याय-बल-समुन्मूलित-कलि-काल-विलसितो निपुण-नीति-प्रयोगापहसित-बृहस्पतिः कु-नृपति-कदम्बक-कपाट-कोटि-विघट्टित-धर्म्मबलं ....न....शिलास्तम्भायमान-चरितः सतत-प्रवृत्त-दान-सन्तर्प्पित-द्विजाति-लोकः ।

प्रोन्मूलित-विकारेण सर्व्व-लोकोपकारिणा ।
यस्य दानेन दिङ्-नाग-दान-धाराप्यधःकृता ॥

अपि च

जटानां संघातैरिह भुवि कृतोऽनून-विपदाम्
कलानामाधारो बुध-जन-हितः पालन-परः ।
गुणानां शुद्धानामपि नियतमुत्पत्ति-भवनम्
नृपाणां नेता....कविरिति मतः काव्य-कुशलः ॥

दुर्व्व(द्दुरव)गाह-फणिसुत-मत-पारावार-पारदृश्वा प्रमाण-शास्त्र-शाण-निशातीकृत-धीर-धिषणः सामज-तन्त्र-तत्त्वावबोध-विमदीकृत-सु(बु)धो

हस्तिनी-(व)वक्त्रोद्भव-यति-प्रवर-मतावबोधन-गभीर-मतिर्व्विद्वान्-मति-वितति-विकल्प..........विचार-विचक्षणोऽङ्गीकृ[त]-तुरङ्गमागम-प्रयोग-परिणतो धनु-र्व्विद्याम्भोरुह-वन-गहन-विकासित-विदग्ध-म(४ अ)रीचि-माली निज-निर्म्मित-गज-मत-कल्पनानल्प-चेता विराजित-सेतु-बन्धनो नन्दित-विपश्चिन्मण्डलस्सकल-नाटक-विषय-सन्धि-सन्ध्यङ्गादि-योजना-चतुरो निरुपम-निज-रूप-निर्जित-मकरध्वजो मकरध्वज-गुरु-चरण-सरोज-विनमन-पवित्री-कृतोत्तमाङ्गो **मुदुकुन्दूरु**-नाम-ग्रामोपविष्ट-**राष्ट्रकूट-चालुक्य-हैहय**-प्रमुख-प्रवीर-सनाथ-वल्लभ-सैन्य-विजय-विख्यापित-प्रभावः ।

अपि च ।

घोराश्वीयं समन्तात् प्रबलमुपगत-व्याप्त-दिक्-चक्रवालम्
निर्ज्जित्यानेक-संख्यैर्न्निशित-निज-भुजोन्मुक्त-नाराच-जालैः ।
देवो यः प्राज्य-तेजस् तिमिरमिव महत्-तीव्रभानुर्म्मयूखैर्
दुर्व्वारोदार-पातैरुदयमभिलपन् स्वन्निवेशं विवेश ॥

स तु हरिरिव सतत-सम्भावित-द्विज-पतिः सहस्रकिरण इव प्रति-दिवसोचितोदयः भुजङ्गलोक इव विगत-भयो (?) आत्माकर इवास्पृष्ट-कलङ्को दुर्य्योधनोऽप्यभिनन्दितार्ज्जुन-गुणो वाहिनी-पतिरप्यजडाशयः शीतकरोऽप्यनालिङ्गित-मलिन-भावो राष्ट्रकूट-पल्लवान्वय-तिलकाभ्यां मूर्द्धा-भिषिक्त-**गोविन्द-राज-नन्दि-वर्म्मा**भिधेयाभ्यां समनुष्ठित-राज्याभिषेका-भ्यां निज-कर-घट्टित-पट्ट-विभूषित-ललाट-पट्टो विख्या[त]-विमल-गङ्गान्वय-नभस्-तल-गभस्तिमाली **कोङ्गुणि-महाराजाधिराज-परमेश्वर-श्री-शिव-मार-देवः** (४ व) ॥ तत्पुत्रो निज-भुज-निहित-निशात-हेति-पात-पातिताराति-वर्गो वर्ग्ग-द्वयोपार्ज्जनार्ज्जितोर्ज्जित-यशस्सन्तान-सन्तर्प्पित-स-

मस्त-जन-हृदयः प्रभवत्कलि-काल····विवर्द्धित-कलङ्क····लाय····कल्प-कल्याण-चरितः स्ववंश-विशद-वियदंशुमाली समस्त-नीति-शास्त्र-प्रयोग-प्रवीणाग्रगण्यस्तुरङ्गमारोहण-नैपुण्य-प्रीणित-क्षोणीपति-सुत-सहस्र-लब्ध-साम-ध्वनिरनेक-सङ्गर-रङ्ग-सङ्गमाङ्गीकृत-जय-श्री-समालिङ्गित-भुजङ्ग-भोगाभ-भीम-भुज-दण्डः

यस्मिन् शासति सत्य-धाम्नि विमले राजन्वती मेदिनी
यस्मि····र्य्यमुपेत्य वृंहित-बलो धर्म्मोऽधिकं जृम्भते ।
यस्यैवाभय-दायिनोऽतिदयिता दोश्शालिनश्शाश्वती
लक्ष्मीर्यत्र यशो-निधौ पतिमती जाता जगद्वल्लभा ॥

स तु पितामह इवानेक-राजहंस-संसेवितः पद्मावासश्च मधुमथन इव त्रिलोकाधिक-विक्रमाक्षिप्त-बलि-रिपुरहीन-स्थितिरविश्व धूर्जटिरिवाविनश्व-रेश्वर-भावो वीर-भद्रश्च कार्त्तिकेय इव सकल-जगदुदीरित-स्वामि-शब्दश्शक्ति-सम्पन्नश्च महा-मेरुरिव स्व-महिमाधःकृत-महीभृन्मण्डलो महासत्त्वश्च ।

अपि च ।

मन्वादि-(षोड) (५ अ) षोडश-महीश-गुणानुरागो
यं प्राप्य विस्मृति-पदं ज [ग] तो जगाम ।
यस्य प्रतापदहनोऽहित-बुद्धि-वार्द्धाव्
और्व्वायते नरपतेरतिदूरतोऽपि ॥

यश्च समर-शिरसि····कलत्रे च निज-जने मित्रायते रिपु-तिमिर-निचये च अनेक-प्रकारण-रणकार्द्दितान्तःकरणानां शरणायते सम्पदां च अतिप्रभूत-मनि-निकेत-तमस्-तनि-तिरस्कृतौ प्रद्योतायते····खिल-जगद-नुल्लङ्घिताज्ञा-सम्पत्तौ च सकल-कुवलय-लोचनानन्दकरतायां द्विजेशायते हरि-वाहन-निहित-चित्तत्वे च ।

अपि च ।

यस्यैकस्यापि सर्व्वं जगदपि स-रुषो नाग्रतस् स्थातुमीष्टे
दित्सा-सम्भूत-बुद्धेरपि नव निधयो यस्य नालं नृपस्य ।
जिह्रे तीव्राभिमानात् कपट-विजयिनां यद्-धृतेर्न्नाकधाम्नाम्
[रा] ज्ञां विज्ञातकीर्ति [स्स] सकल-जगतां नन्दनो **मारसिंहः** ॥

यश्च सतत-सम्पादित-कमलानन्दोऽप्यप्रचण्डकरः पुण्य-जन-सत्त्व-समेतोऽप्यनृशंस-मानसः मत्त-मातङ्ग-स्कन्ध-लालितोऽप्यति-शुचि-स्वभावः प्रिय-धनुरप्यमार्ग्गणः समनुष्ठित-दण्ड-नीतिरप्यदण्डक्रम-गतिः ॥

अपि च ।

धूसरीकुरुते यस्य चरणाम्भोज-जं रजः ।
प्रणतानन्त-सामन्त-चूडामणि-मधुव्रजम् ॥

तेन **लो** (५ ब) **क-त्रिनेत्रा**पर-नामधेयेन समधिगत-यौवराज्य-पदेन भगवत्सहस्र-किरण-चरण-नलिन-षट्चरणायमान-मानसेन ॥ त-स्मिंश्च प्रसाधिताशेष-सामन्त········अखण्डं **गङ्ग-मण्डल**मनुशासति श्री**मारसिंहा**भिधाने आसीत् समस्त-सामन्त-सेनाधिपतिः परमार्हतः परम-धार्म्मिकः मन्त्र-प्रभूत्साह-शक्ति-सम्पन्नः **श्रीविजयो** नाम यश्च सहस्रदी-धितिरिव तिरोहिताखिल-पर-तेजः पर-तेजः-प्रसरोऽपि असन्तापित-भूतलः सुनाशीर इवाखण्डित-सकल-जनाज्ञोऽपि अगोत्र-भेदन-करः गुह इव शक्ति-समुत्सारिता-वर्गोऽपि अकृत-बल-भावः शिशिरगभस्तिरिव प्रह्लादनो-द्योतनसमर्थोऽपि अदोषाश्रित-विग्रहः वारिराशिरिव अपरिमित-सत्व-समाश्रयोऽपि अपङ्क-मल-गृहीतः विनतानंद [न] इव अतिदूर-द [र्श] नोऽपि अपिशिताशनः शतक्रतुरिव बुध-गुरु-मित्र-परिवृतोऽपि न [प] र-दार-रति-शप्तः झषकेतन इव स्ववशीकृत-सकल-जनोऽपि अप्र (प)

हृत-बलाबलो-तप....यश्च अमृतमयो भृत्यानां सुखमयो मित्राणां सुधामयो रामाणामुत्साहमयः प्रजानां विनयमयो गुरूणां नयसूत्र (६ अ) लद्-वृत्तीनां अग्रणी रसिकानां स्रष्टा काव्य-रचनानां उपदेष्टा नयानां द्रष्टा स्वामि-कार्य्याणां विद्वेष्टा कृत-दोषाणां यष्टा महा-मखाना परिमार्ष्टा पापानां प्रष्टा निर्म्माण-हेतूनां परिकृष्टा श्रितागसाम् ।

अपि च ।

उदन्वानिव गाम्भीर्य्ये विवस्वानिव तेजसि ।
शशलक्ष्मेव लावण्ये नभस्वानिव यो बले ॥
मनोभूरिव सौरूप्ये मघवानिव सम्पदि ।
सुरमन्त्रीव शास्त्रार्थे उशनेव च यो नये ॥
ग्रामे पुरे नदी-तीरे गिरौ द्वीपे सरोऽन्तिके ।
प्रावर्त्तयत् स्व-कीर्त्याभा योऽनेकं वसतिं प्रभुः ॥
स **मान्यनगरे** श्रीमान् **श्रीविजयो**ऽकार [य] च्छुभम् ।
जिनेन्द्र-भवन तुङ्गं निर्म्मलं स्व-महस्-समम् ॥

तस्य च प्रसाधिताशेष-सामन्त-चन्द्रस्य श्री-**मारसिंह**स्यानुज्ञया **श्रीविजयो** महानुभावः **किपु-वेक्कूर**-ग्राममादाय **मान्यपुर**-विनिर्म्मिताय भगवदर्हदायतनाय अदादिति तस्य च ग्रामस्य (यहाँ सीमाओंकी विस्तृत चर्चा आती है) ।

अपि च ।

आसीद(त्)-**तोरणाचार्य्यः** कोण्डकुन्दान्वयोद्भवः
स तै [ट] द्विपये धीमान् **शाल्मली**ग्राममाश्रितः ॥
निराकृततमोऽरातिः स्थापयन् सत्पथे जनान् ।
स्वतेजोद्द्योतित-क्षोणिः चण्डार्च्चिरिव यो बभौ ॥

तस्याभूत् **पुष्पनन्दी**ति शिष्यो विद्वान् गणाग्रणीः ।

तच्छिष्यश्च **प्रभाचन्द्रः** तस्येय वसतिः कृता ॥

(३ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है)

इदष **शक-वर्ष एळनूरा पत्तोम्भत्तु वर्षमुं मूषु तिङ्गळुमाषाढ-शुक्ल-पक्षदा पञ्चमियुमुत्तराभाद्रपतेमुं सोमवारमुं** शासनं निर्मितं । अस्य दानस्य साक्षिणः **षण्णवति-सहस्र**-विषय-प्रकृतयः योऽस्यापहर्त्ता लोभान्मोहात् प्रमादेन वा स पञ्चभिर्महद्भिः पातकैस्संयुक्तो भवति यो रक्षति स पुण्यवान् भवति

अपि चात्र मनु-गीताः श्लोकाः

स्वदत्तां पर-दत्तां वा यो हरेत वसुंधराम् ।

(७ अ) षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्ठा [यां जा] यते कृमिः ।

स्वं दातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्यस्य पालनम् ।

दानं वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम् ॥

बहुभिर्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः ।

यस्य यस्य यदा भूमिः तस्य तस्य तदा फलम् ॥

ब्रह्मस्वं तु विषं घोरं न विपं विपमुच्यते ।

विषमेकाकिनं हन्ति देव-स्वं पुत्र-पौत्रकम् ॥

सर्व्व-कलाधारभूत-चित्र-कलाभिज्ञेय-**विश्वकर्म्माचार्य्येणे**दं शासनं लिखितं चतुष्कण्डुक-व्रीहि-बीजावाप-क्षेत्रं द्वि-कण्डुक-कङ्गु-क्षेत्रं तदपि देव-भोगमिति रक्षणीयम् ॥

[जाह्नवी (गङ्ग)-कुलके स्वच्छ आकाशमें चमकते हुए सूर्य; काण्वायन-सगोत्रके

(१) श्रीमत्-कोङ्गणिवर्म-धर्म-महाधिराज थे ।

(२) उनके पुत्र श्रीमान् माधव-महाधिराज थे ।

(३) उनके पुत्र श्रीमद् हरिवर्म-महाधिराज थे।

(४) ,, ,, श्रीमान् विष्णुगोप-महाधिराज थे।

(५) ,, ,, ,, माधव-महाधिराज थे'।

(६) उनके पुत्र, जो कदम्ब-कुलवंशीय कृष्णवर्म्म-महाधिराजकी प्रिय वहिनके पुत्र थे, अविनीत नामके श्रीमान् कोङ्गणि-महाधिराज थे।

(७) उनके पुत्र दुर्विनीत थे। इन्होंने अन्दरि, आलत्तूर्, पोरुलणे, पेळ्नगर और दूसरे स्थानोंके युद्धोंको जीता था। इन्होंने किरातार्ज्जुनीय के १५ सर्गोंपर टीका की थी।

(८) इनके पुत्र मुष्कर थे।

(९) उनके पुत्र श्रीविक्रम थे, ये चौदहों विद्याओंमें पारङ्गत थे।

(१०) उनके पुत्र भूविक्रम थे। इन्होंने विळन्दकी भयानक लड़ाईमें राजा पल्लवेन्द्रको जीता था, और सौ लड़ाइयोंमें विजय लाभ करनेसे इनको 'राजश्रीवल्लभ' भी कहते थे।

(११) उनका छोटा भाई नव-काम था।

(१२) शिवमार-कोङ्गणि महाराजका नाती श्रीपुरुष था, उन्हें पृथिवी-कोङ्गणि-महाधिराज भी कहते थे।

(१३) उनके पुत्र, प्रसिद्ध गंगवंशके स्वच्छ आकाशके सूर्य, कोङ्गणि-महाराजाधिराज परमेश्वर श्री-शिवमार-देव थे। इनकी बहुत-सी प्रशंसाका वर्णन है।

(१४) उनके पुत्र, मारसिंह थे।

जब वे अखण्ड गङ्ग-मण्डलपर राज्य कर रहे थे;-उनका एक श्रीविजय नामका सेनापति था। उसकी प्रशंसा। उसने मान्य-नगरमें एक शुभ, विशाल जिनमन्दिर बनवाया। उसे श्रीमारसिंहसे किपु-चेकूरु गाँव मिला था, वह उसने इसी अर्हत्-मन्दिरको भेंट कर दिया। इस गाँवकी सीमायें।

शाल्मली गाँवमें रहनेवाले, कोण्डकुन्दान्वयके तोरणाचार्य्य थे। उनके शिष्य पुष्पनन्दि थे। उनके शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जिन्होंने अपना आवास यहीं बना लिया था। जडियके तालावोंकी नीचेकी जो जमीनें उनको दी गई थीं उनकी विगत। यह शासन (लेख) शक वर्ष ७१९ के १ महीने बाद, आषाढ शुक्ल पञ्चमी, उत्तरभाद्रपद, सोमवारको निकला था।

इस दानके साक्षी—९६००० के विद्यमान अफसर (अधिकारी गण)। वे ही शापात्मक श्लोक ।

विश्वकर्म्माचार्य्यने इस शासनको लिखा था । प्रभाचन्द्र देवको दी गई भूमिकी विगत ।]

[EC, IX, Nelamangala, tl., n° 60]

१२३

मन्ने—संस्कृत ।

शक ७२४=८०२ ई०

[मन्नेमें, शानभोग नरहरियप्पके अधिकारके ताम्रपत्रोंपर]

(१ ब) स वोऽव्याद् वेधसां धाम यन्नाभि-कमलं कृतम् ।
हरश्च यस्य कान्तेन्दु-कलया कमलङ्कृतम् ॥
भूयोऽभवद् बृहदुरुस्थल-राजमान-
श्री-कौस्तुभायत-करैरुपगूढ-कण्ठः ।
सत्यान्वितो विपुल-बाहु-विनिर्जितारि-
चक्रोऽप्यकृष्ण-चरितो भुवि **कृष्ण-राजः** ॥

पक्ष-च्छेद-भयाश्रिताखिळ-महा-भूभृत्-कुल-भ्राजितात्
दुर्लङ्घ्यादपरैरनेक-विपुल-भ्राजिष्णु-रत्नान्वितात् ।
यश्चालुक्यकुलादनून-विबुधा[....]श्रया [द्] वारिधेः
लक्ष्मीं मन्दरवत् स-लीलमचिरादाकृष्टवान् **वल्लभः** ॥
तस्याभूत् तनयः प्रता [प]-विसरैराक्रान्त-दिङ्-मण्डलश्
चण्डांशोस्सदृशोऽप्य-चण्ड-करतःप्रह्लादित-क्ष्माधरो ।
धोरो धैर्य्य-धनो विपक्ष-वनिता-वक्त्राम्बुज-श्री-हरो
हारीकृत्य यशो यदीयमनिशं दिङ्-नायिकाभिर्धृतम् ॥

ज्येष्ठोल्लंघन-जातयाप्यमलया लक्ष्म्या समेतोऽपि सन्
योऽभून्निर्म्मल-मण्डल-स्थिति-युतो दोषाकरो न क्वचित् ।
कर्ण्णाधः-कृत-दान-सन्तति- (२ अ) भृतो यस्यान्य-दानाधिकम्
दानं वीक्ष्य सु-लज्जिता इव दिशां प्रान्ते स्थिता दिग्-गजाः ॥
अन्यैर्न्न जातु विजितं गुरु-शक्ति-सारं
आक्रान्त-भूतलमनन्य-समान-मानम् ।
येनेह बद्धमवलोक्य चिराय **गङ्गान्**
दूरे स्व-निग्रह-भियेव कलिः प्रयातः ॥
एकत्रात्म-बलेन वारिनिधिनाप्यन्यत्र रुध्वा धनान्
निष्कृष्टासि-भटोद्धतेन विहरद्-ग्राहातिभीमेन च ।
मातङ्गान् मद-वारिनिर्झर-मुचः प्राप्यानतात् **पल्लवात्**
तच्चित्रं मद-लेशमप्यनुदिनं यस्स्पृष्टवान् न क्वचित् ॥
हेला-स्वीकृत-**गौड**-राज्य-कमलान् चान्तःप्रविश्याचिराद्
उन्मार्गे मरु-मध्यम-प्रतिबलैर्यो **वत्सराजं** बलैः ।
गौडीयं शरदिन्दु-पाद-धवल-च्छत्र-द्वयं केवलम्
तस्मादाहृत-तद्-यशोऽपि ककुभां प्रान्ते स्थितं तत्-क्षणात् ॥
लब्ध-प्रतिष्टमचिराय कलिं सुदूरम्
उत्सार्य्य शुद्ध-चरितैर्धरणी-तलस्य ।
कृत्वा पुनः कृत-युग-श्रियमप्यशेषम्
चित्रं कथ **निरुपमः** कलि-वल्लभोऽभूत् ॥
प्राभू-(२ ब)द् धर्म-परात् ततो निरुपमादिन्दुर्य्यथा वारिधेः
शुद्धात्मा परमेश्वरोन्नत-शिरस्-संसक्त-पादस्तया ।
पद्मानन्दकरः प्रताप-सहितो नित्योदयस्सोन्नतः
पूर्व्वाद्रेरिव भानुमानभिमतो **गोविन्दराजः** सताम् ॥

यस्मिन् सर्व्व-गुणाश्रये क्षितिपतौ श्री-**राष्ट्रकूटा**न्वयो
जाते **यादव**-वंशवन्मधुरिपावासीद् अलङ्घ्यः परैः ।
दृष्टा सावधयः कृतास्सु-सदृशाः दानेन येनोद्धृताः
युक्ताहार-विभूषिताः स्फुटमिति प्रत्यर्थिनोऽप्यर्थिनः ॥
यस्याकारमनानुपं त्रिभुवन-व्यापत्ति-रक्षोचितम्
कृष्णस्येव निरीक्ष्य यच्छति पदं यद्याधिपत्य भुवः ।
आस्तां तात तवेयमप्रतिहता दत्ता त्वया कण्ठिका
किन्त्वाज्ञैव मया धृतेति पितरं युक्तं स तत्राभ्यधात् ॥
तस्मिन् स्वर्ग-विभूषणाय जनने याते यशश्शेषताम्
एकीभूय समुद्यतान् वसुमती-संहारमाधित्सया ।
त्रि-च्छायान् सहसा व्यधत्त नृपतीनेकोऽपि यो द्वादश
ख्यातानप्यधिक-प्रताप-विसरैस्संवर्त्त (३ अ) कोल्कानिव ॥
येनात्यन्त-दयालुनोग्र-निगल-क्लेशादपास्यानतस्
स्वं देशं गमितोऽपि दर्प्प-विसरद् यः प्रा [··]कूल्ये स्थितः ।
लीला-भ्रू-कुटिले ललाट-फलके यावच्च नालक्ष्यते
विक्षेपेण विजित्य तावदचिरादाबद्ध-गङ्गः पुनः ॥
सन्धायासि शिलीमुखान् स्व-समयात् बाणासनस्योपरि
प्राप्तं वर्द्धित-बन्धु-जीव-विभवं पद्माभिवृद्ध्यान्वितम् ।
सर्व्वं क्षेत्रमुदीक्ष्य य शरद्-ऋतु पर्ज्जन्यवद् **गूर्ज्जरो**
नष्टः क्वापि भयात् तथापि समयं स्वप्नेऽप्यपश्यन्····॥
यत्पादानति-मात्र ·· क-शरणानालोक्य लक्ष्मी-धिया
दूरान् **मालव**-नायको नय-परो यत्रातिबद्धाञ्जलिः ।
यो विद्वान् बलिना सहाल्प-बलवान् स्पर्द्धां न धत्ते पराम्
नीतेस्सूतिरसौ यदात्म-परयोराधिक्य-सम्वेदनम् ॥

विन्ध्याद्रेः कटके निविष्ट-कटकः श्रुत्वा चरैर्य्यन्निजैः
स्वं देशं समुपागतः ध्रुवमिव ज्ञात्वा धिया प्रेरितः ।
माराशर्व्व-महीपतिर्भृतमगादप्राप्त-पूर्व्वां (३ ब) परैर्
व्यस्येच्छामनुकूल[··········]धनैः पाद-प्रणामैरपि ॥
नीत्वा श्रीभवने घनाघन-घन-व्याप्तां परं प्रावृषम्
तस्मादागतवान् समं निज-बलैरा-तुङ्गभद्रा-तटम् ।
तत्रस्थः स्व-करागतं प्रकृतिभिर्न्निश्शेषमाकृष्टवान्
विक्षेपैरपि चित्रमानत-रिपुर् ज्जग्राह तं **पल्लवात्** ॥
लेखाहार-मुखोदितार्द्ध-वचसा यत्रा····**वेङ्गीश्वरो**
नित्यं किङ्करवद् व्यधा(द)विरतं····र्म्म स्वमात्मेच्छया ।
वाह्यालि-वृत्तिरस्य येन रचिता व्योमावलग्ना रुचम्
चित्र मौक्तिक-मालिकामिव धृताम्मूर्द्ध[न्]इ स्व-तारा-गणैः ॥
सन्त्रासात् पर-चक्र-राजकमगात् तच्छुद्ध-सेवा-विधि-
व्यावद्धाञ्जलि-शोभितेन शरणं मूर्ध्ना यदङ्घ्रि-द्वयम् ।
यद्यादत्त परार्द्ध्य-भूषण-गणैर्न्नालङ्कृतं तत् तथा
मा भैश्चिरिति सत्य-पालित-यशस्-स्थित्या यथा तद्गिरा ॥
तेनेदमनिल-विद्युच्चञ्चलमवलोक्य जीवितमसारम् ।
क्षिति-दानमपरपुण्यं प्रवर्त्तित देव-भोगाय ॥

स (४ अ) च परम-भट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-श्रीमद्-**धारा-चर्षदेव**-पादानुध्यात-परम-भट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-पृथिवी-वल्लभ प्रभूतवर्ष-श्रीमत्-**गोविन्दराजदेवः** ।

भ्राताभूत् तस्य शक्ति-त्रय-नमित-भुवः **शौचकम्भा**भिधानो
ज्येष्टस्त्यागाभिमान-प्रभृति-गुण-गणाधः-कृतादि-क्षितीशः ।
राजा राजारि-लोकास्थिर-तिमिर-घटा-पाटने शुद्ध-वृत्तः
स श्रीमान् दिक्षु कीर्त्तिश्शशिविशद-रुचिस्स्थापिता येन भूयः ॥

तेन शौच-कम्भ-देवेन **रणावलोका**पर-नाम्ना राजाधिराज-परमेश्वर-श्री**प्रभूतवर्षा**नुज्ञानुमतेन

कोण्डकुन्दान्वयोदारो **गणो**ऽभूत् भुवन-स्तुतः ।
तदैदत्-विषय-विख्यातं **शाल्मली**-ग्राममावसन् ॥
आसीत् [····)**ता(तो)रणाचार्य्य**स्तपः-फल-परिग्रहः ।
तत्रोपशम-सम्भूत-भावनापास्तकल्मषः ॥
पण्डितः **पुष्पणन्दी**ति बभूव भुवि विश्रुतः ।
अन्तेवासी मुनेस्तस्य स-कलश्चन्द्रमा इव ॥
प्रतिदिवस-भवद्-वृद्धि-निरस्त-दोषो व्यपेत-हृदय-मलः ।
परिभूत-चन्द्र-विम्बस् तच्छिष्योऽभूत् **प्रभाचन्द्रः** ॥

(४ व) तस्य धर्म्मोपदेश-परितुष्ट-हृदयतया च सत्येन धर्म्म-तनयः स्फुरत्प्रतापेन पद्मिनी-बन्धुं दानेन सुर-द्विरदं जयतितरां यश्श्रियो भर्त्ता

विविशुरुग्गुणा रिपूणाम् ।
हृदयान्यपि यस्य सत्य-शौर्य्याद्याः ॥
तेषामुरस्स्थल-स्थित-
कमलामाक्रष्टुमि [व] रम्यम् ॥

तस्य विष्णोरिव वलि-प्रताप-निर्व्वापणोद्यत-पराक्रमस्य पराक्रम-वलोकस्य प्रताप-निरन्तरतयाक्रान्त (:) समस्त-सुभट-लोकस्य केसरिण इव विक्रमैकर [स] स्य श्री-**बप्पय्य**-इति-सु-गृहीत-नाम्नः कुमारस्य वीर-श्री-लतारोहण-कल्पवृक्षायमानभुजदण्ड-दण्डितारातेःप्रियात्मजस्य विज्ञापना कर्ण्णोपजात-कुतूहलतया च । राजाधिराज-परमेश्वर-श्री-**निरुपमदेव प्रभूतवर्ष**-प्रसादोपलब्ध-महा-सामन्ताधिपत्यालङ्कृत-महानुभावेन भगवदर्ह[द्]-भटारक-चरण-परिचरण-प्रणत-पवित्रितोत्तमाङ्गेन महा-विजय-विक्षे-

धापति-श्री-**श्रीविजयराजेन** निर्म्मापिता-(५ अ) य जिन-भवनाय **मान्यपुरी**पश्चिम-दिगङ्गना-ललाम-भूताय **चतुर्व्विशत्युत्तरेषु सप्त-शतेषु शक-वर्षेषु समतीतेष्वात्मनः प्रवर्द्धमान-विज [य]संवत्सरे मान्यपुर**मधिवसति विजयस्कन्धावारे सोम-ग्रहणे पुष्य-नक्षत्रे शु [भ] लग्ने वार-विलासिनी-विरचित-नृत्त-गीत-वा(वा)द्य-बलि-विलेपन-देव-पूजा-नव-कर्म्म-प्रवर्त्तनार्थं **एदेदिण्डे-विषय**-मध्य-वर्त्ति-**पेर्व्वेडियूर्**-नाम ग्रामं सर्व्व-बाध-परिहारं उदक-पूर्व्वं दत्तः तस्य सीमान्तरं (यहाँ सीमायें आती हैं) **पादरि-ऊरुळ्** पत्तु-भागदोळोन्दु-भागं देवर्गे कोट्टुत्तु

(हमेशाके वे ही अन्तिम श्लोक) ।

[विष्णुसे रक्षाकी कामना ।

पृथ्वीपर कृष्ण-राज विद्यमान थे । उनके धोर नामका एक पुत्र था । उसीके दूसरे नाम कलि-वल्लभ, वत्सराज, निरुपम थे ।

गुणी निरुपमसे गोविन्दराज उत्पन्न हुआ । जब यह राजा हुआ तो राष्ट्र-कूट-वंश दूसरे लोगों (वंशों) की प्रतियोगितासे ऊपर उठ गया । उसने गंगको बन्धनसे छुड़ाया था, लेकिन अपने घमण्डी स्वभावके कारण शीघ्र ही पुनः बाँध लिया गया । उसकी बहुत-सी प्रशंसा । उसके पराक्रमोंका वर्णन । उसने देव-भोग (मन्दिरके लिये दान) रूपसे भूमिदान किया । उसके बड़े भाईका नाम शौच-कम्भ था । इसी शौच-कम्भका दूसरा नाम रणावलोक था ।

इस-विषय (देश) में प्रसिद्ध शालमली नामक गाँवमें कोण्डकुन्दा-न्वयके उदारगणमें तोरणाचार्य्य हुए । पुष्पनन्दि-पण्डित उनके शिष्य थे । उनके शिष्य प्रभाचन्द्र थे । उनके एक चप्पयय नामके भक्त श्रावक थे । उनका पुत्र शत्रुओंका दण्ड देनेवाला था । अपने प्रिय पुत्रकी प्रार्थना सुनकर उन्होंने, मान्यपुरके पश्चिममें जो जिनमन्दिर खड़ा हुआ था उसके लिये, उसके शासक श्रीविजय-राजकी कृपासे शक सं० ७२४ के बीतने पर, अपने ही विजय-वर्षमें, मान्यपुरमें पड़े हुए अपने विजयी कैम्प (स्कन्धा-

वार) में एदेदिण्डे-विषयका पेर्व्वडियूर नामका गाँव, सर्व करोंसे मुक्त करके, जलधारापूर्वक दानमें दिया। इस गाँवकी सीमायें। पदरियूरमें $\frac{1}{10}$ भाग दानमें दिया गया। वे ही शापात्मक श्लोक।]

[NC, IX, Nelamangala tl. n° 61]

१२४

कडब—संस्कृत तथा कन्नड़।

(सन्देहास्पद)

[शक ७३५=८१२ ई०]

राष्ट्रकूटवंशोद्भव द्वितीय प्रभूतवर्ष महीपतिका दानपत्र।

१ ॐ स्वस्ति [।।] विस्तृत-विशद-यशो-वितान-विशदीकृताशाचक्र-वालः करवाल-प्रवालावतंस-विराजित-जयलक्ष्मी-समालिं-

२ गित-दक्ष-दक्षिणा-भूरि-भुजार्गलः गलित-सार-शौर्य्य-रस-विसर-विसखलीकृतोग्रा-

३ रि-वर्ग्गः वर्ग्ग-त्रय-वर्ग्गणैक-निपुणोऽचलाभार-चार्व्वी-विशेष-निर्ज्जितोर्व्वी-मण्डलोत्सवोत्पादनपरः

४ पर-भूपाल-मौलि-माला-लीढाङ्घ्रि-द्वन्द्वारविन्दो **गोविंदराजः** ।। तस्य-सू-

४ नुः सुतरुण-भावोदय-दया-दान-दीनेतर-गुण-गण-समर्प्पित-बन्धु-जनः सक-

६ ल-कलागम-जलधि-कलशयोनिः **मनु**दर्शितमार्ग्गानुगामी **राष्ट्र-कूट**-कुला-

७ मल-गगन-मृगलाञ्छनः बुधजन-मुख-कमलांशुमाली मनोह-

८ र-गुण-गणालङ्कार-भारः **कक्कराज**-नामधेयः [।।] तस्य पुत्रः स्व-वशानेक-नृ-

९ प-संघात-परम्पराभ्युदय-कारणः परम-ऋषि-ब्राह्मण-भक्ति-

तात्पर्य–

१० कुशलः समस्त-गुण-गणाधिव्वोनो[1] विख्यात-सर्व्व-लोक-निरुपम-स्थिर-भाव-नि(वि)जिता–

११ रि-मण्डलः यस्यैममासीत् ॥ जित्वा भूपारि-वर्ग्गान्नय-कुशल-तया येन रा–

१२ ज्यं कृतं यः कष्टे मन्वादिमार्ग्गे स्तुत-धवल-यशा न कश्चिद् यागपूर्व्वः[2] [।] संग्रामे यस्य शेषा

१३ स्व-भुज-कर-बल-प्रापिता या जयश्रीर्यस्मिञ्जाते स्ववंशोभ्युदय-धवलतां यातवान्नर्क्कतेजः [॥ १] अ–

१४ साविन्दराज-नामधेयः [॥] तस्य पुत्रः स्व-कुल-ललामायमानो मानधनो दीनाना–

दूसरा पत्र; पहली बाजू.

१५ थ-जनाह्लादनकर-दान-निरत-मनोवृत्तिः हिमकर इव सुखकर-करः कुलाचल-समु–

१६ दाय इव सुधाधार-गुण-निपुणः हिमशैल-कूट-तट-स्थापित यशस्तम्भलिखिता–

१७ नेक-विक्रम-गुणः [।] अघ-संघात-विनाशक-सुरापगा यस्य सद्यशो विशदं [।] गायन्तीव तरङ्ग-प्रभव–

१८ रवैर्व्वहति जन-महिता ॥ [२] असौ वैरमेघ-नामधेयः [॥] तस्य पितृव्यः हृदय-पद्मा–

---

१ 'गणाधिष्वानो' इति राइसमहोदयः। २ 'यातपूर्व्वं' पाठ ठीक मालूम पड़ता है।

१९ सनस्थ-परमेश्वर-शिरश्शिशिरकर- [कर-]निकर-निराकृत-तमो-
वृत्तिः सविशेषस्य जगत्रय–

२० सारोच्चयेनेव विरचितस्य चतुर्थ-लोकोदय-समानस्य कृतयुग-
शतैरिव निर्म्मि–

२१ तस्य यस्य यशसः पुञ्जमिव विराजमानः[१] ॥ प्रदग्ध-कालागरु–

२२ धूप-धूमैः प्रवर्द्धमानोपचयाः पयोदाः [।] यस्याजिरं स्वच्छ-
सुगन्ध-तोयैः

२३ सिञ्चन्ति सिद्धोदित-कूट-भागाः ॥ [३] न चेदृशं प्राप्यमिति
प्रलोभात् भवोद्भवो भावि- [यु] गा–

२४ वतारे [।] अवैमि यस्य स्थितये स्वयं तत् कल्पान्तरं, नैव च
भाव्यतीति ॥ [४] तारा-ग–

२५ णेषून्नत-कूट-कोटि-तटार्प्पितासूज्ज्वल-दीपिकासु [।] मोमुह्यते
रात्रि-विभेदभा-

२६ वः निशात्ययः पौरजनैर्न्निशायां ॥ [५] आधारभूताहमिद
व्यतीत्य मां वर्द्धते

२७ चायमतिप्रसङ्गः [।] यस्यावकाशात्र्थमितीव पृथ्वी पृथ्वीव
भूतेति च मे वि–

२८ तर्कः ॥ [६] विचित्र-पताका-सहस्र-सञ्छादितं उपरि परिच-
रण-भयात् लोकै–

२९ क-चूडामणिना मणि-कुट्टिम-संक्रान्त-प्रतिबिम्ब-व्याजेन स्वयमव-
तीर्य्य

---

१ 'पुञ्ज इव विराजमानं' ऐसा पढ़ना चाहिये ।

दूसरा पत्र; दूसरी बाजू

३० परमेश्वर-भक्ति-युक्तेन नमस्क्रियमाणमिव विराजमानं प्रहत-पुष्कर-मन्द्र-निनादा-

३१ कर्ण्णनोदितानुरागैः प्रावृडारम्भ-काल-जनितोत्सवारम्भैः मयूरैः प्रारब्ध-वृत्त-नृ-

३२ त्यान्तं धूम-वेला-लीला-गत-विलासिनी-जनानां कर-तल-किसलय-रस-भाव-सद्भाव-प्रक-

३३ टन-कुशल-शशिवदनाङ्गना-नर्त्तनाहृत-पौर-युवति-जन-चिन्ता-न्तरं समस्त-सिद्धान्त-साग-

३४ र-पारग-मुनि-शत-सङ्कुलं देवकुलमासीत् **कृण्णेश्वर**न्नाम स्व-नामधेयाङ्कितं असा-

३५ **वकालवर्ष** इति विख्यातः [।।] तस्य सूनुः आनत-नृप-मकुट-मणि-गण-किरण-जाल-रञ्जित-

३६ पद-युगल-नख-मयूख-प्रभा-भासित-सिंहासनोपान्तः कान्ताजन-कटक-खचि-

३७ त-पद्मराग-दीधिति-विसर-शुम्भत्-कुसुम्भ-रस-रञ्जित-निज-धवल-वीज्यमान-चारु-चा-

३८ मर-निचय-विख्यात-प्राज्य-राज्याभिषेकान्तरैकैश्वर्य्य-सुख-समनुभ-वस्थि-

३९ तिः निज-तुरङ्गमैक-विजयानीत-राजलक्ष्मी-सनाथो महीनाथो यः कल्पाङ्घ्रिपः ससेव[1]

---

१ 'सलनेव' ऐसा शुद्ध पाठ मालूम पड़ता है।

४० चिन्तामणिरिति ध्रुवं यं वदन्त्यर्थिनः । नित्यं प्रीत्या प्राप्तार्थ-
सम्पदसौ **प्रभूतवर्ष** इति वि–

४१ ख्यातो भूपचक्रचूडामणिः [।।] तस्यानुजः **धारावर्ष-श्री-पृथ्वी-
वल्लभ-महाराजाधि**–

४२ **राजपरमेश्वरः** खण्डितारि-मण्डलासि-भासित-दोर्दण्डः पुण्डरीक[१]
इव बलिरिपु-मर्द्दना–

४३ क्रान्त-सकल-भुवनतलः सुकृतानेक-राज्य-भार-भारोद्वहन-समर्थः
हिमशैल-वि–

४४ शालोरःस्थलेन राजलक्ष्मी-विहरण-मणि-कुट्टिमेन चतुराङ्गनालिं-
गन-तुङ्ग-कुच–

तीसरा पत्र; पहली बाजू

४५ संग-सुखोद्रेकोदित-रोमाञ्च-योजितेन स्व-भुजासि-धारा-दलित-
समस्त-[२] गलित-मुक्ताफल-वि–

४६ सर-विराजितारि-बल-हस्ति-हस्तास्फालन-दन्त-कोटि-घट्टित-घनी-
कृतेन विराजमानः त्रिपुर–

४७ हर-वृषभ-ककुदाकारोन्नत-विकटांस-तट-निकट-दोधूयमान-चारु-
चामर-चयः फेन-पिण्ड–

४८ पाण्डुर-प्रभावोदितच्छविना वृत्तेनापि चतुराकारेण सितातपत्रे-
णाच्छादित-समस्त-दिग्-वित्र–

४९ [३]रो रिपुजनहृदयविदारणदारुणेन सकलभूतलाधिपत्यलक्ष्मीली-

---

१ 'पुण्डरीकाक्ष' पढ़ो। २ 'दलितमस्त' पढ़ो। ३ आगे ४९ वीं पंक्तिसे प्राचीन लेखमाला, प्रथम भाग, लेख ११ परसे लिया है।

लासुत्पादयता प्रहतपटहढक्कागम्भीरध्वानेन घनाघनगर्जनानुकारिणा अस्याचितो विनोदनिर्गमः (?) स्वकीयां साङ्खलतां (?) परनृपचेतोवृत्तिषु दातुमिवोच्चैराविलोलप्रकटितराज्यचिह्नः (?) तुरङ्गमखरखुरोत्थितपांशुपटलमसृणितजलदसंचयानेकमत्तद्विपकरटतटगलितदानधाराप्रतानप्रशमितमहीपरागः ।

यस्य श्री चपलोदया खुरतरङ्गालीसमास्फालना-
निर्भिन्नद्विपयानपात्रगतयो ये संचलच्चेतसः । (?)
तस्मिन्नेव समेत्य सारविभवं संत्यज्य राज्यं रणे
भग्ना मोहवशात् स्वयं खलु दिशामन्तं भजन्तेऽरयः ॥
इदं कियद्भूतलमत्र सम्यक् स्थातु महत्संकटमित्युदग्रम् ।
स्वस्यावकाशं न करोति यस्य यशो दिशा भित्तिविभेदनानि ॥

अनवरतदानधारावर्षागमेन तृप्तजनतायाः **धारावर्ष** इति जगति विख्यातः सर्वलोकवल्लभतया **वल्लभ** इति । तस्यात्मजो निजभुजबलसमानीतपरनृपलक्ष्मीकरधृतधवलातपत्रनालप्रतिकूलरिपुकुलचरणनिबद्धखलखलायमानधवलशृङ्खलारवबधिरीकृतपर्यन्तजनो निरुपमगुणगणाकर्णनसमाह्लादितमनसा साधुजनेन सदा संगीयमानशशिविशदयशोराशिराशावष्टब्धजनमनःपरिकल्पनत्रिगुणीकृतस्वकीयानुष्ठानो निष्ठितकर्तव्यः **प्रभूतवर्ष-श्रीपृथ्वीवल्लभराजाधिराजपरमेश्वरस्य** प्रवर्धमानश्रीराज्यविजयसंवत्सरेषु वदत्सु[१] । चारुचालुक्यान्वयगगनतलहरिणलाञ्छनायमान**श्रीबलवर्म**नरेन्द्रस्य सूनुः स्वविक्रमावजितसकलरिपुनृपशिरःशेखरार्चितचरणयुगलो **यशोवर्म**नामधेयो राजा व्यराजत । तस्य पुत्रः 'सुपुत्रः कुलदीपक' इति पुराणवचनमवितथमिह कुर्वन्नतितरां श्रीराजमानो

१ 'वहत्सु' पाठ मालूम पड़ता है ।

मनोजात इव मानिनीजनमनस्थलीय: (?) रणचतुरश्चतुरजनाश्रयः श्रीसमालिङ्गितविशालवक्षस्थलो नितरामशोभत । असौ महात्मा

कमलोचितसङ्कुजान्तर**श्रीविमलादित्य** इति प्रतीतनामा ।
कमनीयवपुर्विलासिनीनां भ्रमदक्षिभ्रमरालिवक्रपद्मः ॥

यः प्रचण्डतरकरवालदलितरिपुनृपकरिघटाकुम्भमुक्तमुक्ताफलविकीर्णितरुचिरक्ताब्धिकान्तिरुचिरपरीतनिजकलत्रकण्ठः शितिकण्ठ इव महितमहिमामोद्यमानरुचिरकीर्तिरशेषगङ्गमण्डलाधिराज **श्रीचाकिराजस्य** भागिनेयः भुवि प्रकाशत[1] यस्मिन् **कुनुन्गिल**नामदेशमयशःपराङ्मुखो[2] **मनु**मार्गेण पालयति सति **श्रीयापनीयनन्दिसंघपुंनागवृक्षमूलगणे** [3]**श्रीकित्याचार्यान्वये** वहुष्वाचार्येष्वतिक्रान्तेषु व्रतसमितिगुप्तिगुप्तमुनिवृन्दवन्दितचरण**कूविलाचार्य्या**णामासीत् (?) तस्यान्तेवासी समुपनतजनपरिश्रमाहारः स्वदानसंतर्पितसमस्तविद्वज्जनो जनितमहोदयः **विजयकीर्ति**नाममुनिप्रभुरभूत् ।

अर्ककीर्तिरिति ख्यातिमातन्वन्मुनिसत्तमः ।
तस्य शिष्यत्वमायातो नायातो वशमेनसाम् ॥

तस्मै मुनिवराय तस्य **विमलादित्यस्य** शणेश्वर (?)पीडापनोदाय **मयूरखण्डि**मधिवसति विजयस्कन्धावारे **चाकिराजेन** विज्ञापितो वल्लमेन्द्रः **इडिगूर्**विषयमध्यवर्तिनं **जालमङ्गल**नामधेयग्राम **शकनृपसंवत्सरेषु शरशिखिमुनिषु (७३५) व्यतीतेषु ज्येष्ठमासशुक्लपक्षदशम्यां पुष्यनक्षत्रे चन्द्रवारे मान्यपुर**वरापरदिग्विभागालंकारभूत**शिलाग्रामा**जनेन्द्र[4]भवनाय दत्तवान् तस्य पूर्वदक्षिणापरोत्तरदिग्विभागेषु स्वस्तिमङ्गल-

---

१ 'प्रकाशते यस्मिन्' यह पाठ मालूम पड़ता है। २ 'पराङ्मुखे' यह अपेक्षित है। ३ 'श्रीकीर्त्याचार्य' जान पड़ता है। ४ 'जिनेन्द्र' ऐसा पाठ मालूम पड़ता है।

बेह्लिन्द-गुड्डनूरत्तारिपाल इति प्रसिद्धा ग्रामाः एवं चतुर्णां ग्रामाणां मध्ये व्यवस्थितस्य **जालमङ्गलस्याय** चतुरावधिक्रमः[1] पुनस्तस्य सीमा-विभागः ईशानतः मुकूडल्दक्षिणदिग्विभागमवलोक्य एल्तगकोडल-मूडग-केल-बन्दु इर्प्पेय-कोषदे-पल्लद्-ओलगण उलिअलरिये कोदेयालि-बेळने सयकने-बन्दु पोल पुणसे एव कीले अन्ते पोयिए विदिरूगेरे मुकू-डल् ततः पश्चिमतः पुलिपदिय तेङ्कण पेर् ओल्वेये पेर्विलिके एल-गल-करण्डलो मुकूडल् अन्ते सय्कने पोगि नाय्मणिगेरेय ताय्गण्डि मुकूडल् ततः उत्तरतः वल्लगेरेय पडुव गजगोड पळम्वे पुणुसेये आने-दलो गेरेए पुल्पडिये एलगल्ले पुलिगारद गेरे मुकूडल् ततः पूर्वतः निड्डु विळिङ्के····दविन पुल्पडिये कब्बगार गल्ले पोल एल्ले पुणुसये बद्दपु-णुसये बेळने बन्दु ईशानद मुकूडलोल् कूडि निन्दत्तू। राचमल्लगाम-ण्डनुं शीरनुं गङ्गगामुण्डनु मारेयनुं वेल्गेरेय् ओडेयोरुं मोदवागे-एल्पटि-म्बरुं कुनुन्गिल्-अयसार्वरुं साक्षियागे कोट्टत्तू। नमः।

अद्भिर्दत्तं त्रिभिर्भुक्तं षड्भिश्च परिपालितम्।
एतानि न निवर्तन्ते पूर्वराजकृतानि च ॥
स्वं दातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्यस्य पालनम्।
दानं वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम् ॥
स्वदत्ता परदत्तां वा यो हरेत वसुंधराम्।
षष्टिं वर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥
देवस्वं[हि] विषं घोरं कालकूटसमप्रभम्।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्रपौत्रकम् ॥

(इण्डियन एण्टिक्वेरी १२।१३-१६)
[एपिग्राफिका इण्डिका, ४।३४०-३४९]

---

१ 'चतुरवधिक्रमः' यह पाठ मालूम पड़ता है।

[इस शिलालेखमें बताया है कि राजा प्रभूतवर्ष (गोविन्द तृतीय) ने जब कि वे मयूरखण्डीके अपने विजयी विश्रामस्थलपर ठहरे हुए थे, चाकिराजकी प्रार्थनापर शक सं० ७३५ में जालमङ्गल नामका गाँव जैन मुनि अर्ककीर्तिको भेंट दिया। यह भेंट शिलाग्राममें स्थित जिनेन्द्रभवनके लिये दी गई थी। कारण यह था कि कुनुन्गिल जिलेके शासक विमलादित्यको उन्होंने (अर्ककीर्ति मुनिने) शनैश्चर (?)की पीड़ासे उन्मुक्त किया था।

इस लेखमें पं० १–६४ तकमें राष्ट्रकूट राजाओंकी प्रशंसामात्र है। इसमें उनकी वंशावली इस प्रकार दी हुई है:—

लेखप्रस्तुत नाम	ऐतिहासिक नाम
(१) गोविन्द	=गोविन्द प्रथम
(२) कक्क	=कर्क प्रथम
(३) इन्द्र	=इन्द्र द्वितीय
(४) वैरमेघ	=दन्तिदुर्ग या दन्तिवर्म्मन् द्वि०
(५) अकालवर्ष [वैरमेघका चाचा (पितृव्य)]	=कृष्ण प्रथम
(६) प्रभूतवर्ष	=गोविन्द द्वितीय
(७) धारावर्ष श्री पृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर, द्वितीय नाम—वल्लभ=ध्रुव (प्रभूत वर्षका छोटा भाई)	
(८) प्रभूतवर्ष श्रीपृथ्वीवल्लभ [महा]-राजाधिराज परमेश्वर, द्वितीय नाम वल्लभेन्द्र	=गोविन्द तृतीय

२४ वीं पंक्तिमें कहा गया है कि अकालवर्षने अपने ही नामसे 'कण्णेश्वर' नामक मन्दिर बनवाया था। पंक्ति २९–३० से ऐसा मालूम पड़ता है कि यह मन्दिर शिवके लिये अर्पण किया गया था। पं० ८१ में बताया

गया है कि दानके समय गोविन्द-तृतीय मयूरखण्डीके अपने विजय-स्कन्धावार (पड़ाव) में ठहरे हुए थे।

पंक्ति ६५-७५ में विमलादित्यकी वंशावलीका उल्लेख हुआ है। उनके पिता राजा यशोवर्मा थे और उनके बाबा नरेन्द्र वलवर्मा थे। चालुक्योंसे इस कुलका संबंध था; लेकिन वर्तमानमें चालुक्यवंशी राजाओंमें इन नामोंके राजा नहीं मिलते हैं, इसलिए प्रो० भाण्डारकरने उन्हें एक स्वतन्त्र शाखाका माना है। विमलादित्य कुनुन्गिल् देश (ज़िले) का राजा था। विमलादित्यको चाकिराजकी बहिनका पुत्र बताया गया है। चाकिराजको गङ्गों (अशेष-गङ्गमण्डलाधिराज) के समूचे प्रान्तका शासक कहा गया है। इसीकी प्रार्थनापर दान किया गया था।

पंक्ति ७५-८० में दानपात्रका विशेष वर्णन है। उनका नाम अर्ककीर्ति था, ये कूविल आचार्यके शिष्य विजयकीर्तिके शिष्य थे। यह मुनि श्री यापनीय नन्दिसंघके पुंनागवृक्षमूलगणके श्रीकीर्त्याचार्यके अन्वय (परम्परा) के थे। इनका एक विशेषण 'व्रतसमितिगुप्तिगुप्तमुनिवृन्दवन्दितचरणः' है।

लेखके अन्तिम भागका सार ऊपर दे दिया गया है। लेखके अन्तिम भागमें कुछ साक्षियोंके नाम भी दिये गये हैं जिनके सामने यह दान किया गया था। अन्तके चार वे ही साधारण शापात्मक श्लोक हैं।]

१२५

नौसारी—संस्कृत।

[शक ७४३=८२१ ईस्वी]

यह शिलालेख सम्भवतः श्वेताम्बर सम्प्रदायका है।

[H. H. Dhruva, Zeitschr. d. deut. morg. Gesell., XL, p. 321, n° VII, a.]

१२६

कांगड़ा—संस्कृत।

[लौकिक वर्ष ?]=८५४ ई० ? (बूल्हर)

श्वेताम्बर सम्प्रदायका।

[EI, I, n° XVIII (p. 120), t. & tr.]

१२७

कोन्नूर(जिला धारवाड़)—संस्कृत।

[शक सं० ७८२=८६० ई०]

श्रियः प्रियस्संगतविश्वरूपस्सुदर्शनच्छिन्नपरावलेपः।
दिश्यादनन्तः प्रणतामरेन्द्रः श्रियं ममाद्यः परमां **जिनेन्द्रः** ॥ १ ॥
अनन्तभोगस्थितिरत्र पातु वः प्रतापशीलप्रभवोदयाचलः।
सु-राष्ट्रकूटोर्ज्जितवंशपूर्व्वजस्स **वीर-नारायण** एव यो विभुः ॥ २ ॥
तदीयभूपायत**यादवा**न्वये क्रमेण वार्द्धाविव रत्नसञ्चयः।
बभूव **गोविन्द**महीपतिर्भुवः प्रसाधनो **पृच्छकराज**-नन्दनः ॥ ३ ॥
इन्द्रावनीपालसुतेन धारिणी प्रसारिता येन पृथु-प्रभाविना।
महौजसा वैरितमो निराकृत प्रतापशीलेन स **कर्क्कर**-प्रभुः ॥ ४ ॥
ततोऽभवद्दन्तिघटाभिमर्द्दनो हिमाचलादुर्ज्जित-सेतु-सीमतः।
खलीकृतोद्वृत्तमहीपमण्डलः कुलाग्रणीः यो भुवि **दन्तिदुर्ग्ग**-राट् ॥ ५ ॥
स्वयम्वरीभूतरणाङ्गणे ततस्स निर्व्यपेक्ष **शुभतुङ्गवल्लभः**।
चकर्ष **चालुक्य**कुलश्रियं बलाद्विलोल-पालिध्वज-माल-भारिणीं ॥ ६ ॥
जयोच्चसिंहासनचामरोर्ज्जितस्सितातपत्रो प्रतिपक्ष राज्य(ज)हा।
अकालवर्षोर्ज्जितभूपनामको बभूव राजर्षिरशेषपुण्यतः ॥ ७ ॥
ततः **प्रभूतवर्षो**ऽभूद्धारावर्षसुतश्शरैः।
धारावर्षायितं येन संग्रामभुवि भूभुजा ॥ ८ ॥ तस्य सुतः—

यज्जन्मकाले देवेन्द्रैरादिष्टं वृषभो भुवः।
भोक्तेति हिमवत्सेतु-पर्य्यन्ताम्बुधिमेखलाम् ॥ ९ ॥
ततः **प्रभूतवर्ष**स्सन् स्वयम्पूर्णमनोरथः।
जगत्तुङ्गस्सुमेरुर्वा भूभृतामुपरि स्थितः ॥ १० ॥

वन्धूनां वन्धुराणामुचितनिजकुले पूर्वजाना प्रजानां
जातानां **वल्लभानां** भुवनभरितसत्कीर्त्तिमूर्त्ति-स्थितानां ।
त्रातुं कीर्त्तिं स-लोकं कलिकलुषमथो हन्तुमन्तो रिपूणां
श्रीमान् सिंहासनस्थो भवनवनिमतो[2]ऽ**मोघवर्षः** प्रशास्ति ॥ ११ ॥
यस्याज्ञां परचक्रिणः स्रजमिवाजस्र शिरोभिर्व्वह-
न्त्यादिग्दन्तिघटावलीमुखपटैः कीर्त्तिप्रतानस्स तैः ।
यत्रस्थः स्वकरप्रतापमहिमा कस्याप्यदूरस्थितः
तेजःक्रान्तसमस्तभूभृदिव एवासौ न कस्योपरि ॥ १२ ॥
चतुस्समुद्रपर्य्यन्तं (?) स्वमुद्रं यत्प्रसाधितं ।
भग्ना समस्तभूपालमुद्रा गरुड़मुद्रया ॥ १३ ॥
राजेन्द्रास्ते वन्दनीयास्तु पूर्व्वे, येषां धर्म्मः पालनीयोऽस्मदीयैः ।
ध्वस्ता दुष्टा वर्त्तमानास्सधर्म्माः प्रार्थ्या ये ते भाविनः पार्थिवेन्द्राः ॥१४॥
भुक्तं कश्चिद्विक्रमेणापरेभ्यो
दत्त चान्यैस्त्यक्तमेवापरैर्य्यत् ।
कास्थानित्ये तत्र राज्ये महद्भिः
कीर्त्त्या (र्त्यै ?) धर्म्मः केवलं पालनीयः ॥ १५ ॥
तेनेदमनिलविद्युच्चञ्चलमवलोक्य जीवितमसारं ।
क्षितिदानपरमपुण्यः प्रवर्त्तितो देवदायोऽयम् ॥ १६ ॥

स एव परमभट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-श्री-**जगत्तुङ्गदेव**-पादा-नुध्यान(त)परमभट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-श्री-पृथ्वीवल्लभ-श्रीमद-**मोघवर्ष**-श्रीवल्लभनरेन्द्रदेवः सर्व्वानेव यथासम्बध्यमानकान्-राष्ट्रविषय-

---

१ 'हन्तुं' पठो । २ 'भवनमिदमतो' या 'भवनमनमितो' ।

पति-ग्रामकूटायुक्तक-नियुक्ताधिकारिकमहत्तरादीन् समादिशत्यस्तु वस्संविदितं यथा ॥

विक्रमविलासनिलयो मुकुल-कुले पूर्व्वबन्धुभिर्म्मान्यैः
एरकोटिनामधेयः प्रविकसितोऽभूत्प्रसूनसमः ॥ १७ ॥
आविरासीत्प्रभुस्तस्मात् प्रसूनात्फलसन्निभः ।
नाम्ना **धोरः** कुलाधारः **कोलनूरा**धिपस्स्वयम् ॥ १८ ॥
सुतोऽस्य विजयाङ्कायामभूद्भुवनमानितः ।
प्रचण्डमण्डलातङ्को **बङ्केशः से(चे)ल्लकेतनः** ॥ १९ ॥
मदीयो विततज्योतिर्ण्णि(न्नि)शितोऽसिर्व्वापरैः ॥
उन्मूलितद्विपद्वृक्षमूलो मौलबलप्रभुः ॥ २० ॥
मत्प्रदेशेन संलब्ध-**वनवासी**-पुरस्सरान् ।
ग्रामान् त्रिंशत्सहस्राणि भुनक्त्यविरतोदयः ॥ २१ ॥
महाप्रतापादुच्छेदमुदयच्छन् मदिच्छया ।
मूलादुच्छेत्तुमुत्तुङ्गं **गङ्गवाडी**-वटाटवीम् ॥ २२ ॥
नन्त्रातरेऽस्मत्सावमन्तैर्म्मात्सर्याहितमानसै- ।
रुपेक्षितोऽपि कोपोद्यत्साहसैकसखः स्वयम् ॥ २३ ॥
ध्वस्तरिपुनीतिमार्ग्गो रणविक्रममेकबुद्धिमभिनीय ।
स मदीयहृदयसंगतमवन्ध्यकोपत्वमावहति ॥ २४ ॥ येन—
तत्-**केदला**भिधानं दुर्ग्गं वप्रार्ग्गलादिदुर्ल्लङ्घ्यं ।
मौल-बलाधिष्ठितमपि सद्यः प्रोल्लङ्घ्य हेलयाग्राहि ॥ २५ ॥
जनपदमदः कृत्वा हस्ते विधूय विरोधिनं
तलवनपुराधीशं कृत्वा श्रुतं रणविक्रमम् ।
मदरिविजयी भर्तुः श्लाघ्यस्समन्वितसंगरः
समरसमये विद्विट्-चक्रैरविक्लतविक्रमः ॥ २६ ॥

कावेरीं गुरुपूरदुर्गमतमामुल्लङ्घ्य सिंहक्रमात्
प्रत्यग्र-स्फुरित-प्रताप-दहन-प्रोद्यच्छिखाश्रेणिभिः ।
निर्दह्यैकपदेन सप्तपदकान्विद्विट्वनोच्छेदिना
येनाकम्पि जगत्प्रकम्पनपटोर्वैराज्यमप्यूर्जितम् ॥ २७ ॥
तत्रान्तरे मदन्तिकमन्तर्भेदेन जातसंक्षोभे ।
प्रत्यागन्तव्यमिति त्वयेति मद्वचनमात्रेण ॥ २८ ॥
अप्राप्ते **वल्लभेन्द्रो** मयि जयति यदा विद्विषः स्यान्तदाहं
सन्यस्ताशेषसङ्गो मुनिरथ विधिना विद्विषं स्याज्जयश्रीः ।
तत्राप्युद्दामधूमध्वजविततशिखासूत्पतामि प्रतापा-
दित्यारूढप्रतिज्ञः कतिपयदिवसैः प्रापदस्मत्समीपम् ॥ २९ ॥
मासत्रयस्य मध्ये यदि भोजयितुं न शक्यते स्वामी ।
क्षीरं विजित्य शत्रुं तथापि वह्निं विशाम्येव ॥ ३० ॥
इत्युक्त्वा क्रमविक्रमोच्छिखशिखीज्वालावलीढ (ढ)व(व) जे
धूमश्याम [लि] ते तिरोहिततनौ प्रायः परप्रेषिते ।
ये ते मत्तनये स्थितान्यनृपतीन्निर्जित्य यो जित्वरो
वन्दीकृत्य रिपून्निहित्य च तदा तीर्ण्णप्रतिज्ञोऽभवत् ॥ ३१ ॥
आविष्कृतकोपशिखानिर्दग्धारीन्धनो विनाप्यनिलात् ।
अज्वालितोऽपि यस्य प्रतापवह्निर्मुहुर्ज्वलति ॥ ३२ ॥
यस्य च कृपाण-[वारिणि]रुधिराकुलिता द्विषां महालक्ष्मीः ।
मज्जत्युन्मज्जति तु स्वाविपतेः कुङ्कुमा(? भा)क्त्वेव ॥ ३३ ॥
हुत्वा येन रिपुं विरोधिरुधिरप्राज्याज्यधाराहुति-
व्रात-प्रस्फुरित-प्रताप-दहने विद्विष्टशान्तोदिश्रतं ।
विप्रेणेव रणाध्वरे सुविहित-श्री-मन्त्रशक्त्यार्जितं
कल्पान्तस्थिरवीरशासनमिदं **मद्वीरनारायणात्** ॥ ३४ ॥

तेनैवम्भूतेन **बङ्केया**भिधानेन मदिष्टभृत्येन प्रार्थितः सन् तत्प्रार्थनया **मान्यखेट**राजधान्यामवस्थितेन मया [मा]-तापित्रोरात्मनश्चैहिकामुत्रिकपुण्ययशोभिवृद्धये **कोलनूरे** तद्**बङ्केय**निर्म्मापित-जिनायतन-परिपालननियुक्ताय

श्रीमूलसङ्घ-देशीयगण-पुस्तकगच्छतः ।
जात**स्त्रैकालयोगीशः** क्षीराब्धेरिव कौस्तुभः ॥ ३५ ॥
तच्चारित्रवधूप(पु)त्रः श्री**देवेन्द्रमुनीश्वरः** ।
सैद्धान्तिकाग्रणीस्तस्मै **बङ्कयो**[यामदान्मु]दा ॥ ३६ ॥

तद्वसतिसम्बन्धिनवकर्म्मोत्तरभाविखण्डस्फुटित-सम्मार्जनोपलेपनपरिपालनादिधर्म्मोपयोगिकर्म्मकरणनिमित्त **मजान्तिय**-सप्ततिग्राम-भुक्त्यन्तर्गतः **तलेयूर**नामग्रामः तस्य चाघातः (टः) तत्**कोलनूरात्** पूर्व्वतः **बेन्दनूरु** दक्षिणतः **सासवेवादु** तत्पश्चिमतः **पडिलगेरी** उत्तरतः **कीलवाडः** एवमयं चतुराघाटनोपलक्षितः सोन्द्रंगस्स-परिकरः मदण्डदशापराधस्सम्भृतोपात्तप्रत्यय[1]: सोत्पद्यमानविष्टिति (क): सधान्यहिरण्यादेयः द्वादशपुष्पवाटः पञ्चाशदुत्तरशतहस्तविस्तारः पञ्चशतहस्तप्रमाणायामः गृहाणामाघाटस्समुदितः प्रवेश्यस्सर्व्वराजकीयानामहस्तप्रक्षेपणीयः आचन्द्रार्क्कार्ण्णव-क्षिति-सरित्-पर्व्वत-समकालीनः पुत्रपौत्रान्वयक्रमेण प्रतिपाल्यः पूर्व्वप्रदत्त-देवब्रह्मदायरहितोऽह्य(भ्य)न्तरसि [द्] द्ध्या भूमिच्छिद्रन्यायेन **शकनृपकालातीतसंवत्सरशतेषु सप्तसु द्वा(द्व्य)-शीत्यधिकेषु तदभ्याधिक-समनन्तर-प्रवर्त्तमान-त्रयो[2]शीतितम-विक्रमसंवत्सरान्तर्ग्गताश्वयुजपौर्ण्णमास्यां सर्व्वग्रासि-सोमग्रहणे**

---

१ 'सम्भृतोपात्तप्रत्यायस्' शब्द है। २ 'त्र्यशीतितम' पढ़ना चाहिये।

महापर्व्वणि वलिपक्षवैश्वदेवाग्निहोत्रातिथिसन्तर्पणाद्धारोदकातिसर्गेण प्रतिपादितः ॥ तथात्रैव तत्**कोलनूर**तद्भुक्तिमध्यवृत्त्यवर**वाडि वेण्डनूरु मुदुगुण्डि कित्तैवोले सुल्ल मुस दधरे माविनूरु मत्तिकट्टे नीलगुन्दगे तालिखेड वेल्लेरु संगम पिरिसिङ्गि मुत्तलगेरी काकेयनूरु वेहेरु आलूगु [पार्व्व] नगेरी होसंजललु इन्दुगलु नेरिलगे हगनूरु उनलगरु इन्दगेरी मुनिवल्ली कोट्टसे ओड्डिट्टगे सि [किमत्रि ?] गिरि [पि] डलु** नामधेयेष्वेतेषु **कोलनूरार्तं** तद्भुक्तिवर्त्तिषु त्रिंशत्स्वपि ग्रामेष्वेकैकग्रामे द्वादश निवर्त्तनानि भूमेः प्रतिपादितानि [॥] अतोऽस्योचितया देवदायदायस्थित्या भुञ्जतो भोजयतः कृषतः कर्षयतः प्रतिदिशतो वा न कैश्चिदल्पापि परिपन्थना कार्या तथागामिभद्रनृपतिभिरस्मद्वंश्यैरन्यैर्व्वा सामान्य भूमिदानफलमवेत्य विद्युल्लोलान्यैश्वर्याणि तृणाग्रलग्नजलविन्दुचञ्चलं च जीवितमाकलय्य स्वदायनिर्व्विशेषोऽस्मद्दायोऽनुमन्तव्यः प्रतिपालयितव्यश्च ।

यस्त्वज्ञानतिमिरपटलावृतमतिराच्छिद्यमानकं वानुमोदेत स पञ्चभिर्म्महापातकैस्सोपपातकैश्च संयुक्तः स्यादित्युक्तं भगवता **वेदव्यासेन** ॥

षष्टिर्व्वर्षसहस्राणि स्वर्गे तिष्ठति भूमिदः ।
आच्छेत्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् ॥ २७ ॥

विन्ध्याटवीष्वतोयासु शुष्ककोटरवासिन ।
कृष्णसर्प्पा हि जायन्ते भूमिदानं हरन्ति ये ॥ २८ ॥

अग्नेरपत्यं प्रथमं सुवर्ण्णं भूर्व्वैष्णवी सूर्य्यसुतश्च गावः ।
लोकत्रयन्तेन भवेद्धि दत्तं यः काञ्चनं गां च महीं च दद्यात् २९॥

---

१ 'आघाटे' ऐसा पढ़ो ।

बहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥ ४० ॥

स्वदत्तां परदत्ता वा यत्नाद्रक्ष्ये[1] नराधिपः ।
महीं महीमतां श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम् ॥ ४१ ॥

इति कमलदलाम्बुबिन्दुलोलं
श्रियमनुचिन्त्य मनुष्यजीवितं च ।
अतिविमलमनोभिरामकै-
र्न्नहि पुरुषैः परकीर्त्तयो विलोप्याः ॥ ४२ ॥

लिखितञ्चैतद् वालभकायस्थवंशजातेन धर्म्माधिकरणस्थेन भोगिकव-**त्सराजेन श्रीहर्ष**सूनुना ग्रामपट्टलाधिकृतलेखकरणहस्ति-**नाग-वर्म्म-पृथ्वीराम**-भृत्येन ॥

बङ्कियराजमुख्यो **गणपति**नामा महत्तरः प्राज्ञः ।
राज्ञः समीपवर्त्ती तेनेदमनुष्ठितं सर्व्वम् ॥ ४३ ॥

मिथ्याभावभवातिदर्प्पपरतद्दुःशासनोच्छेदकं
प्राज्ञाज्ञावशवर्त्तमानजनतासत्सौख्यसम्पादकम् ।
नानारूपविशिष्टवस्तुपरमस्याद्वादलक्ष्मीपदं
जेजीयाज्जिनराजशासनमिदं स्वाचारसारप्रदम् ॥ ४४ ॥

सिद्धान्तामृतवार्द्धितारकपतिस्तर्क्काम्बुजाहर्प्पतिः
शब्दोद्यानवनामृतैकसरणिर्य्योगीन्द्रचूडामणिः ।
त्रैविद्यापरसार्थनामविभवः प्रोद्भूतचेतोभवः
जीयादन्यमतावनीभृदशनिः **श्रीमेघचन्द्रो** मुनिः ॥ ४५ ॥

---

१ 'रक्ष नराधिप' पढो ।

इदे हसीवृन्दमींटल्वगेदपुडुचकोरीचयं
चञ्चुविन्दं कर्दुकल् सार्दप्पुडीशं जडेयोळ् इरिसलेन्दिर्द्दपं
सेज्जेगीरल् पदेदप्पं कृष्णनेम्बन्तेसेदु विसलसत्कन्दलीकन्दकान्त
पुदिदत्ती **मेघचन्द्र**व्रतितिलकजगद्वर्त्तिकीर्त्तिप्रकाश ॥ ४६ ॥

वैदग्ध्यश्रीवधूटीपतिरखिलगुणालंकृतिर्**मेघचन्द्र**-
त्रैविद्यस्यात्मजातो मदनमहिभृतो भेदने वज्रपातः
सिद्धान्तव्यूहचूडामणिरनुपमचिन्तामणिर्भूजनानां
योऽभूत्सौजन्यरुन्द्रश्रियमवति महौ **वीरनन्दी**मुनीन्द्रः ॥४७॥

यःशब्दत्त(?)-नभस्थली-दिनमणिः काव्यज्ञचूडामणि-
र्यस्तर्कस्थितिकौमुदीहिमकरस्तूर्यत्रयाब्जाकरः ।
यस्सिद्धान्तविचारसारधिषणो रत्नत्रयीभूषणः
स्थेयादुद्धतवादिभूभृदशनिः श्री**वीरनन्दी**मुनिः ॥ ४८ ॥

यन्मूर्त्तिर्ज्जगतां जनस्य नयने कर्पूरपूरायते
यद्वृत्तिर्व्विदुषां ततेश्श्रवणयोर्म्माणिक्यभूषायते ।
यत्कीर्त्तिः ककुभां श्रियः कचभरे मल्लीलतान्तायते
जेजीयाद्भुवि **वीरनन्दि**मुनिपः सैद्धान्तचक्राधिप.॥ ४९ ॥

श्री**कोन्दकुन्दा**न्वयाम्बरद्युमणि विद्वज्जनशिरोमणि समस्तानवद्यविद्या-विलासिनीविलासमूर्त्ति श्री**वीरनन्दि**सै[द्धा]न्तिक-चक्रवर्तिगळु श्रीमन्महा-स्थानं कोळ्नूर् महाप्रभु **हुलियमरसनुं** मूरुपुरपञ्चमठस्थानङ्गळुं ताम्र-शासनम नोडि बरेयिसिमेनल्का शासनदोळन्तिर्द्दुदन्ती शीलशासनमं बरे-यिसिदरु [॥] मङ्गलमहाश्री श्री श्री नमो............[॥]

[जिस पाषाणपर यह लेख है वह कोन्नूरके परमेश्वरके मन्दिरकी दीवालमें लगा हुआ है ।

इस लेखके दो भाग हो जाते हैं। श्लोक १ से लेकर ४३ तक दानकी प्रशस्ति है। यह दान ८६० ई० में राष्ट्रकूट राजा अमोघवर्ष प्रथमने दिया था। श्लोक ४४ से लेकर लेखके अन्तिम गद्य तकका भाग जैनधर्म और दो मुनियों–मेघचन्द्र त्रैविद्य और उनके शिष्य वीरनन्दीकी प्रशंसा करनेके बाद, हमें यह सूचित करता है कि वीरनन्दिके पास एक ताम्रशासन (तांबे के ऊपरका लेख) था, जिसको बादमें कोळनूर (कोन्नूर जहांका यह शिलालेख है) के महाप्रभु हुलियमरस तथा औरोंकी प्रार्थनापर प्रस्तुत शिलालेखके रूपमें उत्कीर्ण किया गया । इस कथनके अनुसार शिलालेखका आदिसे लेकर ४३ श्लोक तकका भाग, जिसमें दान-प्रशस्ति है, ताम्र-शासनके लेखपरसे लिया गया है । वीरनन्दी और उनके गुरु मेघचन्द्र त्रैविद्यके कालसे इस पाषाण-लेखके कालका निर्णय एफ् कील-हॉर्नने स्थूल रूपसे ईसवीकी १२ वीं सदीका मध्य निश्चित किया है। यह काल शिलालेख-निर्दिष्टकाल ८६० ई० (शक सं० ७८२) से भिन्न पड़ता है।

शिलालेखके मुख्य भागमें (श्लोक १–४३ तक) यह उल्लेख है कि आश्विन महीनेकी पूर्णिमाको सर्वग्राही चन्द्रग्रहणके अवसरपर, जब कि शक सं० ७८२ बीत चुका था, और जगत्तुंगके उत्तराधिकारी राजा अमोघ-वर्ष (प्रथम) राज्य कर रहे थे, उन्होंने अपने अधीनस्थ राज्यकर्मचारी बङ्केयकी महत्त्वपूर्ण सेवाके उपलक्ष्यमें कोळनूरमें बङ्केयद्वारा स्थापित जिनमन्दिरके लिये देवेन्द्रमुनिको तलेयूर गाँव पूरा तथा और दूसरे गाँवोंकी कुछ जमीन दानमें दी। ये देवेन्द्र पुस्तक गच्छ, देशीय गण, मूलसंघके त्रैकालयोगीशके शिष्य थे । शिलालेखके प्रारम्भिक भाग (श्लोक ३ से ११) में अमोघवर्षकी वंशावली दी हुई है। १७–२४ तकके श्लोकोंमें बंकेय की सेवाओंकी प्रशंसा वर्णित है। इस भागके अन्तिम अंशमें (४२ वें श्लोकके बादके गद्य अंश और ४३ वें श्लोकमें) लेखकका नाम वत्सराज तथा बङ्केयराजके मुख्य सलाहकारका नाम महत्तर गणपति दिया हुआ है ।

इस शिलालेखपरसे अमोघवर्षकी जो वंशावली निकलती है तथा दूसरे ताम्र–पत्रोंपर जो उत्कीर्ण है उसमें कुछ अन्तर पड़ता है । पाठकोंके जाननेके लिये हम यहाँ दोनों वंशावलियाँ दे देते हैं।

५ स्यम् सं ९३३ वैशाखो सुदि १४ ।।[1]

[पथारिसे दक्षिणकी ओर करीब ३ मीलपर ज्ञाननाथ पर्वतकी तलहटीमें एक झीलके किनारे बारो या बड़नगरके ध्वंसावशेष सुन्दर रीतिसे अवस्थित हैं। वहाँपर एक 'गडर-मर' नामका मन्दिर है, जो कि किसी गडरियेका बनवाया हुआ था।

इस गडरमर मन्दिरकी पश्चिम दिशामें छोटे-छोटे जैन मन्दिरोंका एक समूह है। उसके चतुष्कोण प्राङ्गणके बाहर एक चतुष्कोण छोटे पत्थरपर उक्त शिलालेख मिला था।]

[A. Cunningham, Reports, X, p 74]

१३०

सौंदत्ति—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ७९७=८७५ ई०]

लेख

द्वादशग्रामाधिष्ठानस्य **सुगन्धवर्ति**सम(सन्न)न्धिनि ॥ ग्रामे **मूलुगुन्दा**ख्ये । **सीवटे** पड् निवर्त्तनं । देवस्य (स्वं) चि(गु)रवे दत्तं । नमश्यं (स्यं) **कन्न**भूभुजा ॥ तस्य दक्षिणे भागे । तिन्तिणीवृक्षयोर्द्वयोः । मध्ये स्था स्थिता भूमिद्द (र्द) त्ता श्री**कन्न**भूभुजा । **सुगन्धवर्त्तिय** सीमेयिन्द पडु (डु) वल् पिरियकोलल् मत्तर् ६ ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलांछन [।] जीयात्त्रै(त्रै)लोक्यनाथस्य शासनं जिनशासन ॥ श्रीमन्म्मैळापतीर्त्थस्य गणे **कारेय**नामनि [।] बभूवोग्रतपोयुक्तः मूलभट्टारको गणी ॥ तच्छिष्यो गुणवान्सूरिः

---

[1] दुर्भाग्यसे यह लेख दोनों ओर (प्रारम्भ और अन्तमें) अधूरा ही है, इसलिये कनिंघम साहब इधर-उधर कुछ शब्दोंकी पूर्तिके बजाय इसके पूर्णरूपसे समझनेमें असफल रहे हैं। अतएव इसका विशेष सारांश भी नहीं दिया जा सका।

गुणकीर्त्तिमुनीश्वरः [।] तस्याथासीं (सीदिं)**द्रकीर्ति**स्वामी काममदापहः ॥ तच्छात्रः **पृथ्वीरामः** लक्ष्मीरामविराजितः [।] सत्यरत्नप्ररोहाद्रिः (मे)चडस्याग्रनन्दनः ॥ श्री**कृष्णराज**देवस्य लक्ष्मीलक्षितवक्षसः [।] नम्रभूपालवृन्दस्य पादाम्बुर्ह(रुह)सेवकः ॥ यस्य बालप्रतापाग्निज्वालानिकरशोषितस्समुद्री (द्र) त्पासुहृद्दर्प्परसो निश्शेषको यथा । यस्य राजन्वती भूमिर्ज्जितानन्दकरैः करैः [।] राज्ञो यो धीमतो नीतिमार्गो दुर्ग्गभयंकरः ॥ यस्य संक्रीडते कीर्तिहंसी लोकसरोवरे [।] यद्वाख्य प्रश्र(स्र)तं जातं प्रणतारातिभूपतेः ॥ **सप्तस(श)त्या नवत्या च समायुक्त (क्ते) स (षु) सप्तषु** [।] स(श) ककालेश्व (ष्व) तीतेषु **मन्मथा**ह्वयवत्सरे ॥ ग्रामे **सुगन्धवर्त्ता**ख्ये तेन भूपेन कारितं [।] जिनेन्द्रभवनं दत्त तस्याष्टदशनिवर्त्तनं ॥ स्वस्ति समस्तभुवनाश्रयं श्रीपृथ्वीवल्लभ (भं) महाराजाधिराज (जं) परमेश्वरं (र), परमभट्टारकं **राष्ट्रकूट**कुलतिलकं श्रीमत्**कृष्णराजदेव**विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्कतारं वरं सलुत्तमिरे [।] तत्पादपद्मोपजीवि ॥ स्वस्ति समधिगतपचमहाशब्दमहासामन्त वीरलक्ष्मीकान्तं विरोधिसामन्तनगवज्रदण्ड विद्वज्जनकमलमार्त्तण्ड सुभटचूडामणि भृत्यचिन्तामणि श्रीमन्महासामन्तेन **पृथ्वीरामेण** (न) स्वकारितजिनेन्द्रभवनाय चतुर्षु स्थलेषु स्थितमष्टादशनिवर्तनं सर्व्वनमश्यं (स्य) दत्तं ॥ पृथ्वीरामेण (न) यदत्तं निवर्त्तनं कार्त्तवीर्येण भूयः स्वगुरवे दत्तं सर्वबादा (धा) विवर्ज्जित ॥ सूर्योपरागसंक्रान्तो (तौ) **कार्तवीर्य**प्रकान्तया । श्रीभागला(लां)म्बिकादेव्या नमश्यं (स्य) कृतमंजसा ॥

[सौंदत्तिमें जिसका पुराना नाम सुगन्धवर्ती है, एक छोटे जिनमन्दिरकी बाईं ओर दीवालमें जड़े हुए पाषाण-शिलापरसे यह लेख लिया गया है। लेखमें अनेक विशेष दान हैं। यह बहुत-कुछ राजाओंकी वंशावलीका

१३२

हुम्मच—कन्नड़।

शक ८१९=८९७ ई०

[हुम्मचमें गुड्डद वस्तिकी बाहरी दीवालपर]

स्वस्त्यनवद्य-दर्शन महोग्र-कुल-तिलक नय-प्रताप-सम्पन्नं पर-चक्र-गण्ड गोण्डं वल्लातं कार्म्मुक-राम श्रीमत्-**तोलापुरुप-विक्रमादित्यशान्तरं** शक-वर्प येण्टनूर यिप्पत्तनेय वर्प प्रवर्त्तिसुत्तिरे श्रीमत्-कोण्डकुन्दान्वयद **मोनि-सिद्धान्तद-च (भ) टारर्गे** कल्ल वसदिय माडिसियदके पोम्बुळ्चद (यहाँ दानकी विशेप चर्चा तथा वे ही अन्तिम वाक्यावयव आते हैं)।

इष्टनोर्व्वनविदेवतेगेन्दोसेदित्तुदम्।
दुष्टनोर्व्वनदर फलवं तवे तिम्बवम्।
सिष्टिमेले परमात्मने वन्द्...............।
कष्टव्....विदिरन्ते कुल-क्षय मागुगुम्॥

[स्वस्ति। जिनका दर्शन (मत) अनवद्य (निर्दोप) है, महोग्र-कुल-तिलक, न्याय करनेमें प्रसिद्ध, विदेशी राज्योंके शूरवीरोंको पकड़नेमें चतुर, धनुपको पकड़नेवाले रामकी तरह दिखनेवाले, तोलापुरुप विक्रमादित्य-शान्तरने, (उक्त मितिको), कोण्डकुन्दान्वयके मोनि-सिद्धान्त-भट्टारके लिये एक पापाणकी वसदि बनवाई, और इसके लिये (उक्त) दान किये। शापात्मक श्लोक।]

[EC, VIII, Nagar tl., n° 60]

१३३

वल्लीमलै (जिला नार्थ आर्कट)—कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका]

१ स्वस्ति श्री [:] [॥] शिवमार-आत्मजा (ज)-वरना प्रवर-श्रीपुरुपनाम—

२ नातन तनयं । भुवनीशं **रणविक्रम**नवन मक (ग) न् **रा**–

३ **जमल्लन्** अमलिनचरितन् [॥ १] कण्डु गिर [ि] वरमना भूसं–

४ डलपति **राजमल्लन्** अभयनुदारम् [।] पण्डितजन–

५ प्रिय कैय्-कोण्डान् कोण्डन्ते वसतियम्माडि–

६ सिदान ॥ [२]

अनुवाद—(श्लोक १) शिवमारके पुत्रोंमें सबसे अच्छा पुत्र श्रीपुरुष नामका (राजपुत्र) था। उसका पुत्र लोकप्रभु रणविक्रम हुआ। उसका पुत्र अमलचरित राजमल्ल हुआ।

(श्लोक २) इसको सबसे अच्छा पर्वत समझकर, भूमण्डलपति, अभय एवं उदार तथा पण्डितजनप्रिय राजमल्लने इसे अपने अधिकारमें कर लिया, और तत्पश्चात् इसपर एक वसति (मन्दिर) बनवाइ।

[El, IV, n° 15, A.]

१३४

वल्लीमलै—कन्नड़ ।

[विना काल-निर्देशका]

(यह लेख दाहिनी तरफसे पहली प्रतिमाके नीचेका है)

१ स्वस्तिश्री [।।] **वालचन्द्र**-भटारर्

२ शिष्यर् **अज्जनन्दि**-भटारर्

३ माडिसिद प्रतिमे **गोवर्धन्**

४ भटाररेन्दोडमवरे [।।]

अनुवाद—यह प्रतिमा भट्टारक वालचन्द्रके शिष्य भट्टारक अज्जनन्दि (आर्यनन्दि) के द्वारा वनवाई गई; और प्रतिमा 'गोवर्धन भट्टारक' की है।

[El, IV, n° 15, D.]

१३५

वल्लीमलै—कन्नड़।

[विना काल-निर्देशका]

ब—यह लेख बाईं तरफसे दूसरी प्रतिमाके नीचेका है।

श्री [॥] अज्जनन्दि-भटारर् प्र [ति] म [ं] म [ा] ड [ि] दा [र्] [॥]

अनुवाद—स्वस्ति। भट्टारक या भटार अज्जनन्दि (आर्यनन्दि)ने (इस) प्रतिमाको बनाया। .

[EI, IV, n° 15, B]

१३६

वल्लीमलै—कन्नड़।

[विना काल-निर्देशका]

१ स्वस्ति श्री [॥] वाणरायर

२ गुरुगळप्प भवणन्दि-भ-

३ टारर शिष्यरप्प देवसेन-

४ भटारर प्रतिमा [॥]

अनुवाद—स्वस्ति श्री। यह प्रतिमा भट्टारक देवसेनकी है। ये देवसेन वाणरायके गुरु भट्टारक भवणन्दि (भवनन्दि)के शिष्य हैं।

[EI. IV. n° 15 C.]

१३७

मूलगुण्ड (जिला धारवाड़); संस्कृत।

शक ८२४=९०२ ई०

लेख

श्रीमते महते शान्त्ये श्रेयसे विश्ववेदिने [।] नमश्चन्द्रप्रभाख्याय जैनशासनभृद्वे [॥] शकनृपकालेष्टशते चतुरुत्तरविंशद् (त्यु)

त्तरे संप्रगते दुन्दुभिनामनि वर्षे प्रवर्त्तमाने [।] जनानुरागोत्कर्षे **श्रीकृष्णवल्लभनृपे** पाति महीं विततयशसि सकला तस्मात् पालयति महाश्रीमति विनयाम्बुधिनाम्नी **धवळ**विषयं सर्व [।] तस्मिन् **मुळगुन्दा**-ख्ये नगरे वरवैश्यजातिजात (तः) ख्यातः **चन्द्रार्य्य**स्तत्पुत्र-**श्चिकार्य्यो** चीकरं (रत) जिनोन्नतभवनं तत्तनयो **नागार्य्यो** नाम्ना [।।] तस्यानुजो नयागमकुशलः **अरसार्य्यो** दानादिप्रोद्युक्तस-म्यक्वसक्तचित्तव्यक्तः [।।] तेन दर्शनाभरणभूषितेन पितृकारितजिनाल-याय चन्दिकवाटे शेनान्वयानुगाय नरनरपतियतिपति**पूज्यपादकुमार-शे(से)नाचार्य**मी (मे) **खवीरशे (से)न**मुनिपतिशिष्य**कनकशे (से)न**सूरिमुख्याय **कन्दवर्ममाळक्षेत्रे** ए (ऐ) (छे) कमणिव-कनकुळार्य्ये (? य्ये) (र्य्ये) क'''बम्मानाहस्तात्सहस्रवल्लीमात्रक्षेत्रं द्रव्यसिन्दु (धु) ना गृहीत्वा नगरमहाजनविदेशे दत्तं [।।] तज्जिना-लयाय त्रिशतषष्ठिनगरैः चतुर्भिः श्रेष्ठिभिः **पिळ्ळग (छे) क्षेत्रे** सह-स्रावल्लीमात्रक्षेत्रं दत्तं [।।] तज्जिनभवनाय त्रिशतिमहाजनानुमताद्वेळ्ळ-च्चिकुलब्राह्मणैश्च त**न्कन्दवर्म्ममालक्षेत्रे** सहस्रवल्लीमात्रक्षेत्र दत्त [।।] एवं त्रीण्यपि नागवल्लिक्षेत्राणि सर्वावाधा

[यह शिलालेख जिस पत्थरके टुकड़ेपर है वह धारवाड़ जिलेके डम्बळ-तालुकाके मूलगुण्डकी दीवालमें लगा हुआ है। इस टुकड़ेका शेष अंश अभीतक नहीं मिला है। मगर सौभाग्यसे इसी बचे हुए टुकड़ेमें लेखका महत्त्वपूर्ण भाग आ जाता है। लुप्त भागमें सिर्फ थोड़े-से अन्तिम चे ही श्लोक हैं जिनमें लेखके रक्षण और मिटानेपर क्रमशः अनुग्रह (पुण्य) और शापका वर्णन मिलता है। लेख पुराने टाइपके प्राचीन कनड़ीके अक्षरोंमें खुदा हुआ है। ये प्राचीन कनड़ीके अक्षर गुफा-वर्णमाला (Cave-alphabets) से बहुत-कुछ मिलते-जुलते है।

शक-नृप-कालातीत-संवत्सर-शतंगळ् एन्तु-नूर्र मुवत्तोन्दनेय वरिय प्रवर्त्तिसुत्तिरे स्वस्ति **कोङ्गुणि-वर्म्म** धर्म्म-महाराजाधिराज **कुवळालपुर**-परमेश्वर नन्दिगिरि-नाथ श्री-**नीतिमार्ग्ग-पेर्म्मनडिगळ्** राज्यं उत्तरोत्तरं सलुत्तं इरे **सान्तरर**···मेच्चे **मणलेयारं कनकगिरिय-तीर्थद** मीगे वसिदिय् इम्मडिसि अरसरध्यक्षदोळ् **कनकसेन**-भट्टारग्गे **तिप्पेयूरोळ**द अट्टदेरेयु कुर्रु-देरेयुं उट्ट-सामन्त-देरेयेल्लवं विट्टन् इदन् आलिदों केरेयुं आरवेयुमन् आलिदु-कोण्डोम् महापातकमक्कुं

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां ।
षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

[जिनशासनकी प्रशंसा । शक-नृपके सैकड़ों वर्ष वीतनेके वाद वर्त्तमान ८३१ वें वर्षमें; जब कि नीतिमार्ग्ग-पेर्म्मनडि, नन्दगिरिनाथ, कुवलालपुर-परमेश्वर कोङ्गुणिवर्म्म धर्ममहाराजाधिराजका राज्य चारों दिशाओंमें बढ रहा था—सान्तरर [सु] की सम्मतिसे, मनलेयारने, कनकगिरि-तीर्थकी वसदिको दुगुना करके, राजाके ही सामने, तिप्पेयूरमें कनकसेन-भट्टारको ऊपरके कमरोंका कर, भेड़ोंका कर, तथा पूर्ण पोशाक पहिने- सरदारोंका(?)कर दिया । जो कोई इस दिये हुए दानको नष्ट करेगा, उसे तालाब या कुअके नष्ट करनेका तथा और भी बड़ा पाप लगेगा, इत्यादि ।]

[EC, III, Malavalli tl., n° 30]

१४०

वन्दलिके—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ८४०=९१८ ई०]

[वन्दलिकेमें, वस्तिके प्रवेश-द्वारके पाषाणपर]

स्वस्त्यकालवरिप श्री-पृथुवी-वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक श्री-**कन्नर-देव**रराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिगे सलुत्तिरे शकनृप-काल-

तीत-संवत्सर-सतङ्गल् एण्टुनूर-मूवत्त-नाल्कनेय प्रजापति-संवत्सरं प्रवर्त्तिसे स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-सामन्तं काल्क-देवय्सरन्व-यदोळ् **कलिविट्टरसर् बनवासिपन्निच्छासिर**मनाळुत्तिरे **नागरखण्ड-मेळपत्तर्क सत्तरर् नागार्ज्जुन** नाळ्-गावुण्ड गय्युत्तु श्री-**कलिविट्ट-रसर्** बेसदोलतीतनादोडातन गावुण्डगरसर् नाळ्-गावुण्ड-पत्तमनित्तोडे **जक्कियब्बे** नाळ्-गावुण्डु गेय्युत्तिरे **नण्डुवर कलिगं** पेर्ग्गडेतनं गेय्ये **सन्दिगर** कुडिवुल्दं **कोडङ्गे**यूर्ग्गे पेर्ग्गडेतनं गेय्युत्तिरे एळपदिम्बरुं मूण्-ब्बरुं जक्कियब्बेयोळ् **नुडिदवुतवूरं** बिडिसिदोर् **जक्कियब्बे नागर-खण्डमेळपतर्क** अवुतवूरोळाद नाळ्-गावुण्डवागमं बिसुतोळ् देवारके **जक्किलियोळ्** नाल्कु मत्तल् केय्यं कोट्टळ् ॥

वृत्तं ॥ उत्तम-प्रभु-शक्ति-युक्ते जिनेन्द्र-शासन-भक्ते कान्- ।
त्यात्त-विभ्रमे **जक्कियब्बे** समत्तु **नागरखण्डमेळ्** ।
पत्तुमं वधुवागियुं निज-वीर-विक्रम-गर्व्वदिम् ।
पेत्तवं प्रतिपालिसुत्तोसदिळ्दळिळ्दवसानदोळ् ॥
तनु रुजेयं पुदुङ्कुलिसे संसृति-भोगमसारमेन्दु निच् ।
च्चिनिसि निज-प्रियात्मजेगे सन्ततियं करेदित्तु मोह-बन् ।
धनद तोडर्प्पिनोळ् तोडल्दु मोहिसि नि···र बल्ले बन्दु **बन्-** ।
दनिकेय तीर्त्थदोळ् तोरदुदच्चरियं····**जक्कियब्बेया** ॥
वसु-जलरासि-चारिदपथं शक-भू····ताब्द-संकये वर् ।
त्तिसे बहुधान्यमेम्ब वरिषं त्रिक-मासद काळ-पक्षदोळ् ।
दसमियोळार्क्य-वारदुदितोदित-वेळेयोळण्मि भक्तियिम् ।
वसदिगे बन्दु नोन्त मपूर्व्वितरं गड- **जक्कियब्बेया** ॥

वरेदोम् **नागवर्म्म** देवारके कोट्ट केय् ग अवुतवूर्गे काळान्तरदोळ् मोह-सन्दोम् पञ्च-महा-पातकनक्कु

यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ।

(वाजूमें) ई-कल्ल **सन्दिगर** कुळि''''मुद्दन् निरिसिदोम्''''

वेलेयम्मन मगम्

[जब प्रजापति संवत्सर शक वर्ष ८३४ में, महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक कन्नर-देवका राज्य प्रवर्धमान था,—जिस समय कालिक देवरसर्-अन्वयके महासामन्त कलिविट्टरस वनवासि १२००० का शासन कर रहे थे,—नागरखण्ड सत्तरके 'नाळ-गावुण्ड' के पदको धारण करनेवाले सत्तरस नागार्जुनके मर जानेपर राजाने जक्कियव्वेको आवुतवूर और नागरखण्ड-सत्तर दे दिया। जक्कियव्वेने भी जकलिमें मन्दिरके लिये ४ मत्तल चावलकी भूमि दी। एक बीमारीके समय उसने शक सं० ८४० में, बहु-धान्य वर्षमें, पूर्ण श्रद्धासे वसदिमें आकर समाधिमरण ले लिया।]

१४१

गिरनार—संस्कृत—भग्न।

(काल लुप्त)

[यह लेख नेमिनाथ मन्दिरके दक्षिण तरफके प्रवेशद्वारके पासके प्राङ्गणके पश्चिम दिशाकी तरफके एक छोटे मन्दिरकी दीवालपर है। पाषाण टूटा हुआ है।]

॥ स्वस्ति श्रीधृति

॥ नमः श्रीनेमिनाथाय ज

॥ वर्षे फाल्गुन शुदि ५ गुरौ श्री

॥ तिलकमहाराज श्रीमहीपाल

॥ वयरसिंहभार्या फाउसुतसा

॥ सुतसा० साईआ सा० मेलामेला

|| जसुतारूडीगांगीप्रभृती
|| नाथप्रासादा कारिता प्रतिष्ठ
|| ····द्रसूरि तत्पट्टे श्रीमुनिसिंह
|| ············कल्याणत्रय

अनुवादः—स्वस्ति श्री धृति············श्री नेमिनाथको नमस्कार... ...वर्ष......फाल्गुन सुदी ५, बृहस्पतिवार, श्री············श्रीमहीपाल, महाराज और············के तिलक......फाऊ नामकी वयरसिंहकी भार्या; उसका पुत्र माननीय············उसके पुत्र माननीय साईआ और मेलामेला············उसकी पुत्रियाँ रूडी, गांगी इत्यादि। इन सबने एक नेमिनाथका मन्दिर बनवाया —जिसकी प्रतिष्ठा........द्रसूरिके पट्टपर विराजमान श्रीमुनिसिंहने की···············कल्याणत्रय···।

[ASI, XVI, p. 353-354, n° 11

१४२

सूदी (जिला-धारवाड़)·संस्कृत और कन्नड़।

शक सं ८६०=९३८ ई०

लेख

पहला ताम्रपत्र

१ श्रीर्व्विभाति सुवि (धी)र्य्यस्य निरवद्य [।] निरत् (य्) अया तस्मै नमोऽर्हते

२ लोक-हित-धर्म्मोपदेशिने || जित [-] भगवता [गत]-घनग-[ग]नाभे-

३ न पद्मनाभेन [||] श्रीमज्जाह्नवीय-कुला[म]ल-व्योमावभासन-भास्करः ||

४ स्व-खड्गैक-प्रहार-खण्डित-महा-शीलास्तम्भ-लब्ध-बळ-पराक्रमो दारुणा—

५ रि-गण-विदारणोपलब्ध-व्र (व्र)ण-विभूषण-भूपितः क[ा]ण्वा-

६ यन-सगोत्र [:] श्रीमत्-**कोङ्गुणिवर्म्म-धर्म्म**महाराजाधिराजः [॥]

७ तत्पुत्रः । पितुरन्वागत-गुण-युक्तो । विद्या-विनय-विहित-वृत्तिः

८ सम्यक्-प्रजा-पालन-मात्रा-वि(धि)गत-राज्य-प्रयोजनो विद्वत्-क वि-का—

९ ञ्चन-निकपोपळ-भूतो नीति-शास्त्रस्य वक्तृ-प्रयोक्तृ-कुशलो दत्तक-

१० सूत्र-वृत्ते(:)-प्रणेता श्रीमन्**माधव**महाधिराजः ।(॥) ओं तत्पुत्र[:] पितृ-पैता-

११ महगुणयुक्तोऽनेक-चा(च)तु[र्] दन्[त]अ-युद्ध[ा]वाप्त-चतु-

द्वितीय ताम्रपत्र; दूसरी बाजू

१२ रुदधि-सळीळास्वादित्यशाह श्रीम[ा]न् **हरिवर्म्म**-महाधिराजः [॥]

१३ तत्पुत्रः श्रीमान् **विष्णुगोप** मह[ा]धिराजः [॥] ॐ तत्पुत्रः

१४ स्व-भुज-बळ-पराक्रम-क्रय-क्र[ी]तराज्यः कलियुग-बळ-पङ्काव-

१५ सन्न-धर्म्म-वृपोद्धरण-नित्ये(त्य)सन्नद्धः श्रीमान् **माधव**-महाधिराजः । (॥) ओ

१६ तत्पुत्र[:] श्रीमत्-कदम्ब-कुल-गगन-गभस्तिमालिनः । **कृप(ष्ण)वर्म्म**-स(म)-

१७ हाधिराजस्य प्रिय-भागिनेयो विद्या-विनय-पूरिता-

१८ न्तरात्मा निरवग्रह-प्रधान-शौर्य्यो विद्वत्सु[1] प्रथम-गण्य[:]श्रीमान्

---

१ 'विद्वत्सु' पढ़ो ।

१९ **कोङ्गुणिवर्म्म**-ध (ध)र्म्ममहाराजाधिराज-पु(प)रमेश्वरः श्रीमद्-
अविनीत-प्रथम—

२० नामज (धे) यः [॥] तत्पुत्रो विजृम्भमाण-शक्ति-त्रयः **अन्द्-**
रि-आलत्तूर-पुरुळरे-पेर्ण्ण—

२१ गराद्यनेक-समर-मुख-मख-ह(यु)त-प्रहत-शूरपुरुष-पशूप-हार-
विघ—

२२ स-विहस्ति(स्ती)कृत-कृतान्ताग्निमुखः किरातार्जुनीयस्य पञ्चदश-
सर्ग-टीकाकार[:]

दूसरा ताम्रपत्र; दूसरी बाजू

२३ श्रीमद्-[द]ुर्व्विनीत-प्रथम्-नामधेयः [॥] ओं तत्पुत्रो दुर्द्दान्त-
श(वि)मर्द्द-मृदिते(त)-विश्व[ं]भरा—

२४ रि(धि)प-मो(मौ)लि-माल(ा)-मकरन्द-पु[ं]ज-पि[ं]जरीक्ष (क्रि)-
यमाण- चरणयुगल-नलिनः श्री [मुष्क]र—

२५ प्रथम-नामधेयः । [॥] ओं तत्पुत्रश्चतुर्दशविद्यास्थानाधिगतेरमल-
मतिर्व्विशेषतो [नि] र—

२६ वशेषस्य नीति-शास्त्रस्य वक् [तृ]-प्रया (यो) क्तृ-कुशलो रिपु-
तिमिर-निकर-सरकरुणोदय-भा—

२७ स्करः श्री-**विक्रम**-[प्र]थम-नामधेयः [॥] ओं तत्पुत्रा(त्रो)ऽनेक-
समर-संप्राप्त-विजय—

२८ लक्ष्मी-लक्षित-वक्षस्थलः समधिगत-सकल-शास्त्रार्थ[:]श्री-**भूवि-**
क्रम-प्रथम—

२९ प्रथम[1]-नामधेयः [॥] ओं तत्पुत्रः स्वकीय-रूपातिशय-विजी-
(जि) त-नल-भूपा—

---

१ इस शब्दकी अनावश्यकरूपसे पुनरावृत्ति हुई है ।

३० काराश्शिवमा[र-प्रथम-ना]मध[े]यः [।।] ओं तत्पुत्रः प्रतिदिन-प्रवर्द्धमान-महादान-जनित-पुण्यो

३१ हसुळ्-मुखरित-मन्दरोदराः श्री कोङ्गुणिवर्म्म-धर्म्ममहाराजाधि-राज-परमेश्वरः

३२ श्रीसु(पु)रुष-प्रथम-नामधेयः।(।।) तत्पुत्रो विमल-ग[ं]गान्वय-नभ[:]स्थलः र(ग)भस्तिमाली श्रीको-

३३ गुणिवर्म्म-दा(ध)र्म्ममहाराजाधिराज-परमेश्वरः श्री श[ि]व-मारदेव-प्रथम-नामधेयः ।

३४ शैगोत्तापरनामा [।।] तस्य कनीयान् श्री-विजयादित्यः। (।।) र (त)त्पुत्रस्समधिगत-राज्य-

३५ लक्ष्मी-प(स)मालिङ्गित-वक्षः सत्यवाक्य-कोङ्गुणिवर्म्म-धर्म्मम-हाराजाधिरा-

तृतीय ताम्रपत्र; पहली बाजू.

३६ ज-परमेश्वर[:]श्री-राजमल्ग(ल्ल)-प्र[थ]म-नामधेयस्तत्पुत्रः रामति-(? दि)-समर-संहा-

३७ लिप(रि)तोदार-वैरि-वि(वी)रपुरुषो नीतिमार्ग्ग-कोङ्गुणि-वर्म्म-धर्मराजाधिराज-परमेश्वर[:]

३८ श्रीमद्-एळे(रे)गङ्गदेव-प्रथम-नामधेयः[।।]ओ तत्पुत्रः सामिय-समर-सञ्जनित-विज-

३९ [य]श्रीः श्री-सत्यवाक्य-कोङ्गुणिवर्म्म-धर्म्ममहाराजाधिराज-परमे-श्वर[:] श्री-राजमल्ल-

४० प्रथम-नामधेयः । (॥)ओं तसु(स्य)कनीयान् निर्ल्लोरि(ठि)तं-पल्लवा-
धिपः श्रीम[द]**मोघवर्षदेव**

४१ पृथ्वीवल्लभ-सुतया[2] श्रीम**दब्बलब्बा**याव्ह(या:) प्राणेश्वर[:]
श्री**बूटुग**-प्रथम-ना-

४२ मधेयः **गुणदुत्तरङ्ग**ः । (॥) ओ तत्पुत्रः । एळे(रे)यप्प-पट्टबन्ध-
परिष्कृत-लला[मो]ज(? बं)-

४३ टेप्पेरुपेञ्जेरु-प्रभृति-युद्ध-प्रबन्ध-प्रकवि (टि) त-पल्लर(व)पराजय[:]
श्री-[**नी**]त[ि म्]**ार्ग**—

४४ **रंगिणिवर्म्म**-र(ध)र्म्भमहाराजावि(धि)राज-परमेश्वर[:] **श्रीमदेळे
(रे)गङ्गदेव**-प्रथम-नामधेयः

४५ **कोमर-वेडेङ्ग**ः ।(॥)ओं तत्पुत्र[:]श्री-सत्यवाक्य-कोङ्गुणिवर्म्म-धर्म्म-
महाराजाधिराज-परमेश्वर[:]

४६ श्रीम**न्नरसि**[ं]**घदेव**-प्रथम-नामध[े]यः **वी(वी)रवेढङ्ग**ः ॥ ओं
तत्पुत्रः कोट्टमरद........ ....

४७ तोण्णिरग-श्री-नीतिमार्ग-कोङ्गुणिवर्म्म-धर्म्ममहाराजाधिराज-परमे-
श्वर[:] श्री-**र[ाजम]ल्ल**-

४८ प्रथम-नामधेयः । **कच्छेय-गङ्ग**ः । (॥) ॐ त्रि(त्रृ) [॥]
तस्यानुजो निजभुजार्जित-सम्पदार्थो

तृतीय ताम्रपत्र; दूसरी बाजू

४९ भूवल्लभ [-] समुपगम्य ल(ड)हाड़देशे श्री-व्रदेगं तदनु त-

५० स्य सुता सहैव वाक्कन्यया व्यवहदुत्तवि (म)-धीस्त्रिपु-

---

१ 'निर्ल्लण्ठित' और भी शुद्धरूप होगा। २ 'सुतायाः' पढ़ो।

५१ य्यां [।।] अपि च ।। लक्ष्मीमिन्द्रस्य हर्त्तुं गतवति दिवि यद्
बोद्देगाङ्कि (के)

५२ महीशे ह [ृ]त्वा ल [ल् ?] एय-हस्तात्करि-तुरग-सितच्छात्रंनि
(सिं)-

५३ हासनानि । प्रा[दा]त् **कृष्णाय** राज्ञे क्षित [ि]-पति-गणनाश्व-

५४ ग्रणीर्य्य(:)प्रतापात् राजा श्री-**बूटुगा**ख्यस्समजनि विजि-

५५ताराति-चक्रः प्रचण्डः ।। कञ्चातः किन्ने नागाद्**ळचपुर**-पतिः

५६ **कक्कराजो**ऽन्तकस्य **विज्ञा**ख्यो **दन्तिवर्म्मा** युनि (धि) निज-
बनवासी त्व-

५७ म **राजवर्म्मा** शान्तत्वं शान्तदेशो **नुळवु-गिरि**-पतिर्द्दाम-रिर्द्दर्प-
भङ्ग [-]

चतुर्थ ताम्रपत्र; पहिली बाजू

५८ मध्येऽन्तं **नागवर्म्मा** भयमतिरभसाद् **गङ्ग-गाङ्गेय**-भू-

५९ पात् ।। **राजादित्य**-नरेश्वरं गज-घटाटोपेन संदर्प्पित (म्)

६० जित्वा देशत एव गण्डुगमहा निद्धोव्य[3] **तञ्जापुरीं नाल्कोटे**-

६१ प्रमुखाद्रि-दुर्ग-निवहान् दग्ध्वा गजेन्द्रान् हयान् **कृष्णा**-

६२ य प्रथितन्वन स्वयमदात् श्री-ग[-]ग-नारायणः [।।]

६३ आर्य्या ।। एकान्तमत-मदोद्धत-कुवादि-कुम्मीन्द्र-कुम्भ-सम्भेद ।। (।)

६४ नैगम-नयादि-कुलिशैरकरोज्जयदुत्तरङ्ग-नृपः ।। गद्यम् ।।

६५ **सत्यनीतिवाक्य-कोङ्गुणिवर्म्म**-धर्ममहाराधिराज-परमेश्वर [:]

---

१ 'सितच्छत्र' पढ़ो। २ सम्भवतः यह पाठ 'कञ्चातः किन्तु' रहा होगा।
३ 'निर्धाव्य' पढ़ो।

चतुर्थ ताम्रपत्र; दूसरी बाजू

६६ श्री-**बूतुग**-प्रथम-नामधेयो **नन्निय-गङ्गः** षण्णवति-

६७ सहस्रमपि **गङ्ग-मण्डल [म्]** प्रतिपाळया(य)न् **पुरिकर**-पुरे कृ-

६८ तावस्थानं (:) स (श) क-वरि [श]षु[1] षंष्ठ्युत्तराष्ट[श] तेषु अतिक्रान्तेषु विका-

६९ नि(रि)-संवत्सर-का[ ] त्त[ि] क-नन्दीस्व (श्व)र-सु(शु) क्ल-पक्षः अष्टम्यां आदित्यवारे

७० [स्वक] ीय-प्रियायाः सम्यग्द[ ]शन-विशुद्धतया प्रत्यक्ष-धे-(दे)

७१ वत्याः श्रीमद्दीवलाम्बिकायाः चैत्यालयाय **सुल्धाटवी-स**-

७२ **प्तति-ग्राम**-मुख्य-भूतायान्नगर्य्यां **सून्द्यां** विनिर्मापिता-

७३ य खण्ड-स्पु(स्फु)टित-नवकर्म्मार्त्थं पूजाकरणार्त्थमाहारार्त्थ

७४ च षट् श्रा(श्र)मण्यो जनान् दानसन्मानादिना सन्तर्प्योत्तर-दिशाया

पाँचवाँ ताम्रपत्र

७५ राजमानेन दण्डेन पष्टि-निवर्त्तनं श्रीमद्वाडि(? टि)युर्ग्गण-मुख्य-

७६ स्य नागदेव-पण्डितार्य[2] स्व[य]मेव पादो (दौ) प्रक्षाळ्य(ल्य) सून्द्यां दत्तवान् [।।]

७७ तस्याघट[3] पूर्व्वतः मानसिंग-केय्-दक्षिणतः पन्नसिनभूमिः प-

७८ श्चिमतः के (?को)प्परपोळमुत्तरतः वाल्गोरिय वन्द पळ्ळं[।।] अरुवणं गद्या-

७९ ण-त्रयं ग्रामो दीयते[4]ऽशेष-क्रमं ग्रामो रक्षति ।।

---

१ 'वर्षेषु' इति शुद्धपाठः। २ 'पण्डितस्य' पढ़ो। ३ 'आघाटाः' पढ़ो। ४ 'ददात्यशेष' पढ़ो।

(पुत्र)
|
श्रीपुरुष-पृथिवी-कोङ्गणि
(७६२ तथा ७६६-६७ ई०)

उत्तरवर्त्ती पच्छिमी गंगोंकी वंशावली

भूविक्रम
|
शिमवार
|
श्रीपुरुष—कोङ्गुणिवर्मन्
|
शिवमार सैगोत्त-कोङ्गुणिवर्मन् | विजयादित्य
|
राजमल्ल-सत्यवाक्य-कोङ्गुणिवर्मन्
|
एरेगङ्ग-नीतिमार्ग-कोङ्गुणिवर्मन्
(रामटि या रामदिके युद्धमें विजयी था)
|
राजमल्ल-सत्यवाक्य-कोङ्गुणिवर्मन् (सामियके युद्धमें विजयी हुआ था) | गुणदुत्तरङ्ग-बूतुग (पल्लवराजाको टक्कर

अमोघवर्षकी कन्या अब्बलब्बासे विवाह किया)

|

कोमरवेडङ्ग-एरेगङ्ग-नीतिमार्ग-कोङ्गुणिवर्मन्
(एरेयप्पके, या द्वारा, पट्टबन्धसे उसका ललाट शोभित था;
और उसने जन्तेप्यरुपेङ्गेरुमें पल्लवोंको हराया था)

|

वीरवेडङ्ग-नरसिंघ-सत्यवाक्य-कोङ्गुणिवर्मन्

|

कच्छेयगङ्ग—राजमल्ल-नीतिमार्ग-कोङ्गणिवर्मन्

जयदुत्तरंग-गंगगांगेय-गंगनारायण-नन्नियगंग-
बूतुग-सत्यनीतिवाक्य-कोङ्गणिवर्मन्
(९३८ ई०)

(इसने डहाळ देशके त्रिपुरीमें, बद्देगकी पुत्रीसे विवाह किया था, बद्देग-की मृत्युपर कृष्णके लिये राज्य प्राप्त किया,—लल्लेय (?) के पञ्जेसे इसको निकाला; अळचपुरके कक्कराजको, वनवासीके विज-दन्तिवर्मन्को, राज-वर्माको, नुळुवुगिरिके दामरिको, तथा नागवर्माको भय उत्पन्न किया; राजादित्यको जीता, तञ्जापुरीको घेरा, और नाळकोटेके पहाड़ी किलेको जला डाला। इसकी पत्नी दीवळाम्बा थी।)

१४३

मदनूर—(जिला—नेल्लोर) संस्कृत।

शक ८६७=९४५ ई० सन्

प्रथम पत्र।

१ भद्रं स्यात्रिजगन्नुताय सततं श्रीमज्जिनेन्द्रप्रभोरुद्दामाततशासन[।]-

२ य विलसद्धर्म्मावलंबाय च । सामर्थ्यात् खलु यस्य दुष्कलिकृता दोषाश्च मिथ्योद्भवा (।) दु-

३ र्वृत्तानि च भूतलेन वितता शान्तिश्च नित्यं क्षिते[ः] ॥१॥ स्वस्ति श्रीमतां सकलभुवनसं-

४ स्तूयमान**मानव्य**सगोत्राणां **हारिति**पुत्राणां कौशिकिवरप्रसाद-लब्धरा-

५ ज्यानाम्मातृग[ण]परिपालितानां स्वामि**महासेन**पादानुध्यायिनाम् भगव-

६ न्नारायणप्रसादसमासादितवरवराहलाञ्छनेक्षणक्षणवशीकृताराति मण्ड[ला]-

७ नामश्वमेधावभृथस्नानपवित्रीकृतवपुषाम् **चालुक्यानां** कुलमल-करिष्णोस्सत्या[श्र]-

८ **यवल्लभेन्द्रस्य** भ्राता **कुब्जविष्णुवर्द्धनो**ष्ट[ा]दशवर्षाणि वेंगि-मण्डलमपालयत् । तदात्म-

प्रथम पत्र; दूसरी ओर ।

९ जो **जयसिंह**स्त्रयस्त्रिंशतम् । तदनुजेन्द्र**राजनन्दनो** विष्णुवर्द्धनो नव । तत्सूनुम्मं**गियुवराज**-

१० ४ पंचविंशतिन्तत्पुत्रो **जयसिंह**स्त्रयोदश । तदवरज[ः]**कोक्कि**-लिष्षण्मासान् । तस्य ज्येष्ठो भ्राता

११ **विष्णुवर्द्धन**[स्त]मुच्चाट्य[स]प्तत्रिंशतम् वर्षाणि[।]तत्पुत्रो **विज-यादित्यभट्ट[ा]रको**ष्टादश । तत्सुनो

१ °वशीकृता° पढ़ो ।

१२ **विष्णुवर्द्धन**ष्पट्त्रिंशतम् । **नरेन्द्रमृगराजा**ख्यो मृगराजपराक्रमः[।]**विजयादित्य**-भूपालश्चत्वारिंशत्समाष्टभिः

१३ [॥२]तत्पुत्रः **कलिविष्णुवर्द्धनो**ध्यर्द्धवर्षं । त-

१४ त्पुत्रः **परचक्रराम**ापरनामधेयः[।]हत्वा भूरिनो**ढंबराष्ट्र**नृपति**मंगि**म्महासंग-

१५ रे **गंगा**नाश्रित**गंग**कूटशिखरान्निर्जित्य सह्[ह]लाधीशं **संकिलसुग्रवल्लभ**युतं यो भ [।]-

१६ ययित्वा चतुश्चत्वारिंशतमब्दकांश्च **विजयादित्यो** ररक्ष क्षितिं । [३] तदनुजस्य लब्ध-

दूसरा पत्र; दूसरी ओर।

१७ यौवराज्यस्य **विक्रमादित्यस्य** सुतश्चा**लुक्यभीम**स्त्रिंशतं[।] तस्याग्रजो **विजयादित्यः**

१८ षण्मासान् [।] तदग्रसूनु**रम्मराज**स्सप्तवर्षाणि । तत्सूनुमाक्रम्य बाल **चालुक्यभीम**पि-

१९ तृव्य**युद्धमल्लस्य**-नन्दन**स्तालनृपो** मासमेकं । नाना-सामन्तवर्गैरधिकबलयुतैर्म्म-

२० त्तमातंगसेनैर्हत्वा तं **तालराजं** विषमरणमुखे सार्द्धमत्युग्रते-

२१ जाः [।] एकाब्दं सम्यगम्भोनिधिवलयवृतामन्वरक्षद्धरित्रीं श्रीमांश्चालुक्य-

२२ **भीम**क्षितिपतितनयो **विक्रमादित्य**भूपः । [४] पश्चादहमहमिकया **विक्रमादित्या**स्त-

२३ म [य]ने राक्षसा इव प्रजाबाधनपरा दायादराजपुत्रा राज्याभिलाषिणो **युद्धमल्ल**रा-

२४ जमार्त्तण्डकण्ठिकाविजयादित्यप्रभृतयो विग्रहीभूता आसन् [।] विग्र—

तीसरा पत्र, पहली ओर ।

२५ हेणैव पंचवर्षाणि गतानि [।] ततः [।] योऽब्रवीद् [।] जमा-र्त्तण्डन्तेष[।] येन रणे कृतौ [।] क—

२६ ण्ठिकाविजयादित्ययुद्धमल्लौ विदेशगौ । [५] अन्ये मान्यमही-भृतोपि वहवो दु—

२७ ष्टप्रवृत्तोद्धता (:) देशोपद्रवकारिणः प्रकटिनाः कालालयं प्रापिताः [।] दोर्द्दण्डेरि—

२८ तमण्डलाग्रलतया यस्योग्रसंग्रामकावाज्ञा[1] तत्परभूभृत्पैश्च

२९ शिरसो मालेव सन्धार्य्यते । [६] नादग्धा विनिवर्त्तते रिपुकुलं कोपाग्निरामूल—

३० तः शुभ्रं य [स्य] यशो न लोकमखिलं सन्तिष्ठते न भ्रमत् [।] द्रव्याम्भोधरराशिरप्यनुदिनं

३१ सन्तप्यमाने भृशं दारिद्र्योग्रनरातपेन जनतासस्ये न नो वर्षति । [७] स चालुक्यभीमनप्ता वि—

३२ जयादित्यनन्दन[ः ।] द्वादशाब्दसमास्सम्यग् राजभीमो धरा-तलं । [८] तस्य महेश्वरमू—

तीसरा पत्र; दूसरी ओर ।

३३ र्त्तेरुमासमानाकृतेः कुमाराभः[।] लोकमहादेव्याः खलु यस्सम-भवदम्म[रा]—

३४ जाख्यः ॥ [९] जलजातपत्रचामरकलशांकुशलक्षणां[क]करचर-

१ शायद "सांग्रामिकस्याज्ञा" पढ़ो ।

णतलः [।] लसदाजा–

३५ न्ववलंबितभुजयुगपरिघो गिरीन्द्रसानूरस्कः ॥ [१०] विदितधरा-
धिपविद्यो विविधायु–

३६ धकोविदो विलीनारिकुलः [।] करितुरगागमकुशलो हरचरणांभोज-
युग–

३७ लमधुपश्श्रीमान् ॥ [११] कविगायककल्पतरुर्द्विजमुनिदीनान्ध-
बन्धुजन-

३८ सुरभिः [।] याचकगणचिन्तामणिरवनीशम्रणिर्म्महोग्रमहसा द्युमणिः
॥ [१२] गिं रिं सर्वसु–

३९ संख्याब्दे शकसमये मार्ग्गशीर्षमासेस्मिन् [।] कृष्णत्रयोदश–
दिने भृगुवारे मैत्रनक्षत्रे [॥ १३]

४० धनुषि रवौ घटलग्ने द्वादशवर्षे तु जन्मनः पट्टं [।] योधादुदय-
गिरीन्द्रो रविमिव लोका–

चतुर्थ पत्र; पहली ओर ।

४१ नुरागाय ॥ [१४] स समस्तभुवनाश्रयश्रीविजयादित्यमहाराजा–
धिराजपरमेश्वर×परम[धा]–

४२ र्म्मिकोम्मराजकम्मनाण्डुविषयनिवासिनो राष्ट्रकूटप्रमुखान् कुटु-
म्बिनस्सर्व्वे[ा] नित्यमाज्ञापयति [।]

४३ आर्य्या[.]। किरणपुरमधाक्षीत्कृष्णराजास्थितं यत्रिपुरमिव महे-
श× पा(ण्डु ?)रंग[:]प्रतापी [।] तदिह [मु]–

४४ खसहस्रैरन्वितस्याप्यशक्यं गणनममलकीर्तेस्तस्य सत्साहसानाम् ॥
[१५] तस्य[ा]त्म-

४५ जो **निरवद्यधवल[:]** कटकराजपट्टशोभितललाटः [।] तत्तनयो **विजयादित्य**कट-

४६ काधिपति[:] । वृत्तं । तत्पुत्रो **दुर्ग्गराज**प्रवरगुणनिधिर्द्धार्मिक-स्सत्यवादी त्यागी भो[गी]

४७ महात्मा समितिषु विजयी वीरलक्ष्मीनिवासः [।] **चालुक्यानां** च लक्ष्म्या यदसिरपि सदा रक्षणा[यै]-

४८ व वंश[:] ख्यातो यस्यापि **वेंगी**गदितवरमहामण्डलालंबनाय । [१६] तेन कृतो **धर्म्मपु[रीद]**-

४९ क्षिणदिशि सज्जिनालयश्चारुतरः [।] **कटकाभरण**शुभांकितनाम[1] च पुण्यालयो वसति [॥ १७]

चतुर्थ पत्र; द्वितीय ओर ।

५० [श्री] **यापनीयसंघप्रपूज्यकोटिमडुवगणे**शमुख्यो यः [।] पुण्या-र्हे**नन्दिगच्छो जिननन्दि**मुनीश्वरो [थ] ग-

५१ [ण] धरसदृशः । [१८] तस्याग्रशिष्यःप्रथितो धरायाम् (।) **दिव[ा]करा**ख्यो मुनिपुंगवोभूत् [।] यत्केवलज्ञाननिधि-

५२ र्म्महात्मा स्वयं जिनानां सदृशो गुणौधैः ॥ [१९] **श्रीमान्दि-रदेव**मुनिस्सुतपोनिधिरभवदस्य शिष्यो धीम[ा]न् [।] य-

५३ स्प्रातिहार्य्यमहिम्ना संपन्नमिवाभिमन्यते लोकः [॥ २०] तद-धिष्ठित**कटक[ा]भरणजिनालय[ा]**-

५४ य **कटकराज**विज्ञप्ते खण्डस्फुटनवकर्म्मबलिप्रभृतिदिसत्रासिद्ध्यर्थमु-

---

[1] इस सम्पूर्ण समाससे 'कटकाभरणशुभनामाङ्कित' अपेक्षित है, जिसके रखनेसे छन्दोभङ्ग हो जाता ।

५५ त्तरायणनिमित्ते **मलियपूण्डि**नामग्रामटिका सर्वकरपरिहार(म्) मुदक-

५६ पूर्व्वं कृत्वा दत्ता । अस्य ग्रामस्यावधयः पूर्व्वतः **मुंजुन्यरुं** ॥ दक्षिणतः **यिनिमिलि** ॥ पश्चि[म]-

५७ तः **कल्वकुरु** ॥ उत्तरत[:] **धर्म्मवुरमु** ॥ एतद्ग्रामस्य क्षेत्रावधयः पूर्व्वतः गोल्लनि-

५८ गुण्ठ ॥ आग्नेयत[:] रावियपेरिय ꣳ वु । दक्षिणतः स्थापितशिला ॥ नैर्ऋत्यां स्थ[ा] पितशिलैव [।]

पञ्चम पत्र ।

५९ पश्चिमतः **मल्कप** ꣳ को ꣳ वोयुतट[ा] कश्च ॥ वायव्यतः स्थापितशिलैव । उत्तरतः दुव[च्चे] ꣳ वु [।]

६० ऐशान्याम् (।) **कल्वकुरि** ऐव्वोकच्चेनि सीमैव सीमा ॥

[चूंकि लेखमें एक जैनमन्दिरके दानका उल्लेख है, अतः इसका प्रारम्भ जैनधर्मके मंगलाचरणसे किया गया है। पंक्ति ३ से लेकर ४१ में पूर्वी चालुक्य वंशकी 'समस्तभुवनाश्रय' विजयादित्य (छठे) या अम्मराज (द्वितीय) तक की वंशावली है। वंशावलीके भागमें ऐतिहासिक महत्त्वके दो स्थल हैं, पहिला (पं० १२–१६) विजयादित्य तृतीयके राज्यका वर्णन करता है और दूसरे (पं. २२–३२) में चालुक्यभीम द्वितीयका अभिषेक अर्थात् राजतिलक है।

शिलालेखमें वर्णित मङ्गि नोलम्बवाडिका एक पल्लव राजा और सङ्किल दाहल (या चेदि) का प्राचीन सरदार मालूम पडता है। अन्तमें इस शासन (लेख) में विजयादित्य तृतीयका एक नया उपनाम परचक्रराम (पं० १४) आता है। विक्रमादित्य द्वितीयकी मृत्युके वाद वरावर पाँच वर्षतक युद्धमल्ल, राजमार्त्तण्ड और कण्ठिका–विजयादित्यमें लड़ाई होती रही। अन्तमें राजभीम (या चालुक्यभीम द्वितीय) राजमार्तण्डका वधकर, कण्ठिका-

---

१ या सम्भवत· 'मुंजुन्युरु'।

विजयादित्य और युद्धमल्लको हराकर या देशनिकाला देकर व्यवस्था एवं शान्तिके स्थापनमें सफल हुआ।

उल्लिखित दान उत्तरायणमें (पं० ५४) किया गया था। दानपात्र एक जिनमन्दिर था, जो धर्मपुरी (श्लोक १७) के दक्षिणमें तथा यापनीयसंघके एक मुनिके अधिकारमें था । इसकी स्थापना 'कटकराज' (पं० ५४) दुर्गराज (श्लो० १६) ने की थी और उन्हींके उपनामसे वह कटकाभरण-जिनालय (श्लो० १७ तथा पं० ५३) कहलाया। उसकी प्रार्थना पर (पं० ५४) ही दान किया गया था, और दानके वर्णनका भाग उसके कुटुम्बकी वंशावलीके वर्णनसे शुरू होता है। कहा गया है कि उसके पूर्वज पाण्डुरंगने कृष्णराज (श्लो० १५) के निवासस्थान किरणपुरको जला दिया था, और तदनुसार वह विजयादित्य तृतीयका कोई सैनिक अधिकारी होना चाहिये। उसके पुत्र निरवद्यधवलको 'कटकराज' का पट्ट दिया गया था (पं० ४४)। उसका पुत्र 'कटकाधिपति' विजयादित्य (पं० ४५) था, और उसका पुत्र दुर्गराज (श्लो० १६) था।

दान की गई चीज मलियपूण्डि (पं० ५५) नामका एक छोटा गाँव था; यह कम्मनाण्डु (पं० ४२) जिलेमें था । इसकी सीमाएँ पंक्ति ५६ में दी गई हैं। उत्तरकी सीमा धर्म्मवुरमु (धर्म्मपुरी) के दक्षिणमें यह जिनालय था।]

[EI, IX, n° 6]

१४४

कलुचुम्बरू (जिला कर्नूली)—संस्कृत तथा तेलुगू।

[बिना कालनिर्देशका (ई० सन् ९४५ से ९७० के लगभग)]

ओं स्वस्ति श्रीमतां सकलभुवनसंस्तूयमानमानव्य-सगोत्राणां हारिति-पुत्राणां कौशिकीवरप्रसादलब्धराज्यानाम्मातृगणपरिपालितानां स्वामिमहासेनपदानुध्यातानां भगवन्नारायणप्रसादसमासादित-वर-वराह-लाञ्छनेक्षणक्षणवशीकृताराातिमण्डलानामश्वमेधावभृतस्नानपवित्रीकृतवपुषं चालुक्यानां कुलमलंकरिष्णोम् सत्याश्रयवल्लभेन्द्रस्य भ्राता [।]

श्रीपतिर्विक्रमेणाद्यो दुर्ज्जयाद्बलितो हृतां

अष्टादशसमाः कुब्ज-विष्णुर्ज्जिष्णुर्म्महीमपालयत् ।(।।)

तदात्मजो जयसिंहस्त्रयास्त्रिंशत [।] तद–

दूसरा पत्र; प्रथम ओर

नुजेन्द्रराज-नन्दनो विष्णुवर्धनो नव । तत्सूनुर्म्मंङ्गी-युवराजः पञ्चविंशतिं । तत्पुत्रो जयसिंहस्त्रयोदश ॥ तस्य द्वैमातुरानुजः कोकिलिः षण्मासान् [।] तस्य ज्येष्ठो भ्राता विष्णुवर्द्धनस्तमुच्चाट्य सप्तत्रिंशतम् । तत्सुतो विजयादित्यभट्टारकोऽष्टादश । तत्सुतो विष्णुवर्द्धनः षट्-त्रिंशतं । तत्सुतो नरेन्द्रमृगराजस्साष्टचत्वारिंशतं । तत्पुत्रः कलि-विष्णुवर्द्धनोऽध्यर्द्ध-वर्षं [।।] तत्सुतो गुणग-विजयादित्यश्चतुश्चत्वारिंशतं । अथवा ।

सुतस्तस्य ज्येष्ठो गुणग-विजयादित्य-पतिरं–

ककारस्साक्षाद्वल्लभनृप-समभ्यर्च्चितभुजः

प्रधानः शूराणामपि सुभट–

दूसरा पत्र; दूसरी तरफ

चूडामणिरसौ

चतस्रश्चत्वारिंशतिमपि समा भूमिमभुनक् ॥

तद्भ्रातुर्युवराजस्य विक्रमादित्यभूपतेः ।

शत्रुवित्रासकृत्पुत्रो दानी कानीनसन्निभः ॥

जित्वा संयति कृष्णवल्लभमहादण्डं सदायादकन् (?)

दत्वा देव-मुनि-द्विजातितनयो धर्म्मार्थमर्त्थम्मुहुः ।

कृत्वा राज्यम[क]ण्टकन्निरुपमं संवृद्धमृद्धप्रजं

भीमो भूपतिरन्वभुंक्त भुवनं न्यायात् समास्त्रिंशतं ॥

तदनु **विजयादित्य**स्तस्य प्रियतनयो महा-
नधिकधनदसत्य-त्याग-प्रताप-समन्वितः ।
परहृदयनि[र्]भेदी नाम्नैव **कोल्लविगण्ड**-भू-
पतिरकृत षण्मासान् राज्यन्नयस्थितिसंयुतः ॥

तस्याग्रसूनुरपराजितशक्ति**रम्म-**
राजः पराजितपरावनिराजराजिः ।
राजाभवद्विदित**राजमहेन्द्र**नामा
वर्षाणि सप्त सरणिः करुणारसस्य ॥

तस्यात्मज**विजयादित्य**बालमुच्चाट्य श्री**युद्धमल्ला**त्मज-
स्तालपराजो मासमेकमरक्षीत् ॥ तमाहवे विनिर्जित्य **चालुक्य-**
भीमतनयो **विक्रमादित्यो** विक्रमेणाक्रमे निक्षिप्य नव मासान-
पालयत् ॥ ततो **युद्धमल्लस्ताल**प-राजाग्रजन्मा सप्त वर्षाणि गृही-
त्वाऽतिष्ठत् ॥

तत्रान्तरे विदित**कोल्लविगण्ड**-सूनो
द्वैमातुरो विनुत-**राजमहेन्द्र**-नाम्नः
भीमाधिपो विजितभीमबलप्रतापः
प्राचीं दिशं विमलयन्नुदितो विजेतुम् ॥

श्रीमन्तं राजमय्यन्-धऽग्ग-मुरुत्त(त)रन् **तातविर्कि** प्रचण्डं
विज्जं स[ज्जं च] युद्धे बलिनमतितरामय्यपं भीममुग्रं
दण्डं **गोविन्द**-राज-प्रणिहितमधिकं **चोळपं लोवविर्कि**
विक्रान्तं **युद्धमल्लं** घटितगजघटान् सन्निहत्यैक एव ॥
भीतानाश्वासयन् सच्छरणमुपगतान् पालयन् कण्टकानुत्-
सन्नान् कुर्व्वन् प्रगृह्णन् करमपरभुवो रञ्जयन् स्वं जनौघं ।

तन्वन् कीर्त्तिं नरेन्द्रोच्चयमवनमयन्नार्जवन् वस्तुराशी-
नेवं **श्रीराजभीमो** जगदखिलमसौ द्वादशाब्दान्यरक्षत् ॥
तस्य महेश्वरमूर्त्तेरुमासमानाकृतेः कुमारसमानः
लोकमहादेव्याः खलु यस्समभव**दम्मराज** इति विख्यातः ॥

यो रूपेण मनोजं विभवेन महेन्द्रमहिमकरं
उरुमहसा हरमरि-पुरदहनेन न्यक्कुर्वन् भाति विदितनिर्मलकीर्तिः [॥]

यद्बाहुदण्डकरवालविदारितारि-
मत्तेभकुम्भगलितानि विभान्ति युद्धे
मुक्ताफलानि सुभट-क्षटजोक्षितानि
वीजानि कीर्ति-विततेरिव रोपितानि । (॥)

स समस्तभुवनाश्रयश्री**विजयादित्य**महाराजाधिराजपरमेश्वरपरमभट्टा-
रकः परमब्रह्मण्योऽ**त्तिलिनाण्डु**विषयनिवासिनो **राष्ट्रकूट**प्रमुखान् कुटुम्बि-
नस्समाहूयेत्थमाज्ञापयति ॥ **अड्डकलि**-गच्छ-नामा । **वल-**

चतुर्थपत्र; दूसरी बाजू

हारिगणप्रतीतविख्यातयशा[ः] । चातुर्वर्ण्य-श्रमण-विशेषानश्राणना-
भिलषित-मनस्कः ॥ श्रीराज**चालुक्यान्वयपरि**वारिन **पट्टवर्द्धिकान्व-**
यतिलका । गणिकाजनमुखकमलद्युमणिद्युतिरिह हि **चामेकाम्बाभूव**
सा । (॥) जिनधर्मजलविवर्धनशशिरुचिरसमानकीर्त्तिलाभविलोला ।
दानदयाशीलयुता चारुश्रीः श्रावकी बुधश्रुतनिरता ॥

यस्याः गुरुपंक्तिरुच्यते—

सिद्धान्तपारदृश्वा प्रकटितगुण**सकलचन्द्र**सिद्धान्तमुनिः ।
तच्छिष्यो गुणवान् प्रभुरमितयशास्सुमति**रय्यपोटि**मुनीन्द्रः ॥

तच्छिष्याऽर्हनन्दयङ्कितवरमुनये **चामेकाम्बा** सुभक्त्या ।
श्रीमच्छ्रीस**र्व्वलोकाश्रय**जिनभवनख्यातसत्रार्थमुच्चै ॥
र्व्वेङ्गिनाथाम्मराजे क्षितिभृति **कलुचुम्बर्रु**ग्राममिष्टं ।
सन्तुष्टा दापयित्वा बुधजनविनुतां यत्र जग्राह कीर्त्ति ॥

उत्तरायणनिमित्तेन खण्डस्फुटितनवकर्म्मार्थं सर्व्वकरपरिहारं शासनीकृत्य दत्तमस्यावधयः [।]

पूर्व्वतः **आरुविल्लि** । दक्षिणतः **कोरुकोलनु** । पश्चिमतः **यिडियूरु** । उत्तरतः **युल्लिकोडमण्डु** । तस्य क्षेत्रावधयः । पूर्व्वतः **शर्क्कराकर्रु** । दक्षिणतः **इर्रुलकोळु** । पश्चिमतः **इडियूरि** पोलगरुसु । उत्तरतः **कश्वरिगुण्डु** ॥ अस्योपरि न केनचिद्बाधा कर्त्तव्या यः करोति स पञ्चमहापातकसंयुक्तो भवति । (॥)

वहुभिर्व्वसुधा दत्तां (त्ता) वहुभिश्चानुपालिता ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

अस्य ग्रामस्य ग्रामकूटत्वं कट्टलाम्बात्मज-कुसुमायुधाय दत्तं शाश्वतं ॥ अस्य ग्रामस्य [क?] प्याभिधानं करवर्जितं ॥

आज्ञप्तिः कटकाधीशो भट्टदेवश्च लेखकः ।
कविः कविचक्रवर्त्ती शासनस्सास्युक्तत्[1] ॥

पेट्टु-कलुचुवुवरिति शासनम्बुशेसिन भट्टदेवनिकार्ह**नन्दि**भटाल्ल **गुरुसमिय** रेट्टेइल्लगाम्बुल्लनुण्डिपत्तु(पने) ण्डु तूमुन नि वुट्लु विट्टु-पट्ट नसादक्षेसिरि [॥]

---

1 शासनस्सास्य फान्यकृत्।

[यह लेख प्राच्य चालुक्यराजो अम्म द्वितीय अपरनाम विजयादित्य षष्ठकी प्रशस्ति है। इसका काल नहीं दिया है। लेकिन दूसरे प्रमाणोंसे पता चलता है कि उसका राज्याभिषेक शुक्रवार, ५ दिसम्बर, ९४५ ई० को हुआ था और उसने २५ वर्षतक राज्य किया था।

अत्तिलिनाण्डु प्रान्त (विषय) के कलुचुम्बर्रु नामके गांवके दानका इसमें उल्लेख है। यह दान वलहारि गण और अड्डकलि गच्छके अर्हनन्दि जैन गुरुको किया गया था। दानका प्रयोजन सर्व्वलोकाश्रय-जिनभवन नामके जैनमन्दिरके धर्मादेकी भोजनशाला (या भोजनभवन) की मरम्मत वगैरः कराना था। यह दान स्वयं अम्म द्वितीयने किया था, लेकिन पट्टवर्धिक वंशकी और अर्हनन्दिकी एक शिष्या चामेकाम्बाकी ओरसे दिलवाया गया था। प्रशस्तिके अन्तका तेलुगू भाग स्वयं अर्हनन्दिके द्वारा प्रशस्तिके लेखकको दिये गये एक इनामका जिक्र करता है।]

[EI, VII, n° 25, f. 5.]

१४५

हुम्मच—संस्कृत।

[काल लुप्त, संभवतः लगभग ९५० ई० (लु० राइस)।]

[पार्श्वनाथबस्तिके दरवाजेकी पश्चिम ओरकी दीवालपर]

श्रीमत् स्वस्त्यनवद्य-दर्शन-महोग्ररुं प्रताप-सम्पन्नं पर-चक्रगण्ड····
·········य्युत्तिरे शक-वर्षमेण्टु-नू··············नाड नाळ्गामुण्डं मळ्ते-
यर म····सग्गतन्··············नाळ्गामुण्ड बी···ळ्ळडोळ् किपुकवे
सग्गतन वाणसिगेयाकेय पिरिय-मगं···ळियकं तोलापुरुष-सान्तरन
बळेयाके तम्मव्वेय सन्या····ळुत्तमी-कल्ल वसदियुमोन्दु-देवारसुमं माडि-
सिदळ्····श्रीसामियव्वे सेदेगोट्टडे सान्तरन विन्ननप्प मोगमं नोडेनेन्द-
रसि····पषिदु प्रभावति-कन्तियरेन्दु पेसरं कोण्डु सन्यासनं गेय्दोडे····
कुकस-नाड किषिय-सालेयुरं वसदिगित्तं वलक-नाड सुळ्ळिगोडं देवा-
रक्के····भटारग्गे वळियं नदि वसदिगं देवारकं कोट्टळ् पाळियकं वोलि-

यकं पुत्तु····णकेय्यं····इकण्डुग-वित्तवुदं कोट्टरु कुन्दय्यं कोन्दरोळ्····
···येम्बुदु मणिकण्डुग········ट्टं पोरवक्कनुं सेम्बक्कनु पाळियक्कन केळ-दिये पुळियणवी-धर्म्मं नडयिसु········री-नाडरसं रणविक्रमं **पाळियक्कन वसदिगे** वदरीनाडानन्दु प्पन्नेरड वण्ण तम्म वाणसिगेय वयलं कोट्ट ईधर्म्ममं श्रीमामियब्बे गेल्लुगनं मुन्नमे सालिय्····र ने डि पाळियक्कन वसदिगित्तरु गेल्लुगन धर्म्मं कावोनुं नडयिसुवोनु·······गळ महा श्री ॥
श्री-**माधवचन्द्रत्रैविद्य-देव**र शिष्यरप्प **नागचन्द्र-देव**र पुत्र **मादेय-सेनबोव**····स ···पुन-प्रतिष्ठेयं माडिदनु मङ्गळ महा श्री श्री-वीतरा[ग] ॥

[स्वस्ति। जिस समय अनवद्यदर्शन, महोग्र, प्रतापसम्पन्न, परचक्रगण्ड, ············शासन कर रहा था,—(उक्त मितिको), प्रत्यक्षरूपसे तोलापुरुष-शान्तरकी पत्नी पालियक्कने, अपनी माताकी मृत्युपर, पालियक्क वसदि नामकी एक पाषाण-वसदि खड़ी की और बहुतसे दान इसके लिये किये गये।]

[EC, VIII, Nagar tl., n° 45]

१४६

कुम्सी—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न।

[वर्ष साधारण ९५० ई० (लु० राइस)]

[कुम्सीमें, किलेके भण्डार-गृहके पासके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

तनगेन्दु····व·················नन्-।
द···पुत्रन्नति-मीतिय······मतावष्टम्भदिं माडि कों-।
डनो जान····सोम्पुवेत्त पोळलोल् कुम्बरिकेयोळ् माडिदम्।
जिन-गेहङ्गळ्मारोयिं पळवु·····························॥

........यिणेन्द्र......................तुङ्गादिय ।
दोरेय...............भक्ति-मनदिं **पुम्बुच्चुमिपन्नेगम्** ।
...........**लोक्कियब्बे**यं जिन-गेहमं माडिदम् ।
धरेयेल्ल पोगळ्वन्नेगं वि.......अवनीपाळकम् ॥

जिनदत्त-रायं श्रीमन्महा..........धिपति-**बोम्मरस-गौडर** मक्कळु.......ति-दत्त तन्न अनुज मानिभद्र-गौडर मक्कळु रायविभाड राज....रेवन्त नडे-गौड सुरितण्ण हिरिय-तम्मगौडरु मुख्यवाद आतन अनुज पद्मयतु आतन तम्म चिक्क-तम्म-गौडरु आतन अनुज होन्नण-गौडरु धर्म-शासनवं **साधारण-संवत्सरद कार्तिक-सुद्द-पुन्नमि**-सो.... ....सेट्टि सोक्कि-सेट्टि पदुम-सेट्टि...................वाद आ-दिव्य-स्थानके...........सन्दायवेन्दु.......देरिगे येन्दु विट्टि येन्दु केळ-सल्लदु ईधर्म्मव नडसिदवरिगे स्वर्गपदव पडेवरु ईधर्मक्के तप्पिदवरु एळनेय नरकक्के होहरु जिन-रभिषेक-निमित्तं । घन-पूर्ण कुम्बकेन्दु **कुम्बसे-पुरमम्** । **जिनदत्त-राय**नित्तं । **कनक-कुळोद्भवरु कलस-राजान्वयरुम्** ॥ सन्नकोप्पद वस्तियिन्द बडगल्लु बेळल कोप्पद केरे ... कल्लु सरुङ्क सह विट्टरु ....बीजवरि....कोट्टरु प्रतिपालिसुवदु

[जिनशासनकी प्रशंसा। .... पोलल्लु और कुम्बसिकेमें, पोम्बुच्च जबतक जिन्दा रहे तबतक उन्होंने जिनमन्दिर बनवाये; जिनमन्दिरमें लोक्कि-यब्बेकी स्थापना की । और जिनदत्त-राय [की स्वीकृतिसे], शासक बोम्मरस और अनेक गौडोंने (जिनके नाम दिये हैं),— तथा कुछ सेट्टि लोगोंने उक्त मितिको इसके लिये वार्षिक दान दिया। शापात्मक श्लोक।

जिनदत्तराय, जिसने जिनके अभिषेकके लिये कुम्बसे-पुरका दान किया था, कलस राजाओंके खानदानके कनककुलमें उत्पन्न हुआ था। उसने कुछ जमीन भी दी थी।]

[E.C. VII, Shimoga t, n° 114.]

१४७

खजुराहो—संस्कृत

(विक्रम संवत् १०११=९५५ ई०)

१ ॐ [।।] संवत् १०११ समये ।। निजकुलधवलोयं दि-
२ व्यमूर्त्ति खसी (शी) ल स (श) मदमगुणयुक्त सर्व्व-
३ सत्वा (त्त्वा) नुकंपी [।] स्वजनजनिततोषो **धांगराजेन**
४ मान्य प्रणमति जिननाथोयं भव्य**पाहिल** (ल्ल) –
५ नामा । (।।) १ ।। पाहिलवाटिका १ चन्द्रवाटिका २
६ लघुचंद्रवाटिका ३ सं (शं) करवाटिका ४ पंचाइ-
७ तलवाटिका ५ आम्रवाटिका ६ ध (धं?) गवाडी ७ [।।]
८ पाहिलवंसे (शे) तु क्षये क्षीणे अपरवसो (शो) यः कोपि
९ तिष्ठति [।] तस्य दासस्य दासोयं मम दत्तिस्तु पाल-
१० येत् ।। महाराजगुरुस्त्री (श्री) **वासवचंद्र** [।।] वैसा (शा) प (ख)
११ सुदि ७ सोमदिने ।।

[एपिग्राफिआ इण्डिका, जि० १, पृ० १३६]

[EI. 1, p. 135–136]

[यह शिलालेख खजुराहोमें जिननाथके मन्दिरके बायें दरवाजेपर उत्कीर्ण है। इसमें ११ पंक्तियाँ हैं। इसमें बताया गया है कि राजा धङ्ग या धाङ्गके राज्यकालमें विक्रम सं० १०११ या ९५४ ई० में भव्य पाहिल या पाहिलने जिननाथके मन्दिरको बहुत तरहकी वाटिकाओं (छोटे उद्यानों या बगीचों) का दान किया। दानोंके निम्नलिखित नाम हैं:—

१. पाहिल-वाटिका, या पाहिल बगीचा
२. चन्द्र-वाटिका, या चन्द्र बगीचा
३. लघु चन्द्रवाटिका, या छोटा चन्द्र बगीचा
४. शंकर-वाटिका, या शंकर बगीचा

५. पञ्चाइतल-वाटिका ?

६. आम्र-वाटिका, या आमके पेड़ोंका बगीचा

७. धङ्ग-वाड़ी, या धङ्ग उद्यान-भवन।

ए० कनिंघमने सम्वत् १०११ को सुधारकर और युक्तिपूर्वक सिद्ध कर इसको सं० ११११ पढ़ा है। शिलालेखका पूरा श्लोक प्रो० एफ् कीलहोर्नने इस तरह शुद्ध किया है:—

निजकुलधवलोयं दिव्यमूर्त्तिः सुशीलः
शमदमगुणयुक्तः सर्वसत्त्वानुकम्पी।
सुजनजनिततोषो धङ्गराजेन मान्यः
प्रणमति जिननाथं भव्यपाहिल्लनामा ॥ १ ॥]

१४८

सुहानिया [ग्वालियर]—संस्कृत।

[सं० १०१३=९५६ ई०]

संवत् १०१३ माधवसुतेन महिन्द्रचन्द्रकेनकभा (खो ?) दिता[1]

[सुहानियामें माधवके पुत्र महेन्द्रचन्द्रने एक जैन मूर्ति प्रतिष्ठापित की। संवत् १०१३।]

[JASB, XXXI, p 399, a; p. 410, t.]

[इं० ए० जिल्द ७, पृ० १०१-१११ नं० ३८ १-५१ की पंक्तियाँ]

१४९

लक्ष्मेश्वर—संस्कृत।

[शक ८९०=९६८ ई०]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं।

जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

---

१ यह 'प्रतिष्ठिता' का अपभ्रंश मालूम पड़ता है।

स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन **पद्मनाभेन** [।।] श्रीमज्जाह्न**वीय**कुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखण्डितमहाशिलास्तम्भलब्धबलपराक्रमो दारुणारिगणविदारणोपलब्धव्रणविभूषणविभूषितः **कण्वायन**सगोत्रः श्रीमान् **कोङ्गणिवर्म्म**धर्म्ममहाराजाधिराजपरमेश्वर**श्रीमाधव**प्रथमनामधेयः ।। तत्पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्तः सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकाञ्चननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो दत्तकसूत्रवृत्तेः प्रणेता श्रीमन्**माधव**महाराजाधिराजः ।। तत्पुत्रः पितृपितामहगुणयुक्तो(ऽ)नेकचतुर्द्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्वादितयशः श्रीमद्**हरिवर्म्म**महाराजाधिराजः ।।

अपिच ।। वृत्त ।।

आसीज्जगद्गहनरक्षणराजसिंहः
क्ष्मामण्डलाब्जवनमण्डनराजहंसः ।
श्रीमारसिंह इति बृंहितबाहुकीर्त्ति-
स्तस्यानुजः कृतयुगक्षितिपालकीर्तिः ।।

आदेशाद्देवचोलान्तकधरणिपतेर्गंगचूडामणिस्त्वां
वेगादभ्येति योद्धुं त्यज गजतुरगव्यूहसन्नाहदर्प्पम् ।
गङ्गामुत्तीर्य गन्तु परबलमतुलं कल्पयेत्पाप दूतै-
र्व्विज्ञप्तं गूर्ज्जराणां पतिरकृत तथा यत्र जैत्रप्रयाणे ।।

पद्माम्भोरुहभृङ्गभृत्यभरणव्यापारचिन्तामणिः
संत्रासग्रहविह्वलीकृतरिपुक्ष्मापालरक्षामणिः
विद्वत्कण्ठविभूषणीकृतगुणप्रोद्भासिमुक्तामणि-
र्देवस्सज्जनवर्ण्णनीयचरितश्रीगङ्गचूडामणिः ।।

मन्दाकिन्या जिनेन्द्रस्नपनविधिपयस्स्यन्दसम्पादितायाः
कालिन्द्याश्चण्डवैरिप्रहतगजमदश्वेतनिर्व्वर्त्तितायाः ।
सम्मेदे श्रीनिकेताङ्गणभुवि भवतो **गङ्गकन्दर्प**भूप[1]-
व्यातन्यो दिग्वधूनां विधुविजयी (यि) यशो हारमाचन्द्रतारम् ॥

अपि च ॥ वृत्त ॥

निर्व्वादोज्ज्वलबोधपोतबलतस्सिद्धान्तरत्नाकरम्
चारित्रोत्प्लुतयानपात्रबलतस्संसारमीनाकरम् ।
उत्तीर्ण्णस्समुदीर्ण्णभक्तिविनतैर्बन्धाभिधानो बुधै-
रासीद् देवगणाग्रणीर्गुणनिधि**र्द्देवेन्द्र भट्टारकः** ॥

उद्दामकामकलिनिर्द्दलनैकवीर-
स्तस्यै**कदेव** इति योगिषु देव एकः ।
शिष्यो बभूव हृदि यस्य दधाति भव्यो
रत्नत्रयं शिरसि यच्चरणद्वयं च ॥

महितस्य तस्य महितैर्म्महतां, प्रथमस्य च प्रथमशिष्यतया ।
जयदेवपण्डित इति प्रथितः, प्रथमानशास्त्रमहिमद्रविणः ॥

अपि च ॥ गद्य ॥

तस्मै स भुवनैकमङ्गलजिनेन्द्रनित्याभिषेकरत्नकलशः स तु **सत्य-वाक्य-कोङ्गणिवर्म्म**-धर्म्ममहाराजाधिराजपरमेश्वर**श्रीमारसिंहदेव**प्रथम-नामधेयः **गङ्गकन्दर्प्पः** ॥ **शकनृपकालातीतसंवत्सरशतेष्वष्टेसु-नवत्युत्तरेषु प्रवर्त्तमाने विभवसंवत्सरे शङ्खवसति-तीर्र्थव-सति**मण्डलमण्डनस्य **गङ्गकन्दर्प्पजिनेन्द्रमन्दिरस्य** दानपूजादेवभोग-निमित्तं **पुलिगेरे**-नगरात्पूर्व्वस्यां दिशि तल-वृत्ति दत्ते स्म [॥] तस्या-स्सीमा समाख्यायते तद्यथा ।

---

1 शुद्धपाठ संभवतः 'भूपख्यातेने' होना चाहिये ।

कुमारीसरसः पूर्व्वस्यामाशायामेकनिवर्त्तनान्तराद्रुपलयुगलाद्दक्षिणस्यां दिशि **बेल्कनूर**ग्रामपश्चिमसीम्नः पावकदिशि **कोशितटाक**पुरोवर्त्तिनश्शिलासरसस्समीरणदिक्कोणे हस्ति-प्रस्तरात् पश्चिमस्यां दिशि **वट-तटाक**पुरोनिकटनिम्नोत्तरदिग्वर्त्तिनः कृष्णपाषाणादुत्तरस्यां दिशि **नागपुर**ग्राममार्गाद्दक्षिणस्या दिशायां **मळिगमार्त्तण्ड**गृहक्षेत्रादैशान्यां दिशायामानीलशिलायाः पुनः पश्चिमस्यां दिशि **कृष्ण**सरस उत्तरजलप्रवाहनिर्गमादुत्तरस्यां दिशि **नीलिकार**-तटाकागतप्रवाहादुत्तरस्यामाशायामेकनिवर्त्तनान्तरे वायव्यदिक्कोणवर्त्तिरक्तपाषाणपार्श्ववर्त्तिन्याश्शम्याः । पूर्व्वदिग्मुखेनागत्योत्कीर्ण्णादरुणपाषाणान्नागपुरग्राममार्गस्योत्तरपार्श्वे पूर्वदिग्मुखेन गत्वोत्तरदिशं प्रति निवृत्तात्पश्चिमदिशायामेकनिवर्त्तनान्तरे पूर्व्वोत्तरदिशि कृष्णपाषाणाद्दक्षिणस्यामाशायां शमी-**कन्थारी**गुल्मान्तर्गतानीलशिलायाः पश्चिमतः पुरोक्तव्यक्तपाषाणयुगले सङ्गता सीमा [॥] प्राक्प्रकाशितकृष्णसरःपुरोभागवर्त्तीनि षण्निवर्त्तनान्यभ्यन्तरीकृत्य सुष्टि(स्थी)कृतानि षष्टि-शतं निवर्त्तनानि ॥ तस्मादेव नगराद्दरुणदिग्भागवर्त्तिन्यास्तलवृत्तेस्सीमा समाम्नायते तद्यथा । **देशग्रामकूट-क्षेत्रा**द्वायव्या ककुभि त्रिशमीरक्तोपलाद् वायव्यामाशायामेकशम्या आखण्डलदिशायामेकदण्डान्तरादरुणपाषाणादाग्नेयकोणवर्त्तिनो विशालशमीकन्थारीजालात्पश्चिमस्यां दिशि श्रेष्ठितटाकदक्षिणजलप्रवाहनिर्गमाद् **वल्लभराज**मार्गात् पूर्व्वस्यामाशायां कन्थारीगुल्मात् **सवसी**-ग्राममार्गाद्दक्षिणतश्शमीकन्थारीकुञ्जात् कुबेरककुभो वायव्यायामाशाया **ज्येष्ठलिङ्ग**भूमेर्नैर्ऋत्या हरितकृष्णपाषाणात् पूर्व्वस्या दिशि वल्लभराजमार्गात् पश्चिमस्यामाशायामुत्तरदिग्मुखप्रवृत्तमहाप्रवाहान्तर्गत**किन्नर**-पाषाणाद् दक्षिणस्यां दिशायामन्धकारक्षेत्रात् पश्चिमसीम्नि प्राक्प्र-

कटीकृताद्देशग्रामकूटक्षेत्राद् वायव्यां दिशि त्रिशमीशोणपाषाणे सीमा समागता । एवं पश्चिमदिग्वर्त्तीनि चत्वारिंशच्छतं निवर्त्तनानि ॥ शङ्ख-वसतेर्व्वासवदिशि निवर्त्तनमात्रः पुXप(पुष्प)वाटः पश्चिमदिशि च निवर्त्तनद्वय-द्वयदो (?) पुXप(पुष्प)वाटः ॥ तस्य चैत्यालयस्य पुरप्रमा-णमाख्यायते [।] पूर्व्वतः **बाळबेश्वर**पश्चिमप्राकारः पावकदिशि **चर्म्म-कार**देवगृहसीमान्तम् [।] तत्पश्चिमतः वारिवारणसीमां कृत्वा दक्षिणस्यां दिशि पुXप(ष्प)वाटाङ्ग(?)जचैत्यपुरपुरः **श्रीमुकरवसतेः** पश्चिमस्यां दिशि गोपुरपर्य्यन्तात् पश्चिमदिग्वर्त्तिदेवगृहद्वयमभ्यन्तरीकृत्य **मरुदेवी**देवगृहस्य पश्चाद्भागादुत्तरस्यां दिशि **चन्द्रिकाम्बिका**देवगृहात् पूर्व्वतः मुक्करव-सतिं प्रविष्टीकृत्य **रायराचमल्लवसतिं(ति)**दक्षिणप्राकारः ततः पूर्व्वतः **श्रीविजयवसति**दक्षिणप्राकारः ई (ऐ)शान्यां दिशि **कर्म्म-टेश्वर**देवगृहं तद्दक्षिणतः पूर्व्वोक्त**बाळबेश्वर**पश्चिमसीमा [॥] देवनगरा-त्पश्चिमदिशि पुXप(ष्प)वाटद्वयनिवर्त्तनक्षेत्र दत्तम् ॥ तस्य सीमा पृथक्क्रि-यते [।] **परव**सरसः पूर्व्वदिशि **तपसी**ग्रामपथादुत्तरतो पुXप(ष्प)वाटनिव-र्त्तनमेकं । **गङ्ग-पेर्म्मा डि**चैत्यालयपुXप(ष्प)वाटादुत्तरतो निवर्त्तनमेकं नागवल्लीवनम् । एवं **गङ्गकन्दर्प्पभूपाळजिनेन्द्रमन्दिर**देवभोगनिमित्तं निवर्त्तनशतत्रयमात्रक्षेत्रं पुXप(ष्प)वाटत्रयमुर्व्वीशदेशग्रामकूटाकारविष्टिप्र-भृतिबाधापरिहारं मनोहरमिदम् ॥ श्लोक ॥

वहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजाभिस्सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥
मद्वंशजाः परमहीपतिवंशजा वा
पापादपेतमनसो भुवि भाविभूपाः ।

ये पालयन्ति मम धर्म्ममिमं समस्तं
तेषां मया विरचितोऽञ्जलिरेष मूर्ध्नि ॥

[यह शिलालेख धारवाड़ जिलेके दक्षिण-पूर्व कोनेकी ओर मिरज रियासतके लक्ष्मेश्वर तालुकेके प्रसिद्ध शहर लक्ष्मेश्वरके शङ्खवसति नामके मन्दिरमें पत्थरकी एक लम्बी शिलापर है। इसमें ८२ पंक्तियाँ हैं। अक्षर दशवीं शताब्दिकी पुरानी कर्णाटक (कन्नड़) लिपिके हैं। इसमें तीन विभिन्न शिलालेख समाविष्ट हैं।

पहला भाग—१ से लेकर ५१ वी पंक्तितक गङ्ग या कोङ्गु वंशका शिलालेख है। इसमें उल्लिखित दान, ८९० शक वर्षके व्यतीत होनेपर और जब विभव संवत्सर प्रवर्त्तमान था, मारसिंहदेव-सत्यवाक्य-कोङ्गणिवर्मा, के द्वारा जिन्हें गङ्ग-कन्दर्प भी कहते थे, जयदेव नामके एक जैन पुरोहित (पण्डित) को किया गया था। विभव संवत्सर शक ८९० ही था और शक ८९१ शुक्ल संवत्सर था, इसलिये शिलालेखका समय ठीक दिया हुआ है। यह दान पुलिगेरे (जिसका अर्थ होता है चीतेके तालाबका नगर) नगरकी कुछ भूमियोंका था। इस 'पुलिगेरे' नगरको मिस्टर फ्लीटने लक्ष्मेश्वरका ही पुराना नाम माना है। यह दान एक जैनमन्दिरके लिये, जिसे इसमें 'गङ्गकन्दर्प जिनेन्द्रमन्दिर' कहा गया है, किया गया था। इस मन्दिरको स्वयं मारसिंहदेवने बनवाया या उसका जीर्णोद्धार किया था।]

वंशावली इस तरह दी गई है:—

माधव-कोङ्गणिवर्मा
(या माधव प्रथम)
|
माधव द्वितीय
|
हरिवर्मा — मारसिंह
मारसिंहदेव-सत्यवाक्य-कोङ्गणिवर्मा,
या
गङ्ग-कन्दर्प्प

[इं० ए०, जिल्द ७, पृ० १०१-१११, नं० ३८ (१-५१ की पंक्तियाँ)]

१५०

कडूर—कन्नड़

[शक ८९३=९७१ ई०]

[कडूरमें, किलेके दरवाजेके एक स्तम्भपर]

(पश्चिममुख) स्वस्ति श्री-कोण्डकुन्दान्वय देशिय-गण-मुख्यर् **देवेन्द्रसिद्धान्त-भटार**-रवर पिरियशिष्यर् **चान्द्रायणदभटार**रवर-शिष्य-**गुणचंद्र-भटार**रवर-शिष्यर् श्रीमदभयणन्दि-पण्डित-देवर **नाणब्बे-कन्तियर** शिशिशन्तियर्**पडियर-दोरपय्यन** पिरियरसि **पाम्बब्बे** तले-वरिदु मूवत्त-वरिसं तपं गेय्दय्दं नोन्तुच्छम-ठाणमेरिदर्वरेदोनवर मगं विडि..................

(उत्तरमुख) परसे महा-प्रसाददोळोरेवक**निम्मडि-धोर**नोल्दुतन्न्- ।

अरसुममौल्य-वस्तुगळुमं कुडे **बूतुग**नक्कनेन्दु विस्- ।
तरिसे धरित्रि जीय वेसनेनेने सन्दिवु सन्दवल्लेविन्द् ।
अरसु दलेन्दु पाम्बबेगळन्तु तपो-नियमस्तरादोर् (आदोर्) आर् ॥

स्वस्ति यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मोनानुष्ठान-परायणे(यणे)यरप्प श्री-**पाम्बब्बे**-कन्तियरय्दं नोन्तुच्छम-ठ्ठाण-मेरिदर् । वरेदोनवर मगनर्हद्-**भक्तम्** ।

(दक्षिण मुख) [ऊपरका श्लोक, जो 'परसे' इत्यादिसे शुरू होता है, यहाँ दुहराया गया है ।]

शक—काल ८९३ य प्रजापति—संवत्सरदन्तर्गत मार्गशिर—मासद शुद्ध—त्रयोदशियुं गुरुवार[द]न्दु अय्दं नोन्तुच्छम—ट्टाण मेरिदर बरेदोनवर मगं वि............

[पडियर—दोरपय्यकी ज्येष्ठ रानी पाम्बब्बेने,—जो कोण्डकुन्दान्वयके देशिय-गणके मुख्य देवेन्द्र सिद्धान्त-भटारके ज्येष्ठ शिष्य चान्द्रायणदभटारके शिष्य गुणचन्द्र—भटारके शिष्य अभयनन्दि—पण्डित—देवकी (शिष्या) नाणब्बे—कन्तिकी शिष्या थी,—केशलोंच करनेके बाद, तपके पूरे ३० साल पूर्ण किये, और पाँच अणुव्रतोंको धारण करके उच्च अवस्थाको पहुँची। उसके पुत्र विढि ....से लिखा हुआ।

आगेके श्लोकमें उसके त्याग और तपकी प्रशंसा है। दक्षिण और पूर्व मुखकी तरफ भी ये ही लेख कुछ भेदके साथ, उसके अन्य दो पुत्रों, अर्हद्भक्ति और वि......के द्वारा लिखाये गये हैं।]

[EC. VI, Kadur tl., n° 1]

१५१

श्रवण बेल्गोला—कन्नड

[विना काल-निर्देशका]

[देखो, जैन शिलालेखसंग्रह, प्रथम भाग]

१५२

श्रवण बेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़

[विना काल-निर्देशका, लगभग ९७५ ई० (फ्लीट)]

[देखो, जैन शि० ले० सं० प्रथम भाग]

१५३

[सुहानिया (ग्वालियर]-संस्कृत

[सं० १०३४=९७७ ई०]

सम्वतः । १०३४ श्री वज्रदामसहाराजाधिराज वइसाखवदि पाचमि * * *

संवत् १०३४ की वैशाख वदी ५ को महाराजाधिराज वज्रदाम (शेष लेख स्पष्ट नहीं है।)।

[JASB, XXXI, p. 399, a, p. 411, t.]

१८४

पेग्गूर—कन्नड़

[शक ८९९=९७७ ई०]

[पेग्गूर (किग्गट्ट–नाड्में)में एक पाषाणपर]

स्वस्ति शक-नृप-कालातीत-संवत्सर-सतङ्ग ८९९ त्तनेय **ईश्वर**-[सं] वत्सरं प्रवर्त्तिसे **सत्या(त्य)वाक्य-कोङ्गिणिवर्म्म-धर्म्म-महाराजाधि-राज कोळाळ-पुरवरेश्वर** नन्दगिरिनाथ श्रीमत् **राचमल्ल**-पर्म्मनडिगळ् तद्वर्ष[ा]भ्यन्तर पा(फा)ल्गुण(न)-शुक्ल-पक्षद नन्दीश्वरं तल्प-देवसमागे स्वस्ति समस्तवैरिगजघटाटोपकुम्भिकुम्भ-स्तळ-स्फुटितानर्घ्य-मुक्ताफल-ग्रहण-भीकर-करासे-निवासित-दक्षिण-दोर्द्दण्ड-मण्डित-प्रचण्डं अण्णन-बण्ट बडवर-नण्टं श्रीमत् **रकस बेद्दोरेगरे**यनाळुत्तिरे भद्रमस्तु जिनशासनाय श्री-**बेळ्गोळ**-निवासिगळप्प श्री-**वीरसेनसिद्धान्त-देवर** वर-शिष्यर् श्री-**गोणसेन-पण्डित-भट्टारकर** वर-शिष्यर्[1] श्रीमत् **अनन्तवीर्य्यय्यङ्गळ् पे[र्]ग्गदूरुं** पोस-वादगमुमन् अभ्यन्तर-सिद्धियागे पडेदरदर्क्के साक्षी तोम्भत्तरुसासिर्व्वरुमय्-सामन्तरुं **बेद्दोरेगरे**-येळपदिम्बरुमेण्टोक्कलुमिदं कावर्न्नोल्वर् म्मलेपरुमय्नूर्व्वरुमय्-दामरिगरुं **श्रीपुरुष**-महाराजरदत्तियनावोनोर्व्वनळिदोम् बाणरासियुं सासिर्व्व-ब्राह्म-णरुं सासिर-कविलेयुमनळिद पञ्चमहापातकनक्कुं इदनारोर्व्वर् कादरवर्गे पिरिदु पुण्यं **चन्दणन्दियय्यन** लिखितम् ॥ **पेग्गदूर** बसदिय शासनम् ।

[शक नृपके सैकड़ों वर्ष बीतने पर जब ईश्वर नामका संवत्सर ८९९ वाँ चालू था:—

---

१ ये दोनों शब्दसमूह 'देवरवर शिष्यर्' तथा 'भट्टारकरवर शिष्यर्' भी पढ़े जा सकते हैं ।

और जिस समय सत्यवाक्य–कोङ्गिणिवर्म्म–धर्म्म–महाराजाधिराज राचमल्ल पेर्म्मनडिका, जो कोळालपुरके ईश्वर तथा नन्दगिरिके नाथ थे, राज्य था, उस समय श्रीमत्–रक्कस बेद्दोरेगरेपर राज्य कर रहा था। उससे श्री-बेल्गोलके निवासी श्रीमत् अनन्तवीर्य्यय्यने पे[र्]ग्गदूर तथा नयी खाई प्राप्त की। अनन्तवीर्य्यय्य गोणसेन–पण्डित भट्टारकके शिष्य थे और ये वीरसेन–सिद्धान्त–देवके शिष्य थे। यह लेख चन्दुणन्दियय्यका लिखा हुआ है।]

[EC, I, Coorg. ins., n° 4.]

१५५

श्रवण-बेल्गोला—कन्नड़

[विना काल-निर्देशका]

१५६

श्रवण-बेल्गोला—कन्नड़ तथा तामिल।

[विना काल-निर्देशका]

१५७

श्रवण-बेल्गोला—कन्नड़

[विना काल-निर्देशका]

[देखो जैनशिलालेखसंग्रह, भाग १]

१५८

बिदरे—कन्नड़

[शक ९०१=९७९ ई०]

[बिदरे (बेलूर परगना) में, तालाबके व्यर्थ पड़े हुए बाँध-परके एक पाषाणपर]

स्वस्ति स (श) क–वर्ष ९०१ नेय प्रमातिक–संवत्सरद कार्त्तिक-मासदोळ् त्रिलोकचन्द्र-भटारर शिष्य रविचन्द्र- भटार संन्यसनं गेय्दु मुडिपिदर् कोण्डकुन्दान्वयद देसिग- गणद भानुकीर्त्ति-भटारर् परोक्षविनयं माडिसिदर्

[स्वस्ति । (उक्त मितिको), त्रिलोकचन्द्र-भटारके शिष्य रविचन्द्रभट्टार ने 'सन्यसन' धारण किया और मृत्युको प्राप्त हुए । कोण्डकुन्दान्वय तथा देसिग-गणके भानुकीर्त्ति-भटारने उनकी स्वर्गयात्राका यह स्मारक बनवाया ।]

[EC, XII, Gubbi tl. n° 57.]

१५९

वरुण—कन्नड़-भग्न

•••९९•••(काल लुप्त)=संभवतः लगभग ९८० ई०

[वरुण गाँवमें, बसवगुडीके सामनेके स्तम्भपर]

••••••••••••••••९९••••स्य सकळ-समर्मेन्दु दर्म्म गेय्दु सन्यसद••••
••••निज-स्तिति•••••••••••••••••

[मुनिव्रत धारण करके दिवंगत होनेवाले एक जैन यतिका स्मारक ।]

[EC, III, Mysore tl., n° 40.]

१६०

सौंदत्ति—कन्नड़

[शक ९०२=९८० ई०]

रट्टकुळान्वयनृपरुं पट्टद **पत्तवर्म्म** नेगळ्देनिप गावुण्डुगळुं बिट्टर्ज्जिनेन्द्रपूजेगे नेट्टने धान्यंगळोळगे पों(दिद) कुळमं ॥ रट(ट्ट)र पट्टजिनालय किट्टळवादग्ग्तोकलनुमतदिन्दं कोट्टर्ज्जिनेन्द्रपूजेगे नेट्टने ••••••••घ(पं) ॥ दीपावळिय (प)र्वक्के देवर सोडरिंगे गाणद लोम्मानेण्णे ॥ श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनं ॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रयं श्रीप्रि(पृ)थ्वीवल्लभं महाराजाधिराज-परमेश्वर-परमभट्टारकं सत्याश्रयकुळतिळकं चाळुक्य(क्या)भरणं श्रीमत्तैलपदेवर विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धियिं सलुत्तमिरे ।

तत्पादपद्मोपजीवि । समधिगतपंचमहाशब्दमहासामन्तं समरविजय-लक्ष्मीकान्तं बै(चै ?)सान्वयसरोजवनमार्तण्डं नुडिदंतेगण्डं हयवत्स-**राजं** रूपमनोजं परबळ-सूरेकारं वैरिबंगारं नरसं(शं)कमीमं चलदंकरामं गण्डरगण्डं वैरिभेरुण्डं प्रतिपन्नमन्दरं शरणागतव्रजपंजरं श्रीमत् **शान्तिवर्म्म**रसर वंशावतरमेन्तेन्दोडे [॥] श्रीमदमरेन्द्रविभवो-द्दामं संग्रामरामनूर्ज्जिततेजं . भीमपराक्रमनेनिसिदनी महियोळ् **पृथ्वीराम**-ननुपरूपं ॥ तत्सुत ॥ आरूड(ढ)**वत्सराज**नुदारगुणं विनुतकन्दुका-दित्यं श्रीनारीकान्तं निर्ज्जितवैरिप्रजनेनसि **पिट्टुगं** सले नेगर्द ॥ वृ ॥ अन्त-कनन्ते बन्दिदिरोळान्त**जम(व)र्म्म**न नोडिसुत्ते मारान्तोरनेकरं तविसि वस्तुगळं मदवारणंगळं कान्तेयरं तुरंगचयमं पिडिदित्तोडे मेच्चिराभयं दन्तियनित्तनन्तदुवे पेळदे **पिट्टुग** निन्न गेल (ल्ल)मं ॥ तदग्रपत्नि ॥ वृ ॥ पोगळल्कुम्बमप्प चरितं मिगे बण्णिसलब्जसंभवंगगणितमप्प रूपविभवं पतिभक्तियोळोन्दि सज्जनीकेगे नेलेयाद मान्तनद पेपु समन्तळवट्ट **नीजिकब्बर**सिगे सन्दरुन्धति पेळ्द्वोरेयेन्ददे दोस(ष) वल्लदे ॥ तत्तनूज । कं ॥ श्रीमदुदयाद्रिशिखरोद्दामोदयतपनविभवरूप कीर्ति-श्रीमहिमातिशयं जयरामारमणं जितारि **शान्त**नृपाळं ॥ दयेयिन्दोळ्पिन तेळ्पिनिं गुणगणाळंकारदिं मार्ग्गनिर्ण्णयदिं तत्व(त्त्व)विचारदिं गमक-दिंदाहारभैपज्यसाभयशास्त्रामळदानदिन्दधिकनेन्दन्दोळ्पिनिं **शान्ति-वर्म्म**न विख्यातियनोन्दे नाळिगेयोळिन्ने वण्णिपं वण्णिप ॥ तदग्रपत्नि ॥ श्रीवनिते ताने वन्दु महीवनितेगे तिळकमेनिसि **शान्त**न ललितश्रीवनि-तेयाद विभवमने वोगळ्वुदो **चन्दिकब्बे**यरसिय पेप ।

यतितारकापरीतः कण्डूरगणोरुकन्धिवृद्धिकरः । **वाहुवलिदेवचन्द्रो** जिनसमयनभस्तले भाति ॥ व्याकरणतीक्ष्णदंष्ट्रस्सिद्धान्तनख(खः) प्रमाणकेसरभारः । **वाहुवलिदेवसिंहं** (हः) प्रवादिगजतीव्रमदहरस्सं-

जयते ॥ वृ ॥ अवनीपाळानतश्रीपदकमळयुगं तत्व(त्त्व)निर्न्नि(र्णि)क्तराद्धान्तविदं चारित्ररत्नाकरनमळवच(चः)श्रीवधूकान्तन-गोद्भवदर्प्पारण्यदावानळनुदितलसद्बोधसंशुद्धनेत्रं **रविचन्द्रस्वामी** भव्याम्बुजदिनपनघो (घौ)घाद्रिसद्वज्रपात ॥ कं ॥ कड्डूर्ग्गणाब्धिचन्द्रनखण्डितसुतपोविभासि खण्डितमदनं दिण्डीरपिण्डसुरवेदण्डयशःपिण्डनर्हणन्दिमुनीन्द्र ॥ वृ ॥ कन्तुराजगजेन्द्रकेसरि भव्यलोकसुखाकरं कान्तवाग्वनितामनोरमनुग्रवीरतपोमयं शान्तमूर्ति दिगंतकीर्तिविराजितं **शुभचन्द्रसिद्धान्तदेव**निळेश्वरवदिंतपादपंकरुहद्वयं ॥ क ॥ **नुतयापनीयसं**घप्रतीतकण्डूर्ग्गणाब्धिचन्द्रमरेन्दी क्षितिवळे(ळ)यं पोगळिपन मुन्नतिवेत्त**म्मौंनिदेव**दिव्यमुनींद्रर् ॥ जितकर्म्मारातिभूपाळककुळतिळकाळंकृतांघ्रिद्वयं राजितभव्यव्रातपंकेरुहवनदिनपं चारि(रु)चारित्रमार्ग्गार्चितसूक्‍(क्तं) शब्दविद्यागमकमळभवं श्री**प्रभाचन्द्रघे (दे)वव्र (व्र)ति** षट्तर्काकळंकंगेणेयेन्ने नेगर्दं । जैनमार्ग्गाब्धिचन्द्र [॥]

स्वस्ति स (श)कनृपकाळातीतसंवत्सरशतंगळ् ९०२ नेय विक्रमसंवत्सरद पौषशुद्ध दशमी बृहस्पतिवारदन्दिनुत्तरायण शं(सं)क्रमणदोळ् **बाहुबलिभट्टारक**रकालं कच्चि **शान्तिवर्म्मरसं सुगन्धवर्त्तियल्** तन्न माडिसिद बसदिगा वूर तन्न **सीवटद** पोलदोळगे सर्वबाधापरिहारमागि बिट्ट मत्तर्न्नूरग्व्वत्तदर चतुराघाटद सीमेयावुदेन्दडे [।] तद्दर पोलद बदगिवोलद सन्दिनलीशान्यद गुड्डे । अल्लि तेंकलेंल्लेयकेरेय विळिय कल्लु अल्लि पडुवल् सीवट्टद सन्दिनोळ् नैरि (ऋ) तिय गुड्डे । अल्लि वडगल् सीवट्टद तद्दरपोल्द संदिनल् वायव्वद गुड्डे [॥] मत्तं **नीजियव्वरसि** तन्न मगं **शान्तिवर्म्मर**सं माडिसिद पिरिय बसदिगे तन्न सीवटं पिरियपस(सु)ण्डिगे पोद बट्टेयिं तेंक काडियूर पोलद····नू

रय्वत्तुं म(त्त)र्कैय्यं नमस्यमागि बिट्टळा भूमिय चतुस्सी····र कुकुम्बा[ळ] पोलद सन्दिनलीशान्यद गुड्डे। अल्लिं तेंक··· कुकुंवाळ सुगन्ध[व]र्त्तिय पोलद सन्दिनलाग्नेयद [गुड्डे।]····गिनकूद···· गिनोळ[गे नै]रि[ऋ]तिय गु[ड्डे।]········ वायव्य [द गुं] ड्डे। इन्ति [नि] तु भूमियि····[हं]वीर्व्वरुं प्र[तिपाळि]सुवर [॥] मा····[य] मुना साग[र] दवर्ग्ग.ण्डन् भु········वन्धरान्ध··········

[यह लेख भी उसी जैनमन्दिरसे लिया गया है जिसमेंसे लेख नं० १३०। यह पृथ्वीरामके पुत्र, प्रपौत्र तथा उनकी पत्नियोंके नाम बताता है। पृथ्वीरामके पुत्र पिट्टगके सम्बन्धमें एक ऐतिहासिक तथ्य वर्णित है, पर मि० जे. एफ. फ्लीट इस बातका निश्चय नहीं कर सके कि यह अजवर्मा कौन था जिसे पिट्टगने जीता था। लेखमें पिट्टगके प्रपौत्र शान्त या शान्तिवर्माके १५० 'मत्तर' भूमिके दानका उल्लेख है, जिसे उसने ९०३[1] शकमें किया था। इतना ही दान शान्तिवर्माकी माता नीजिकब्बे या नीजियब्बेने सुगन्धवर्त्तिमें बनवाये हुए जैनमन्दिरको किया।]

[JB, X, p. 171–172, a; p. 204–207, t.; p. 208–212, tr. (ins. n° 3.)]

१६१

मथुरा,—संस्कृत

[सं० १०३८=९८१ ई०]

[तीर्थंकरोंकी विशाल पद्मासनस्थ मूर्तियाँ]

इसका लेख साफ-साफ पढ़नेमें नहीं आता है। कुछ भाग पढ़ा जाता है, कुछ नहीं। परंतु लेख सिर्फ दो पंक्तियोंका है। यह मूर्ति या लेख सिर्फ कालकी दृष्टिसे ध्यानगम्य है। डा० फूहररके मतसे यह लेख बताता है कि इस मूर्तिका निर्माण मथुराके श्वेताम्बर संप्रदायकी तरफसे हुआ था।[2]

---

१ मूलमें "शक राजा कालके ९०२ वर्ष वीतने पर" है। 2 "Progress Report" for 1890–91, p. 16.

ये दोनों स्तम्भवत् (विशाल) मूर्त्तियाँ (विक्रम सं० १०३८ और ११३४ [शि० ले० नं. २११]) दिसम्बर १८८९ में, श्वेताम्बर संप्रदायके मालूम पड़नेवाले मध्यवर्ती मन्दिरके पास मिली थीं।

महमूद गजनवी (गजनीका रहनेवाला) के द्वारा मथुराका विनाश ई०.सन् १०१८ में हुआ। उक्त प्रतिमा (सं० १०३८=९८१ ई० की) इस विनाशसे पहिलेकी स्थापित हुई है और शि. ले. नं. २११ की इस घटनाके करीब ६० साल बाद। आक्रामकने चाहे-जितना विनाश किया हो, लेकिन यह स्पष्ट है कि जैन लोगोंके पास उनके पवित्र स्थान विना किसी ज्यादा बाधाके बने रहे।]

[Antiquities of Mathura (ASI, XX), p. 53, t.]

१६२

श्रवणबे-ल्गोला—कन्नड़-भग्न।

[वर्ष चित्रभानु=९४२ ई० (लू. राइस)]

[जैन शि० ले० सं०, भाग १]

१६३

श्रवणबे-ल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक ९०४=९८२ ई०]

[जैन शि० ले० सं०, भा० १]

१६४

हेमावती—कन्नड़

[शक ९०४=९८२ ई०]

[हेमावतीमें, पूर्वकी तरफके खेतमें पाषाणपर]

उद्द-वळमेळेवरेम्बुदे।
विद्दं मुन्नल्लि कडुपिनोळ् वहु-विधदिन्द्।
उद्द-वळमेळेदु मुरिगुम्।
विद्दमेनल् वलव्द पोरगनेळेव-चेडङ्गम्॥

एरकमल्लदे पोल्लदागेरगि दोरेकाण्मे कोल्व तेरनल्लदे ।
नेरेये वरल् तक्कडियल्लि विसुवल्लिये बिस अरिदयिल्ल ।
परियना दिट्टि मुरिवल्लि कडुपिनोळ् मुरिदयिल्लिल्लिय विन्नणवन् ।
नेरेये कल्पदे बीरर बीरनं गिडेगळाभरणनं नेडिकल्ल ॥
आसुवनुं कूसुवनुम् ।
वीसुवनुं गडेय नेगळ्द तक्कडियोळ्ळेनुत्त् ।
आसदेयुं कुङ्कदेयुम् ।
बीसन्देयु विद मेळ्ळेगुमेळेव-वेडङ्गम् ॥
एरगळरियदे मेण्टुकम्मगुळ्दुं वरलणमरियदे तप्पा पिन्दम् ।
तेरेननरियदे भागमनिक्कियुं मूरेडेगल्लदे कट्टाडियुं मुरियं पायिसिद ।
तुरुय कोन्दु धरेगेडेतेगे गेडेयिवनेनिसदं ।
नेरेये कडु-जाणनेनिसल्के बर्कुमे गडेगळाभरणन कल्लदन्नम् ॥
कालगाळ कयूगळ तुरगद ।
कोलगाळ तिणिवुगळोळ्ळि बञ्चिसुतेळ्ळेगुम् ।
गेल्गुमेने नेगळ्द मार्ग्गदे ।
गेल्गुमे बणेदल्लि **कीर्त्ति-नारायणनम्** ॥

वनधि-नभो-निधि-प्रमित-संख्य-स(श)कावनिपाळ-काळमं ।
नेनेयिसे चित्रभानु परिवर्त्तिसे चैत्र-सितेतराष्टमी-
दिन-युत-भौमवारदोळनाकुळ-चित्तदे नोन्तु ताळ्दिदम् ।
जन-नुतनिन्द्र-राजनखिळामर-राज-महा-विभूतियम् ॥

[एरेव-वेडङ्गम्, कीर्ति-नारायणके युद्धमें शौर्य्यके कार्यों का वर्णन । (उक्त मितिको) अनाकुल चित्तसे व्रतोंको पालते हुए, प्रसिद्ध

इन्द्रराजने स्वर्गकी विभूति पाई-(अर्थात् मर गये)[१]।]

[EC, XII, Sira tl., n° 27.]

१६५

श्रवण-बेलगोला—संस्कृत

[विना काल-निर्देशका]

[जै. शि. ले. सं., भा. १.]

१६६

अङ्गडि—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[काल लुप्त, पर लगभग ९९० ई० का]

[अङ्गडि (गोणीबीडु परगना) में, बसदिके पासके पाषाणपर]

(सामने)………………सुद पञ्चमी-बृहस्पति वारदन्दु स्वस्ति …यम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-परायणरप्प द्रविळ-संघद…. अद श्री-कोण्डकुन्दान्वयद त्रिकालमौनि-भट्टारक शिष्यर् श्रीमदिरिव-बेडेङ्ग…ळन गुरुगळ् विमलचन्द्र-पण्डित-देवर् सन्यासन-विधियिं मुडिपि मुक्तियनेय्दिदर् ॥ (पीछे) श्रुत-विमळादिचन्द्र……………… श्रीमनु………………पण्डिताह्वयसु-विमळचन्द्र-मुनिः ॥

नमो विमळचन्द्राय कळाकळित-मूर्त्तये ।
सत्त्वात् सद्-बुधसेव्याय शान्तामृतमयात्मने ॥

श्री-विमळचन्द्र-पण्डित-देवर गुड्डी हवुम्ब्बेया तङ्ग शान्तियब्बे तम्म गुरुगळ्गे परोक्ष-विनयं गेय्दर् ॥

[(साधु-गुणोंसहित), द्रविल-संघ, कोण्डकुन्दान्वय तथा पुस्तक-गच्छके त्रिकालमौनि-भट्टारकके शिष्य,—श्रीमद् ईरिव-बेडेङ्ग…के गुरु,—

१ उसका काल और अंतिमावस्थाका कथन वही है जो श्रवणबेलगोला नं० ५७ के शिलालेखमें हैं। इन्द्रराज अन्तिम राष्ट्रकूट राजा था।

विमलचन्द्र–पण्डितदेवने, संन्यास–विधिसे मरण कर, मुक्ति प्राप्त की। पण्डित पदके साथ विमलचन्द्रमुनिकी प्रशंसा।

विमलचन्द्र–पण्डित–देवकी गृहस्थ शिष्या हवुम्बेकी छोटी बहिन शान्तियव्वेने अपने गुरुके स्वर्गवासके उपलक्ष्यमें स्मारक खड़ा किया।]

[EC, VI, Mudgere tl., n° 11]

१६७

पञ्चपाण्डवमलै—तामिल

[काल लगभग ९९२ ई०]

श्री

[।।]

१ स्वस्ति

२ [को] विराजराज [क] ` [सर] ीव [न्] मर्कु याण्डु ८ आ [व]दुपडुवूर्क[ो]ट्टत्तुप्पेरुन्-तिमिरिनाट्टुत्तिरुप्प[ा]न्मलैप्पो-

३ गमागिय कूरग[न्प्]ाडि [इ]रैयिलि प[ळ्]ळिच्चन्दत्ते की [ळ्]-प्- [प]ग[लां]ड[इ]लाडर[ा]जर्गळ् कर्पूर-विलै को [ण्डु इ] द्व[र्]मङ्क

४ ट्टुप्पोगि[न्]रडेन् [रु उ]डैयार् इला[ड]राजर् पु[ग]ळ्वि- प्पवर्-[ग] ण्डर् मग[ना]र् [वी]रशोळर् तिरु[प्पान्]मलैदेवरै- त्तिरुव-

५ [डित्तो]ळु [देळुन्]द[रु]ळि इ [रु]उक्क इ[व]र् देवियार् इलाडमह[ा]देवि[य]ार् कर्पूर-विलैयुमन्निया[य]वावद[ण्ड]विरै [यु] म [ो]-

६ ळिन्द[रुळ वे]ण्डुमेन्रु विण्णप्पञ्जेय् [य उ]डै[या]र् [वी] र-शोळर् कर्पूर-विलैयुमन्निया[य] वावदण[ड]विरै-

७ युमो [ळ्] ि ञ्जोमेन्ररुच्चेय्य अर्रि[य्]ऊर् किळ [वन्]! गि[य वी] र-शोळवि-लाड-प्पेर [र्] ` य[नु]डैयार् [क] नूमियेया]-

८ णत्तियागविदु[1] कर्पूर-विलैयुमन्नियाय-[वा] वदण्ड[व्]-इरैयुमोळि
ञ्जु शासनाञ्चेय्द-पडि [।] इदु [व]-

९ ल [द्] उ कर्पूर-विलैयुमन्नियाय-वावदण्डव्-इरैयुमिप्पळ्ळिच्चन्द-
त्तैक्कोळ्[व्]ान् गङ्गैयि-

१० डै [कुमरियु] इडैच्चेय्दार् शे[य्] द पा [व]ङ्कोळ्वारिदुवल्लदिप्प-
ळ्ळिच्चन्दत्तै केडुप्यार वल्लव[रै]

११ ····[न]रु[व] [।] [इ]-द्द [र्म्मत्] तै [र]क्षिप्पान् पादधूळियू
एन्-[रलै] मे[ल]न [।] अर[म]रवर्क अरमल्ल तु[ण]ैयिल्लै ॥

[यह शिलालेख तमिल गद्यकी ११ पंक्तियोंका है। लेखकी दूसरी पंक्ति-में राजराज–केशरीवर्मन्‌के राज्यका ८ वां साल इसका काल बताया गया है। प्रस्तुत लेख महाराजा राजराज चोलके राज्य-कालका है। यह ९८४-८५ ई० में गद्दीपर बैठे थे। इस लेखमें किसी विजयका वर्णन नहीं है। इस शिलालेखके नीचे एक पशु बनाया गया है, वह चीता होना चाहिये, क्योंकि चोल राजाओंका वह चिह्न रहा है।

लेखमें (पंक्ति ३) लाटराज वीरचोलका एक शासन है। वह चोल राजा राजराजका कोई अधीनस्थ राजा होना चाहिये, क्योंकि राज्यकाल उसीका (राजराजका) दिया हुआ है। लाटराज वीर–चोल पुगळ्विप्पवर गण्डका पुत्र था । वीर–चोल और उनके पूर्वजोंके नामके पहले लाटराज ऐसा विरुद लगा रहनेसे मालूम पड़ता है कि ये लोग पहले किसी समय लाट (गुजरात) से आये थे।

यह अभिलेख इस बातका उल्लेख करता है कि अपनी रानीकी प्रार्थना पर वीर–चोलने तिरुप्पानूमलैके देवताके लिये (पं० ४) कूरगन्पाडि गाँवसे कुछ आमदनी बाँध दी थी।

यद्यपि चैत्यालयका नाम सिर्फ 'तिरुप्पानूमलैका देवता' दिया गया है, परन्तु 'पळ्ळिच्चन्दम्' इस शब्दसे मालूम पड़ता है कि यह कोई जैन

---

१ 'इन्द' पढ़ो।

चैत्यालय होना चाहिये। शिलालेख नं० ११५ से भी यह निर्णीत होता है। उसमें यक्षिणी और नागनन्दि गुरुकी प्रतिमा है। यद्यपि यक्षिणियोंको बौद्ध और जैन दोनों ही मानते हैं, परन्तु नागनन्दि यह जैन नाम है।]

लेखमें कूरगम्पाडिके 'पल्लिच्चन्दं' की आमदनी दो तरहकी बताई गई है:- एक तो कर्पूरविलै (कपूरके खर्च) की, दूसरी 'अन्नियाय वावदण्डविरै' की। कपूरखर्चकी बात तो ठीक समझमें आ जाती है, लेकिन उत्तरकी आमदनी 'अन्नियाय-वावदण्डविरै' का क्या अर्थ है, सो स्पष्ट नहीं है। इसके भी दो अर्थ किये जाते हैं: एक तो अन्याय वावदण्ड (जुलाहोंका करघा) इरै (कर)। इसका अर्थ होगा 'अनधिकृत करघोंपरका कर' (The tax on unauthorised looms)। दूसरा अर्थ इसका यह हो सकता है अन्याय+आव+दण्ड+इरै। 'आव'का अर्थ होता है वाणोंका तूणीर। इसका तात्पर्य यह है कि विना अधिकारपत्र पाये जो धनुषवाणका प्रयोग करते थे उनपर जुर्माना (दंण्ड) किया जाता था।

[EI, IV. n° 14, B.]

१६८

श्रवण-बेलगोला—कन्नड़

[विना काल-निर्देशका]

[जै. शि. ले. सं., भा. १.]

१६९

कुम्बरहल्लि—कन्नड़—भग्न

[विना काल-निर्देशका, पर सम्भवतः लगभग १००० ई०]

[कुम्बरहल्लि (कूड्नहल्लि परगना) में, बसवगुडिकी दक्षिणी दीवालपर]

स्वस्ति श्रीमदजितसेनपण्डितदेवर शिष्यण ना···क पुणि-समय

[इसमें अजितसेन-पण्डितके शिष्यका वर्णन है।]

[EC, III, Mysore tl, n° 31.]

१७०

मुत्सन्द्र—कन्नड़

[बिना काल-निर्देशका, पर सम्भवतः लगभग सन् १००० ई० का]

[मुत्सन्द्र (देवलापुर परगना) में, गाँवके पूर्वमें एक गोल बटिया (Boulder) पर]

श्रीमतु **कलुकर्रे-नाड्** आळ्वरु **चोक**-जिनालयक्के **मत्तिकेरेंय** नट्ट कल चतुस्सीमान्तरेषु बिट्ट दत्ति इदं किडिसिदवं कविलें ब्राह्मणनुव कोन्द ब्रह्म······एय्दुगु

[कलुकर्रे-नाड्के शासकने चोक जिनालयके लिये मत्तिकेरेंका दान दिया ।]

[EC, IV, Nagamangala tl., n° 92.]

१७१

तिरुमलै—(नार्थ अर्काट)-तामिल

[१००५ ई०]

१ स्वस्ति श्री [।।] तिरुमगळ् पोलप्पेरु निलच्चे-

२ ल्वियुन् तनक्के युरिमै पूण्डमै मनक्कोळ क्कान्दळुर् च्चालै कलम-रुत्तरुळि वेङ्गैनाडुड् गङ्गपाडियु

३ नुळंबपाडियु न्तडिगै पाडियुड् कुडमलैनाडुड् कोल्लमुड् कलिङ्गमुं एण्डिशै पुगळ्तर विळमण्डलमुं तिण्डिरल् वेन्रि त्त-

४ ण्डाऱ्कोण्ड[त्ते]ळ्ळि् वळरुळि एल्लायाण्डुं तोळुतेळ विळङ्गुयाण्डै चेळिआरैत्तेचु कोळ् श्रीकोवि-

५ **राज इराजकेशरिपन्मरान** श्रीइराजइराजदेवर्क्कु याण्डु २१ आवदु अलैपुरियुं पुनर् **पोन्नि** आरुडैय **चोळन्**

६ अरुमोळिक्कु याण्डु इरुपत्तोन्रावदेन्रङ्गलै पुरियुमतिनिपुणन् वेण् किळान्

७ **गणिशेखरमरुपोऱ्चुरियन्रन्** नामत्ताल् वामनिलै निऱ्ऱुकुड्-

८ कलिङ्चिट्टु नीमिर् **वैय्यैमलैक्कु** नीडुळि इरुमरुङ्कुं नेल् विळैय-

९ क्कण्डोन् कुलै पुरियुं पडै अरैचर कोण्डाडुं पादन **गुणवीरमा-**

मुनिवन्

१० कुळिर् वैय्यैक्कोवेय् [॥]

[यह अभिलेख कोविराजाराजकेसरिवर्मन्, उर्फ राजराज-देवके २१ वें वर्षमें अभिलिखित है, तथा पोन्नि, अर्थात्, कावेरी नदीके स्वामी 'शोरन् अरुमोरी' के इक्कीसवें वर्ष में (शब्दोंमें)।

लेख बताता है कि किसी गुणवीरमामुनिवन्ने एक नहर या मोरी (Sluice) गणिशेखर-मरु-पोर्चुरियन् नामके उपाध्यायके नामसे बनवाई थी। तिरुमलै चट्टानका उल्लेख "वैय्यैमलै" नामसे है।]

[South Indian Ins, I, n° 66 (p. 94–95), t. & tr.]

१७२

बेलूरु—कन्नड़—भग्न

[शक ९४४=१०२२ ई०]

[बेलूरु (कोत्तत्ति परगने)में, तालाबपर दुर्गा-देवीके पीछेके पाषाणपर]

स्वस्ति समस्त-रिपु-नृप-कुम्भि-कुम्भ-दळन-पञ्चास्य समुदित-श्रीम····ळ-विमुक्त-**चोळ**-भूपाळ····लित····जित-वीर-**लक्ष्मी** आश्रित-भक्त-मलापकर्षण भूमिसञ्चरण जय-मूल-स्तम्भं श्रीमद् अ····**गङ्गमण्डलेश्वर** प्रभु-पद्म-युग्माशोक-भोगिकाश्रित-भ्रमद्-भ्रमर जित-रिपु संसित-समर-प्रताप राज्य-भार-धुरन्धरं अमात्य-समिति-विराजमानम् सत्यत्व-**नाभि**-कानीनम समर-जित-भूप-जीव-प्रदनुं अतिपूताचरणम् रिपु-खरकिरणम्······ **तिगाङ्गनेयं** सौच-**गाङ्गेयं** शरणागत-वज्र-पञ्जरम् रिपु-कञ्ज-कुञ्जरम् तन्त्र-रक्षामणि मन्त्री-चिन्तामणि विनेय-विळासम् श्रीमत्-**पेर्गडे-हासम्**

विश्व-बिस-हासर् [1]पतिहिताभरणम् ॥ **शक-नृप-कालातीतसंवत्सर-शतङ्गळ् ९४४** नेय दुर्म्मुखि (दुर्म्मीति) संवत्सरद फाल्गुण-मास-सुद्ध-पञ्चमी-सोमवार पुनर्वसु-नक्षत्रदन्दु **गङ्ग-पेर्म्मनडि**गळु **कर्नाट**नाळुत्त-मिरे तम्म स्व-दोराळ्दन्दुं·······नव जिनालयक्के **पेर्म्मनडि** जीवितम् ·······द **बलोर-कट्ट**लाळ्वाद केरॆय मेट्टुकं बोय्सि कट्टेय कट्टिसि तूंबनिरसि मुन्नं तव····कोळ्ग मण्णु बिट्ट दोन्द···केर्ऱॆगे·······मुमं बिट्ट मिदनळिद कोटि-कविलेयं ब्राह्मणरुं काशियुमनळ्किरे

बहुभिर्वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥

[इस लेखमें 'पेर्ग्गडे-हासम्' के द्वारा, उक्त मितिको, बलोर-कट्टके गहरे तालाबकी सीढ़ियोंके बनवाने, बांधके निर्माण कराने, नहर या मोरीके बनाये जाने, तथा············एक 'कोलग' भूमिके देनेका जिक्र है। उसके समयमें कर्णाट (कर्नाटक) पर गङ्ग पेर्म्मनडि शासन कर रहे थे। यह पुण्यकार्य पेर्म्मनडिके दीर्घजीवनकी कामनाके लिये उसकी सरकारके स्थानमें एक नये जिनालयके रूपमें किया गया था।]

[EC, III, Mandya II., n° 78]

१७३

मथुरा—संस्कृत

[संवत् १०८०=१०२३ ई० सन्]

१ ओ श्रीजिनदेवः सूरिस्तदनु श्रीभावदेवनामाभूत् ।
आचार्यविजयसिङ्ग-
२ स्तच्छिष्यस्तेन च प्रोक्तैः ॥ [१ ॥]
सुश्रावकैर्नवग्रामस्थानादिस्थै स्वसक्तितः ।

---

१ संवत्सर 'दुर्म्मुखि' दिया हुआ है; यह स्पष्टतः गल्तीसे लिखा गया है। इसकी जगह 'दुर्म्मीति' होना चाहिये जो शक ९४४ से मेल खाता है।

१२ प्पोरु तण्डाऱ्कोण्ड कोप्परकेशरिपन्मरान उडैयार् श्रीराजेन्द्रचोळदेवऱ्कु याण्डु १२ आवदु जयङ्गोण्डचोळमण्डलत्तु पड्गळनाट्टु नडुविल्

१३ वगैमुगैनाट्टुप्पळ्ळिच्चन्दं वैगवूर् त्तिरुमलै श्रीकुन्दवैजिनालयत्तु देवऱ्कु प्पेरुंबाणपाडिक्करैवळिमळ्ळियूर् इरुक्कुंव्या-

१४ पारि नन्नप्पयन् मणवाट्टि चामुण्डप्पै वैत्त तिरुनन्दाविळक्कु [॥] ओन्रिनुक्कुक्काशु इरुपदुं तिरुवमुदुक्कु वैत्त काशु पत्तुम् [॥]

[यह अभिलेख कोपरकेसरिवर्मन्, उर्फ उडैयार् राजेन्द्र-चोल-देवके बारहवें वर्षका है। इसके आरम्भमें उन सभी देशोंके नाम दिये हुए हैं जिनको इस राजाने जीता था। उनमें हमें ७॥ लाख भूमिकरवाले 'इरट्टपाडि' का पता चलता है जिसे राजेन्द्रचोलने जयसिंहसे लिया था। इस देशको उन्होंने अपने राज्यके ७ वें और १० वें वर्षके मध्यमें जीता होगा। इस अभिलेखका जयसिंह 'पश्चिमी चालुक्य राजा जयसिंह तृतीय' (लगभग शक ९४० से लगभग ९६४ तक) के सिवाय और कोई नहीं हो सकता। जब कि राजेन्द्र-चोल और जयसिंह तृतीय दोनों एक-दूसरेको जीतनेकी डींग मारते हैं, तब हमें यह मान लेना चाहिये कि या तो सफलता दोनोंको क्रमशः मिली होगी, या चिर विजय किसीको भी नहीं मिली होगी।

दूसरे दो देश, जिन्हें राजेन्द्र-चोलका जीता हुआ कहा जाता है, 'इडैतुरैनाडु' और 'वनवासि' हैं। पहला 'इडतोरे' देश है, जोकि मैसूर जिलेके एक तालुकेका हेड-क्वार्टर है, दूसरा बम्बई प्रान्तके 'नॉर्थ केनारा' जिलेका 'बनवासि' है।

"कोळ्ळिप्पाकै" मि॰ फ्लीटके अनुसार, पश्चिमी चालुक्य राजा जयसिंह तृतीयकी राजधानियोंमेंसे एक था।

'ईरम्' या 'ईर-मण्डलम्' से मतलब सीलोन (लङ्का) से है। तेन्न-वन्='दक्षिणका राजा' से प्रयोजन पाण्ड्य राजासे है। उसके विषयमें अभिलेख कहता है कि उसने पहिले 'सुन्दर' का मुकुट सीलोनके राजाको दे दिया था जिससे राजेन्द्र-चोलने पुनः वह सुन्दरका मुकुट ले लिया। वर्तमान लेखमें 'सुन्दरका मुकुट' से मतलब 'पाण्ड्य राजाका मुकुट' मालूम पड़ता है। यहाँ 'सुन्दर' कोई पाण्ड्य-वंशका राजा मालूम पड़ता है। उसका नाम लेखके कर्त्ताने नहीं दिया और न सीलोनके राजाका नाम जिसे राजेन्द्र-चोलने जीता था। आगे लेख यह भी बताता है कि राजेन्द्र-चोलने 'केरळ' अर्थात् मलबारके राजाको जीता था। उसने 'शङ्कर-कोट्टम्' के राजा विक्रम-वीरको भी हराया था। लेखका 'मदुरा-मण्डलम्' पाण्ड्य देश है, जिसकी राजधानी मदुरा थी। 'ओड्ड-विषय' उड़ीसा है। 'कोशलैनाडु' दक्षिण कोसल है, जो जनरल कनिंघमके अनुसार, महानदी और इसकी सहायक नदियोंकी ऊपरकी घाटी है। 'तक्कणलाडम्' और 'उत्तिरलाडम्' से मतलब क्रमशः दक्षिणी और उत्तरी लाट (गुजरात) से है। पहला किसी 'रणशूर' से लिया गया था। आगे बताया जाता है कि राजेन्द्र चोलने 'बङ्गालदेश' अर्थात् बङ्गाल को किसी गोविन्दचन्द्रसे जीतकर उसका विस्तार गङ्गातक किया था। शेष देश और राजाओंके नाम, ई. हुल्ज (E. Hultzsch) कहते हैं कि, वे पहचान नहीं सके।

लेखमें तिरुमलै, अर्थात् 'पवित्र पहाड़' का वर्णन है, और वह इसके ऊपरके मन्दिरको जिसे 'कुन्दवै-जिनालय' कहा गया है, दिये गये दानका उल्लेख करता है। यह 'कुन्दवै' कौन थी, इसके विषयमें ऐतिहासिकोंके दो मत हैं।

इस शिलालेखके अनुसार, तिरुमलै पहाड़की तलहटीमें जो गाँव है उसका नाम 'वेगवूर्' है। यह 'मुगैनाडु' का है, जो 'जयङ्कोण्ड-चोल मण्डलम्' के 'पङ्गळनाडु' का एक डिवीजन (भाग) है।

[South Indian Ins., I, n° 67 (p. 95-99)

१७५

चिक्क-हनसोगे—संस्कृत

[विना काल-निर्देशका, पर सम्भवतः लगभग १०२५ ई० का]
[चिक्क-हनसोगे (हनसोगे परगना)में, जिन-बस्तिके दरवाजेके ऊपर]
(ग्रन्थ और तामिल अक्षर)

श्री-**राजेन्द्र-चोळन** जिनालयं देशिगगणं बसदि पुस्तक-गच्छम्

[राजेन्द्र-चोळ जैनमन्दिर, देशि-गण और पुस्तक-गच्छकी बसदि]

[EC, IV, Yedatore tl., n° 21]

१७६

खजुराहो—संस्कृत

(सं० १०८५=१०२८ ई०)

संवत् १०८५ । श्रीमत् आचार्य पुत्र श्री
ठाकुर श्री **देवधर** सुत । श्री सिवि
श्री चन्द्रयदेवः श्री **शान्तिनाथ**स्य प्रतिमा कारी ।

[इस लेखमें स्थापित प्रतिमाका नाम शान्तिनाथ है, सेतनाथ नहीं, जैसा कि लोगोंमें प्रसिद्ध है । सम्वत् (विक्रम) भी साफ १०८५ दिया हुआ है ।]

[A. Cunningham, Reports, xx I. p, 61.]

१७७

मुल्लूर—संस्कृत

[विना काल निर्देशका । लगभग १०३० ई० (लू० राइस) ।]
[मुल्लूरमें, बस्ति मन्दिरमें शान्तीश्वर बस्तिके सामने पादद कल्लु पर]

गुणसेन-पण्डितस्य गुरोः पुष्पसेन-सिद्धान्त-देवस्य श्री-पादम् ।

[गुणसेन-पण्डितके गुरु पुष्पसेन-सिद्धान्त-देवके पवित्र पदचिह्न या पादुकाएँ ।]

[EC, IX, Coorge tl., n° 41]

१७८

अङ्गडि—कन्नड़-भग्न

[विना काल-निर्देशका, पर संभवतः लगभग १०४० (?) ई०
(लू० राइस) ।]

[अङ्गडि (गोणीबीडु परगना)में, हरमकि दोड्ड-उडवेमें पाषाणपर]

................राज्यं गेये....द्रविणान्वयद **मूल-सं**..........

....**पण्डित**...............तु तर्काच्चाळितामा....जलधि-यशो...कुतूहल...शय **वज्रपाणि पण्डित**-चरण ॥ एनिसि सले **गङ्गवाडिय** । मुनि-वररिं **राजमल्ल**-भूपालकनीमनु-नीति-मार्ग्गनभयं । जन-पति-सम्यक्त्व-**मार**-नृपतिय गुरुगळ् ॥ वृ ॥ इरदापन्निगळ्ङ्गळिं तळ...व्यत्त हो....। दुरितारण्यमनेय्दे सुट्टु **सोसवूरोळ्** विळ्द कालान्तदोळ् । ....रे सन्यास-विधानदिं मुडिपि पूज्यं **वज्रपाणि-व्रतीश्वर**रत्युत्तम-मुक्तियं पडेदरेम् पुण्यकत्तर् नो.... ॥

(बायीं ओर)...............**रविकीर्तिमुनीन्द्र**नेन्दु पट्टळिगेये पेळदेनेळ्व **कल्नेले-देवर** साहसोक्तियम् ॥ श्रीमत्-कल्नेले-देवर्त्तम्म गुरुगळ्गे निषिधिगेयं माडिसिदर् मङ्गळ

[द्रविणान्वय, मूलसंघके...पण्डितके शिष्य वज्रपाणि-पण्डितके चरणोंमें जब ...राज्य कर रहा थाः-गङ्गवाडिके मुनियोंमें प्रसिद्ध राजा राजमल्ल था । इसके गुरु वज्रपाणि-व्रतीश्वरने सोसवूरमें अपना जीवन व्यतीतकर अन्तमें संन्यास-मरण धारण किया और उन्हींका यह स्मारक है ।]

[EC, VI, Müdgere tl., n° 18]

१७९

ब्या(बया)ना (राजपूताना)—संस्कृत

[सं० ११००=१०४४ ई]

[IA, XIV, p. 8-10 n° 151, t. & a]

---

१ यह शिलालेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है ।

१८०

दोड्ड-कणगालु—कन्नड़।

[वर्ष तारण=१०४४ ई० ? (लु० राइस)।]

[दोड्ड-कणगालुमें, गौडके खेतमें एक दूसरे पाषाणपर]

श्री-मूलसंघ देशिय-गण पुस्तक-गच्छ कोण्डकुन्दान्वय इङ्गुळेश्वरद वळिय······**शुभचन्द्र-देवर** प्रियाग्र-शिष्यरुमप्प **प्रभाचन्द्र-देवर** निसिधि **तारण-संवत्सर**-चैत्र-शुद्ध-पञ्चमी-शुक्रवारदन्दु मुक्तरादरु।

[श्री-मूलसंघ देसिय-गण पुस्तक-गच्छ कोण्डकुन्दान्वय और इङ्गलेश्वर वलिके···शुभचन्द्र-देवके प्रिय ज्येष्ठ शिष्य प्रभाचन्द्र-देवकी समाधि (निसिधि)। (उक्त वर्षमें) उन्हें छुटकारा मिला, अर्थात् स्वर्गगत हुए।]

[EC, IX, Coorg tl., n° 56]

१८१

बेळगामि—कन्नड़

[शक ९७०=१०४८ ई०]

[सोमेश्वर मन्दिरके पासके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारकं सत्याश्रय-कुळ-तिळकं चालुक्याभरणं श्रीमत् **त्रैलोक्यमल्ल-देवर** विजय-राज्यं प्रवर्त्तिसे तत्पाद-पल्लवोपशोभितोत्तमाङ्ग स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं **वनवासि-पुर**-वरेश्वरं **महालक्ष्मी**-लब्ध-वर-प्रसादं त्याग-विनोदमायदाचार्य्यनसहाय-शौर्य्यं गण्डर गण्डं गण्ड-भेरुण्ड मूरु-रायास्थान-काळि विरुद-मण्डलिक-वृषभ-शंकरं कलिगळ मोगद कयि विरुदरादित्यम् प्रत्यक्ष-विक्रमादित्य जगदेक-दानि-